अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान

कक्षा 9 के लिए पाठ्यपुस्तक

0971

हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड, भिवानी
Board of School Education Haryana, Bhiwani

मूल संस्करण :
© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधांन और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली

अभिगृहित :
© हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड, भिवानी

संस्करण : **2020**

संख्या : **20,000 प्रतियाँ**

मुल्य : **₹130/-**

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना, इस प्रकाशन के किसी भी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटो प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण और प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना, यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनविक्रय या किराये पर न दी जायेगी और न बेची जायेगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टीकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

आभार प्रदर्शन

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली ने इस पुस्तक को छापने तथा हरियाणा के विद्यालयों में इसे पाठ्य–पुस्तक के रूप में पढ़ाने की अनुमति हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड, भिवानी को प्रदान करने की कृपा की है।

हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड, भिवानी इसके लिए उनका हृदय से आभार प्रकट करता है।

सचिव

टैक्स्ट 80 जी॰एस॰एम॰ डी एस जी पेपर मिल और कवर 170 जी॰एस॰एम॰ विशाल पेपर मिल के कागज पर मुद्रित।

सचिव, हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड, भिवानी द्वारा प्रकाशित एवम् एस जी प्रिण्ट पैक्स प्रा॰ लि॰, नोएडा–201301, उ॰प्र॰ द्वारा मुद्रित।

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए है। नयी राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास है। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और सीखने के दौरान अपने अनुभवों पर विचार करने का कितना अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नए ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों एवं स्रोतों की अनदेखी किए जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जना और पहल को विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है जितना वार्षिक कैलेंडर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिए नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिए पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निर्धारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान एवं अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में बातचीत एवं बहस और हाथ से की जाने वाली गतिविधियों को प्राथमिकता देती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् सामाजिक विज्ञान पाठ्यपुस्तक सलाहकार समिति

के अध्यक्ष प्रोफ़ेसर हरि वासुदेवन और पाठ्यपुस्तक समिति के मुख्य सलाहकार प्रोफ़ेसर तापस मजूमदार की विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के विकास में कई शिक्षकों ने योगदान किया, इस योगदान को संभव बनाने के लिए हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थाओं और संगठनों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री तथा सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रोफ़ेसर मृगाल मीरी एवं प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित निगरानी समिति (मॉनिटरिंग कमेटी) के सदस्यों को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी. टिप्पणियों एवं सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

निदेशक

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद्

नयी दिल्ली
20 दिसंबर 2005

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, सामाजिक विज्ञान पाठ्यपुस्तक सलाहकार समिति

हरि वासुदेवन, *प्रोफ़ेसर*, इतिहास विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कोलकाता।

मुख्य सलाहकार

तापस मजूमदार, *एमेरिटस प्रोफ़ेसर* (अर्थशास्त्र), जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली।

समिति

गुलशन सचदेवा, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन केंद्र, जे.एन.यू. नयी दिल्ली।

नूतन पुंज, *पी.जी.टी.* (अर्थशास्त्र), केंद्रीय विद्यालय, सीमा सुरक्षा बल, नजफ़गढ़, नयी दिल्ली।

सुकन्या बोस, *वरिष्ठ अर्थशास्त्री*, अर्थशास्त्र शोध फाउंडेशन, 124 ए/1 कटवारिया सराय, नयी दिल्ली।

सदस्य समन्वयक

जया सिंह, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर*, सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

आभार

परिषद् उन सभी लेखकों के प्रति आभार व्यक्त करती है, जिन्होंने पुस्तक के लेखन का कार्य किया है। हम जनमेजय खुंतिया, *वरिष्ठ प्रवक्ता,* स्कूल ऑफ कॉरेस्पोंडेंस कोर्सेज़, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; अरविंद सरदाना, एकलव्य, साकेत नगर, देवास, मध्य प्रदेश और एन.सी.ई.आर.टी. के सामाजिक विज्ञान और मानविकी शिक्षा विभाग की नीरजा रश्मि, *प्रवाचक* एवं एम.वी. श्रीनिवासन, *प्रवक्ता* के भी आभारी हैं; जिन्होंने पुस्तक को अंतिम रूप देने में सहायता की।

हम सुंदर चंद्र ठाकुर, *संपादक,* नवभारत टाइम्स, को धन्यवाद देते हैं जिन्होंने इस पुस्तक के हिंदी अनुवाद का कार्य किया। हम इनके भी आभारी हैं: प्रेम दास (अवकाश प्राप्त), वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग; ओ. पी. अग्रवाल, *प्रोफ़ेसर* (अवकाश प्राप्त), मेरठ विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश; एच. के. गुप्ता, बाबूराम राजकीय सर्वोदय बाल विद्यालय, शाहदरा, दिल्ली; ए. एस. गर्ग, *उपप्रधानाचार्य,* राजकीय प्रतिभा विकास विद्यालय, गांधीनगर, दिल्ली; डी. एस. मिश्रा, *टी.जी.टी.* (सामाजिक विज्ञान), राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक बाल विद्यालय, बेगमपुर, दिल्ली; जिन्होंने अनुवाद के पुनरीक्षण हेतु आयोजित कार्यशालाओं में भाग लिया और अपना बहुमूल्य योगदान किया।

पुस्तक के विकास में सहयोग के लिए हम सविता सिन्हा, *प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष,* सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग के प्रति विशेष रूप से आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने हर संभव सहयोग दिया।

पुस्तक के विकास के विभिन्न चरणों में सहयोग के लिए *डी.टी.पी. ऑपरेटर* दिपेंद्र कुमार, *प्रूफ़रीडर* विभोर सिंह, *कॉपीएडीटर* विनय शंकर पांडेय व सुप्रिया गुप्ता, *कंप्यूटरस्टेशन इंचार्ज* दिनेश कुमार के भी हम आभारी हैं। प्रकाशन विभाग द्वारा हमें पूर्ण सहयोग एवं सुविधाएँ प्राप्त हुईं, इसके लिए हम उनका आभार व्यक्त करते हैं।

विषय सामग्री

आमुख *iii*

अध्याय 1

पालमपुर गाँव की कहानी 1

अध्याय 2

संसाधन के रूप में लोग 16

अध्याय 3

निर्धनता : एक चुनौती 29

अध्याय 4

भारत में खाद्य सुरक्षा 41

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][**संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य**] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2][**राष्ट्र की एकता और अखंडता**] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) "राष्ट्र की एकता" के स्थान पर प्रतिस्थापित।

1
अध्याय

0971CH01

पालमपुर गाँव की कहानी

अवलोकन

इस कहानी का उद्देश्य उत्पादन से संबंधित कुछ मूल विचारों से परिचय कराना है और ऐसा हम एक काल्पनिक गाँव–पालमपुर की कहानी के माध्यम से कर रहे हैं।

पालमपुर में खेती मुख्य क्रिया है, जबकि अन्य कई क्रियाएँ जैसे, लघु-स्तरीय विनिर्माण, डेयरी, परिवहन आदि सीमित स्तर पर की जाती हैं। इन उत्पादन क्रियाओं के लिए विभिन्न प्रकार के संसाधनों की आवश्यकता होती है, यथा–प्राकृतिक संसाधन, मानव निर्मित वस्तुएँ, मानव प्रयास, मुद्रा आदि। पालमपुर की कहानी से हमें विदित होगा कि गाँव में इच्छित वस्तुओं और सेवाओं को उत्पादित करने के लिए विभिन्न संसाधन किस प्रकार समायोजित होते हैं।

परिचय

पालमपुर आस-पड़ोस के गाँवों और कस्बों से भलीभाँति जुड़ा हुआ है। एक बड़ा गाँव, रायगंज, पालमपुर से तीन किलोमीटर की दूरी पर है। प्रत्येक मौसम में यह सड़क गाँव को रायगंज और उससे आगे निकटतम छोटे कस्बे शाहपुर से जोड़ती है। इस सड़क पर गुड़ और अन्य वस्तुओं से लदी हुई बैलगाड़ियाँ, भैंसाबग्घी से लेकर अन्य कई तरह के वाहन जैसे, मोटरसाइकिल, जीप, ट्रैक्टर और ट्रक तक देखे जा सकते हैं।

इस गाँव में विभिन्न जातियों के लगभग 450 परिवार रहते हैं। गाँव में अधिकांश भूमि के स्वामी उच्च जाति के 80 परिवार हैं। उनके मकान, जिनमें से कुछ बहुत बड़े हैं, ईंट और सीमेंट के बने हुए हैं। अनुसूचित जाति (दलित) के लोगों की संख्या गाँव की कुल जनसंख्या का एक तिहाई है और वे गाँव के एक कोने में काफ़ी छोटे घरों में रहते हैं, जिनमें कुछ मिट्टी और फूस के बने हैं। अधिकांश के घरों में बिजली है। खेतों में सभी

चित्र 1.1 : एक गाँव का दृश्य

नलकूप बिजली से ही चलते हैं और इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के छोटे कार्यों के लिए भी किया जाता है। पालमपुर में दो प्राथमिक विद्यालय और एक हाई स्कूल है। गाँव में एक राजकीय प्राथमिक स्वास्थ केंद्र और एक निजी औषधालय भी है, जहाँ रोगियों का उपचार किया जाता है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि पालमपुर में सड़कों, परिवहन के साधनों, बिजली, सिंचाई, विद्यालयों और स्वास्थ्य केंद्रों का पर्याप्त विकसित तंत्र है। इन सुविधाओं की तुलना अपने निकट के गाँव में उपलब्ध सुविधाओं से कीजिए।

एक काल्पनिक गाँव पालमपुर की कहानी हमें किसी भी गाँव में विभिन्न प्रकार की उत्पादन संबंधी गतिविधियों के बारे में बताएगी। भारत के गाँवों में खेती उत्पादन की प्रमुख गतिविधि है। अन्य उत्पादन गतिविधियों में, जिन्हें **गैर-कृषि क्रियाएँ** कहा गया है, लघु विनिर्माण, परिवहन, दुकानदारी आदि शामिल हैं। हम उत्पादन के बारे में कुछ सामान्य बातें जानने के बाद इन दोनों प्रकार की क्रियाओं पर विचार करेंगे।

यह कथ्य आंशिक रूप से गिल्बर्ट एटीन के शोध अध्ययन पर आधारित पश्चिमी उत्तर प्रदेश के ज़िला बुलंदशहर में एक गाँव से है।

उत्पादन का संगठन

उत्पादन का उद्देश्य ऐसी वस्तुएँ और सेवाएँ उत्पादित करना है, जिनकी हमें आवश्यकता है। वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन के लिए चार चीज़ें आवश्यक हैं।

पहली आवश्यकता है **भूमि** तथा अन्य प्राकृतिक संसाधन, जैसे–जल, वन, खनिज। दूसरी आवश्यकता है **श्रम** अर्थात् जो लोग काम करेंगे। कुछ उत्पादन क्रियाओं में ज़रूरी कार्यों को करने के लिए बहुत ज़्यादा पढ़े-लिखे कर्मियों की ज़रूरत होती है। दूसरी क्रियाओं के लिए शारीरिक कार्य करने वाले श्रमिकों की ज़रूरत होती है। प्रत्येक श्रमिक उत्पादन के लिए आवश्यक श्रम प्रदान करता है।

तीसरी आवश्यकता **भौतिक पूँजी** है, अर्थात् उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर अपेक्षित कई तरह के आगत। क्या आप जानते हैं कि भौतिक पूँजी के अंतर्गत कौन-कौन सी मदें आती हैं?

(क) *औज़ार, मशीन, भवन* : औज़ारों तथा मशीनों में अत्यंत साधारण औज़ार जैसे–किसान का हल से लेकर परिष्कृत मशीनें जैसे–जेनरेटर, टरबाइन, कंप्यूटर आदि आते हैं। औज़ारों, मशीनों और भवनों का उत्पादन में कई वर्षों तक प्रयोग होता है और इन्हें **स्थायी पूँजी** कहा जाता है।

(ख) *कच्चा माल और नकद मुद्रा* : उत्पादन में कई प्रकार के कच्चे माल की आवश्यकता होती है, जैसे बुनकर द्वारा प्रयोग किया जाने वाला सूत और कुम्हारों द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली मिट्टी। उत्पादन के दौरान भुगतान करने तथा ज़रूरी माल खरीदने के लिए कुछ पैसों की भी आवश्यकता होती है। कच्चा माल तथा नकद पैसों को **कार्यशील पूँजी** कहते हैं। औज़ारों, मशीनों तथा भवनों से भिन्न ये चीज़ें उत्पादन-क्रिया के दौरान समाप्त हो जाती हैं।

एक चौथी आवश्यकता भी होती है। आपको स्वयं उपभोग हेतु या बाज़ार में बिक्री हेतु उत्पादन करने के लिए भूमि, श्रम और भौतिक पूँजी को एक साथ करने योग्य बनाने के लिए ज्ञान और उद्यम की आवश्यकता पड़ेगी। आजकल इसे **मानव पूँजी** कहा जाता है। मानव पूँजी के विषय में और अधिक अध्ययन हम अगले अध्याय में करेंगे।

चित्र 1.2 : कारखाने में मशीनों पर कार्य करते श्रमिक

- चित्र में उत्पादन में प्रयुक्त भूमि, श्रम और स्थायी पूँजी की पहचान कीजिए।

उत्पादन भूमि, श्रम और पूँजी को संयोजित करके संगठित होता है, जिन्हें **उत्पादन के कारक** कहा जाता है। पालमपुर की कहानी को पढ़ने के क्रम में हम उत्पादन के प्रथम तीन कारकों के बारे में और अधिक सीखेंगे। सुविधा के लिए, इस अध्याय में हम भौतिक पूँजी को पूँजी कहेंगे।

पालमपुर में खेती

1. भूमि स्थिर है

पालमपुर में खेती उत्पादन की प्रमुख क्रिया है। काम करने वालों में 75 प्रतिशत लोग अपनी जीविका के लिए खेती पर निर्भर हैं। वे किसान अथवा कृषि श्रमिक हो सकते हैं। इन लोगों का हित खेतों में उत्पादन से जुड़ा हुआ है।

लेकिन याद रखिए, कृषि उत्पादन में एक मूलभूत कठिनाई है। खेती में प्रयुक्त भूमि-क्षेत्र वस्तुतः स्थिर होता है। पालमपुर

में वर्ष 1960 से आज तक जुताई के अंतर्गत भूमि-क्षेत्र में कोई विस्तार नहीं हुआ है। उस समय तक, गाँव की कुछ बंजर भूमि को कृषि योग्य भूमि में बदल दिया गया था। नयी भूमि को खेती योग्य बनाकर कृषि उत्पादन को और बढ़ाने की कोई गुंजाइश नहीं है।

भूमि मापने की मानक इकाई हेक्टेयर है, यद्यपि गाँवों में भूमि का माप बीघा, गुंठा आदि जैसी क्षेत्रीय इकाइयों में भी किया जाता है। एक हेक्टेयर, 100 मीटर की भुजा वाले वर्ग के क्षेत्रफल के बराबर होता है। क्या आप एक हेक्टेयर के मैदान के क्षेत्र की तुलना अपने स्कूल के मैदान से कर सकते हैं?

2. क्या उसी भूमि से अधिक पैदावार करने का कोई तरीका है?

यहाँ जिस प्रकार की फसल पैदा की जाती है और जैसी सुविधाएँ उपलब्ध हैं, उन्हें देखते हुए पालमपुर उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग के गाँव की तरह लगता है। पालमपुर में समस्त भूमि पर खेती की जाती है। कोई भूमि बेकार नहीं छोड़ी जाती। बरसात के मौसम (खरीफ़) में किसान ज्वार और बाजरा उगाते हैं। इन पौधों को पशुओं के चारे के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इसके बाद अक्तूबर और दिसंबर के बीच आलू की खेती होती है। सर्दी के मौसम (रबी) में खेतों में गेहूँ उगाया जाता है। उत्पादित गेहूँ में से परिवार के खाने के लिए रखकर शेष गेहूँ किसान रायगंज की मंडी में बेच देते हैं। भूमि के एक भाग में गन्ने की खेती भी की जाती है, जिसकी वर्ष में एक बार कटाई होती है। गन्ना अपने कच्चे रूप में या गुड़ के रूप में शाहपुर के व्यापारियों को बेचा जाता है।

पालमपुर में एक वर्ष में किसान तीन अलग-अलग फसलें इसलिए पैदा कर पाते हैं, क्योंकि वहाँ सिंचाई की सुविकसित व्यवस्था है। पालमपुर में बिजली जल्दी ही आ गई थी। उसका मुख्य प्रभाव यह पड़ा कि सिंचाई की पद्धति ही बदल गई। तब तक किसान कुँओं से रहट द्वारा पानी निकालकर छोटे-छोटे खेतों की सिंचाई किया करते थे। लोगों ने देखा कि बिजली से चलने वाले नलकूपों से ज़्यादा प्रभावकारी ढंग से अधिक क्षेत्र की सिंचाई की जा सकती थी। प्रारंभ में कुछ नलकूप सरकार द्वारा लगाए गए थे। पर, जल्दी ही किसानों ने अपने निजी नलकूप लगाने प्रारंभ कर दिए। परिणामस्वरूप, 1970 के दशक के मध्य तक 200 हेक्टेयर के पूरे जुते हुए क्षेत्र की सिंचाई होने लगी।

भारत में सभी गाँवों में ऐसी उच्च स्तर की सिंचाई व्यवस्था नहीं है। नदीय मैदानों के अतिरिक्त हमारे देश में तटीय क्षेत्रों में अच्छी सिंचाई होती है। इसके विपरीत, पठारी क्षेत्रों जैसे, दक्षिणी पठार में सिंचाई कम होती है। देश में आज भी कुल कृषि क्षेत्र के 40 प्रतिशत से भी कम क्षेत्र में ही सिंचाई होती है। शेष क्षेत्रों में खेती मुख्यत: वर्षा पर निर्भर है।

एक वर्ष में किसी भूमि पर एक से ज़्यादा फसल पैदा करने को **बहुविध फसल प्रणाली** कहते है। यह भूमि के किसी एक टुकड़े में उपज बढ़ाने की सबसे सामान्य प्रणाली है। पालमपुर में सभी किसान कम से कम दो मुख्य फसलें पैदा करते हैं। कई किसान पिछले पंद्रह-बीस वर्षों से तीसरी फसल के रूप में आलू पैदा कर रहे हैं।

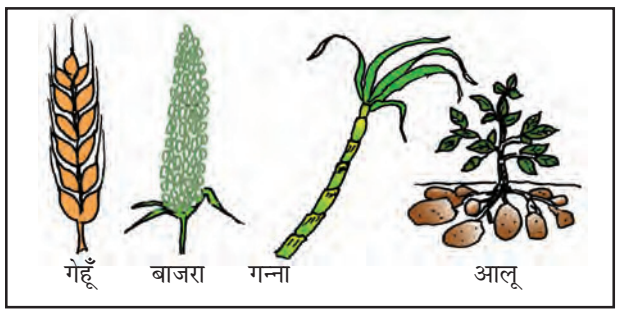

चित्र 1.3 : विभिन्न फसलें

आइए चर्चा करें

- सारणी 1.1 में 10 लाख (मिलीयन) हेक्टेयर की इकाइयों में भारत में कृषि क्षेत्र को दिखाया गया है। सारणी के नीचे दिए गए आरेख में इसे चित्रित करें। आरेख क्या दिखाता है? कक्षा में चर्चा करें।
- क्या सिंचाई के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र को बढ़ाना आवश्यक है? क्यों?

सारणी 1.1 : संबंधित वर्षों में जुताई क्षेत्र

वर्ष	जुताई क्षेत्र (मिलीयन हेक्टेयर)
1950-51	129
1990-91	157
2000-01	156
2010-11 (P)	156
2011-12 (P)	156
2012-13 (P)	157
2013-14 (P)	156
2014-15 (P)	155

(P)- *अनंमिम गणना*

स्रोत : *पॉकेट बुक ऑफ एग्रीकल्चरल स्टैटिस्टिक्स 2017, आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, कृषि निगम और किसानों के कल्याण विभाग*

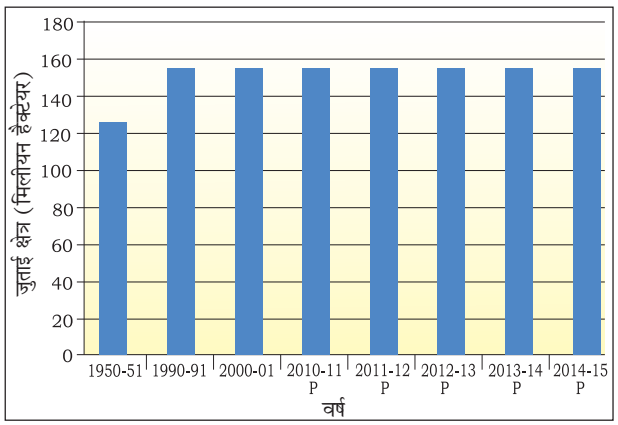

- आप पालमपुर में पैदा की जाने वाली फसलों के बारे में पढ़ चुके हैं। अपने क्षेत्र में पैदा की जाने वाली फसलों की सूचना के आधार पर निम्न सारणी को भरिए :

आपने देखा कि एक ही ज़मीन के टुकड़े से उत्पादन बढ़ाने का एक तरीका बहुविध फसल प्रणाली है। दूसरा तरीका अधिक उपज के लिए खेती में आधुनिक कृषि विधियों का प्रयोग करना है। उपज को भूमि के किसी टुकड़े में एक ही मौसम में पैदा की गई फसल के रूप में मापा जाता है। 1960 के दशक के मध्य तक खेती में पारंपरिक बीजों का प्रयोग किया जाता था, जिनकी उपज अपेक्षाकृत कम थी। परंपरागत बीजों को कम सिंचाई की आवश्यकता होती थी। किसान उर्वरकों के रूप में गाय के गोबर या दूसरी प्राकृतिक खाद का प्रयोग करते थे। यह सब किसानों के पास तत्काल ही उपलब्ध थे, उन्हें इनको खरीदना नहीं पड़ता था।

1960 के दशक के अंत में **हरित क्रांति** ने भारतीय किसानों को अधिक उपज वाले बीजों (एच.वाई.वी.) के द्वारा गेहूँ और चावल की खेती करने के तरीके सिखाए। परंपरागत बीजों की तुलना में एच.वाई.वी. बीजों से एक ही पौधे से ज़्यादा

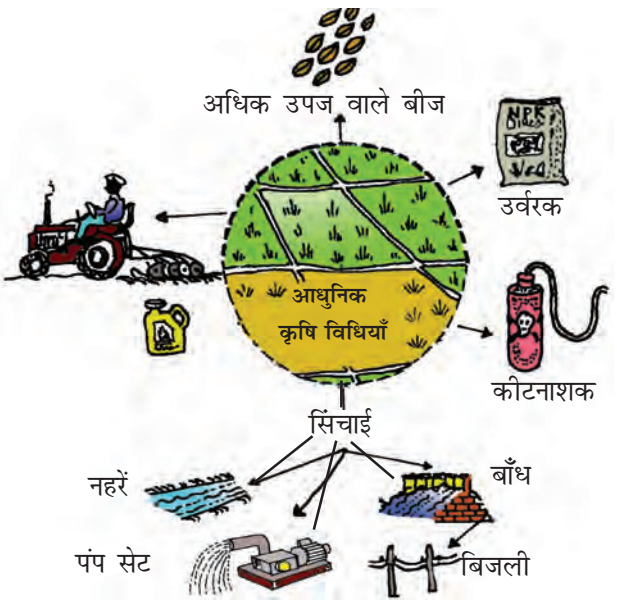

चित्र 1.4 : *आधुनिक कृषि के तरीके : एच.वाई.वी. बीज, रासायनिक उर्वरक आदि*

फसल का नाम	किस माह में बोयी गई	किस माह में काटी गई	सिंचाई का साधन (वर्षा, तालाब, नलकूप, नहर आदि)

मात्रा में अनाज पैदा होने की आशा थी। इसके परिणामस्वरूप, ज़मीन के उसी टुकड़े में, पहले की अपेक्षा कहीं अधिक अनाज की मात्रा पैदा होने लगी। यद्यपि, अति उपज प्रजातियों वाले बीजों से अधिकतम उपज पाने के लिए बहुत ज़्यादा पानी तथा रासायनिक खाद और कीटनाशकों की ज़रूरत थी। अधिक उपज केवल अति उपज प्रजातियों वाले बीजों, सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों, और कीटनाशकों आदि के संयोजन से ही संभव थी।

भारत में पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों ने खेती के आधुनिक तरीकों का सबसे पहले प्रयोग किया। इन क्षेत्रों में किसानों ने खेती में सिंचाई के लिए नलकूप और एच.वाई.वी बीजों, रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों का प्रयोग किया। उनमें से कुछ ने ट्रैक्टर और फसल गहाने के लिए मशीनें खरीदीं, जिसने जुताई और कटाई के काम को तेज़ कर दिया। उन्हें इनसे गेहूँ की ज़्यादा पैदावार प्राप्त हुई।

पालमपुर में, परंपरागत बीजों से गेहूँ की उपज 1,300 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर थी। एच.वाई.बी. बीजों से उपज 3, 200 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक पहुँच गई। गेहूँ के उत्पादन में बहुत अधिक वृद्धि हुई। किसानों के पास बाज़ार में बेचने को अब अधिशेष गेहूँ की काफ़ी मात्रा उपलब्ध थी।

आइए चर्चा करें

- बहुविधि फसल प्रणाली और खेती की आधुनिक विधियों में क्या अंतर है?
- सारणी 1.2 में भारत में हरित क्रांति के बाद गेहूँ और दालों के उत्पादन को करोड़ टन इकाइयों में दिखाया गया है। इसे एक आरेख बनाकर दिखाइए। क्या हरित क्रांति दोनों ही फसलों के लिए समान रूप से सफल सिद्ध हुई? विचार-विमर्श करें।
- आधुनिक कृषि विधियों को अपनाने वाले किसान के लिए आवश्यक कार्यशील पूँजी क्या है?
- पहले की तुलना में कृषि की आधुनिक विधियों के लिए किसानों को अधिक नकद की ज़रूरत पड़ती है। क्यों?

सारणी 1.2 : *दालों तथा गेहूँ का उत्पादन (करोड़ टन)*

वर्ष	दालों का उत्पादन	गेहूँ का उत्पादन
1965-66	10	10
1970-71	12	24
1980-81	11	36
1990-91	14	55
2000-01	11	70
2010-11	18	87
2012-13	18	94
2013-14	19	96
2014-15	17	87
2015-16	17	94
2016-17	23	99
2017-18	24	97

स्रोत : *कृषि निगम और किसानों के कल्याण विभाग, फरवरी 2018*

सुझाई गई क्रियाएँ

खेत पर जाने के पश्चात् अपने क्षेत्र के कुछ किसानों से बातें कर यह मालूम कीजिए :

1. आधुनिक या परंपरागत या मिश्रित-खेती की इन विधियों में से किसान किसका प्रयोग करते हैं? एक टिप्पणी लिखिए।
2. सिंचाई के क्या स्रोत हैं?
3. कृषि भूमि के कितने भाग में सिंचाई होती है? (बहुत कम / लगभग आधी / अधिकांश / समस्त)
4. किसान अपने लिए आवश्यक आगत कहाँ से प्राप्त करते हैं?

3. क्या भूमि यह धारण कर पाएगी?

भूमि एक प्राकृतिक संसाधन है, अत: इसका सावधानीपूर्वक प्रयोग करने की ज़रूरत है। वैज्ञानिक रिपोर्टों से संकेत मिलता है कि खेती की आधुनिक कृषि विधियों ने प्राकृतिक संसाधन आधार का अति उपयोग किया है। अनेक क्षेत्रों में, हरित क्रांति के कारण उर्वरकों के अधिक प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता कम हो गई है। इसके अतिरिक्त, नलकूपों से सिंचाई के कारण भूमि जल के सतत् प्रयोग से भौम जल-स्तर कम हो गया है। मिट्टी की उर्वरता और भौम जल जैसे पर्यावरणीय संसाधन कई वर्षों में बनते हैं। एक बार नष्ट होने के बाद उन्हें पुनर्जीवित करना बहुत कठिन है। कृषि का भावी विकास सुनिश्चित करने के लिए हमें पर्यावरण की देखभाल करनी चाहिए।

सुझाई गई क्रिया

- अखबारों / पत्रिकाओं से पाठ में दी गई रिपोर्टें पढ़ने के बाद, कृषि मंत्री को यह बताते हुए अपने शब्दों में एक पत्र लिखिए कि कैसे रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग हानिकारक हो सकता है।

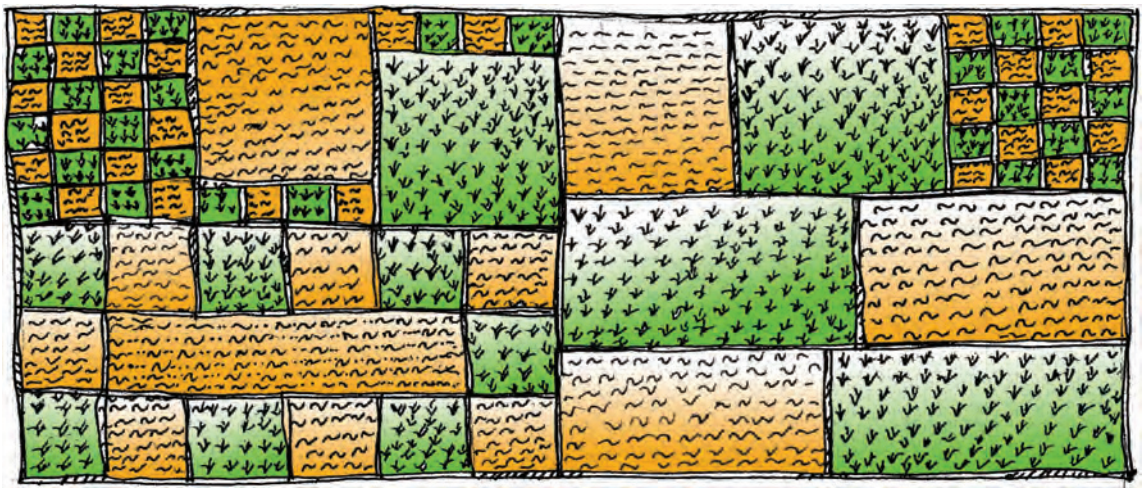

चित्र 1.5 : पालमपुर गाँव : कृषि भूमि का वितरण

...रासायनिक उर्वरक ऐसे खनिज देते हैं, जो पानी में घुल जाते हैं और पौधों को तुरंत उपलब्ध हो जाते हैं। लेकिन, मिट्टी इन्हें लंबे समय तक धारण नहीं कर सकती। वे मिट्टी से निकलकर भौम जल, नदियों और तालाबों को प्रदूषित करते हैं। रासायनिक उर्वरक मिट्टी में उपस्थित जीवाणुओं और सूक्ष्म-अवयवों को नष्ट कर सकते हैं। इसका अर्थ है कि उनके प्रयोग के कुछ समय पश्चात्, मिट्टी पहले की तुलना में कम उपजाऊ रह जाएगी...

*(**स्रोत :** डाउन टू अर्थ, नयी दिल्ली)*

देश में रासायनिक खाद का सबसे अधिक प्रयोग पंजाब में है। रासायनिक खाद के निरंतर प्रयोग ने मिट्टी की गुणवत्ता को कम कर दिया है। पंजाब के किसानों को पहले का उत्पादन स्तर पाने के लिए अब अधिक से अधिक रासायनिक उर्वरकों और अन्य आगतों का प्रयोग करता पड़ता है। इसका मतलब है कि वहाँ खेती की लागत बहुत तेज़ी से बढ़ रही है।

*(**स्रोत :** द ट्रिब्यून, चंडीगढ़)*

4. पालमपुर के किसानों में भूमि किस प्रकार वितरित है?

आपने यह जान लिया होगा कि खेती के लिए भूमि कितनी महत्त्वपूर्ण है। दुर्भाग्यवश खेती के काम में लगे सभी लोगों के पास खेती के लिए पर्याप्त भूमि नहीं है। पालमपुर में 450 परिवारों में से लगभग एक तिहाई अर्थात् 150 परिवारों के पास, खेती के लिए भूमि नहीं है, जो अधिकांशतः दलित हैं।

बाकी परिवारों में से 240 परिवार जिनके पास भूमि है, 2 हेक्टेयर से कम क्षेत्रफल वाले छोटे भूमि के टुकड़ों पर खेती करते हैं। भूमि के ऐसे टुकड़ों पर खेती करने से किसानों के परिवारों को पर्याप्त आमदनी नहीं होती।

1960 में कृषक गोविंद के पास 2.25 हेक्टेयर अधिकतर असिंचित भूमि थी। गोविंद अपने तीन पुत्रों की मदद से इस भूमि पर खेती करता था। यद्यपि वे बहुत आराम से नहीं रह रहे थे, लेकिन परिवार अपनी एक भैंस से होने वाली कुछ अतिरिक्त आय के द्वारा अपना गुज़ारा कर रहा था। गोविंद की मृत्यु के कुछ वर्ष पश्चात्, यह भूमि उसके तीनों पुत्रों के बीच बँट गई। प्रत्येक के पास अब केवल 0.75 हेक्टेयर भूमि का टुकड़ा था। परंतु, अब बेहतर सिंचाई व्यवस्था और खेती की आधुनिक विधियों के बावजूद गोविंद के बेटे अपनी ज़मीन से गुज़ारा नहीं कर पा रहे हैं। वर्ष के कुछ भाग में उन्हें कुछ अतिरिक्त कार्य भी ढूँढ़ना पड़ता है।

चित्र 1.5 में आप एक गाँव के चारों ओर बिखरे हुए भूमि के छोटे-छोटे टुकड़ों को देख सकते हैं। इन पर छोटे किसान खेती करते हैं। दूसरी ओर, गाँव के आधे से ज़्यादा क्षेत्र में काफ़ी बड़े आकार के प्लॉट हैं। पालमपुर में मझोले और बड़े किसानों के 60 परिवार हैं, जो 2 हेक्टेयर से अधिक भूमि पर खेती करते हैं। कुछ बड़े किसानों के पास 10 हेक्टेयर या इससे अधिक भूमि है।

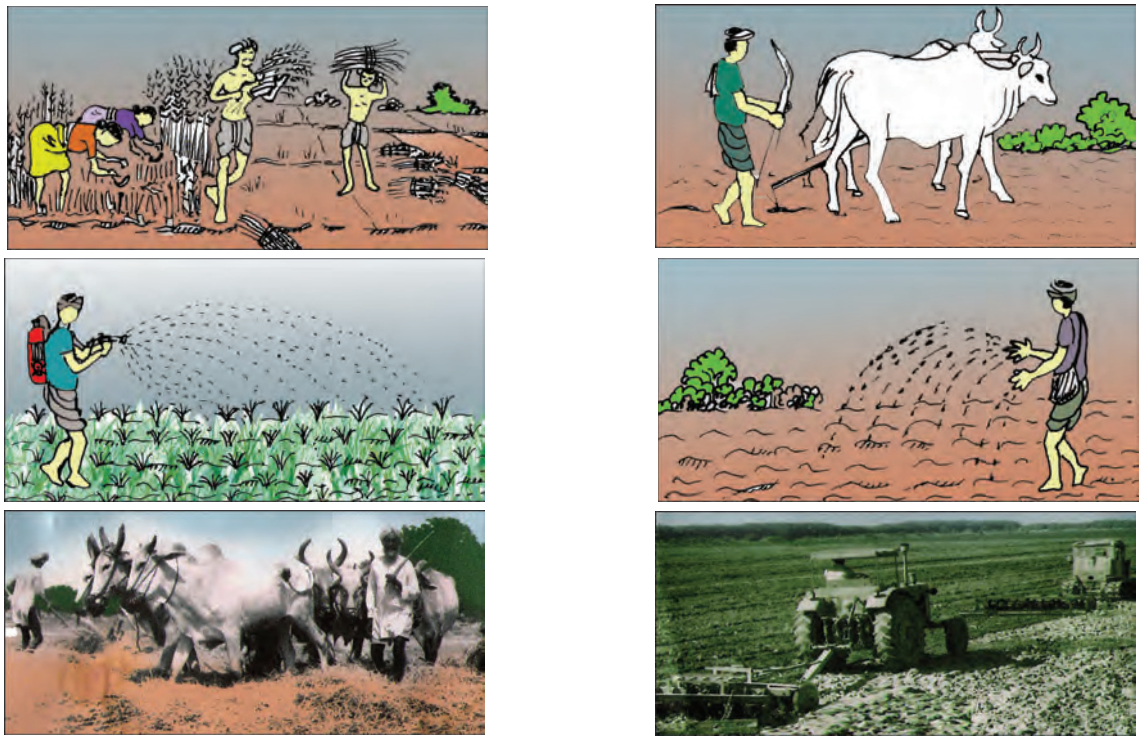

चित्र 1.6 : खेतों में कार्य : गेहूँ की फसल – कटाई, बीज बोना, कीटनाशकों का छिड़काव तथा आधुनिक एवं परंपरागत विधियों से फसलों की जुताई

आइए चर्चा करें

- चित्र 1.5 में क्या तुम छोटे किसानों द्वारा खेती में प्रयुक्त भूमि को छायांकित कर सकते हो?
- किसानों के इतने अधिक परिवार भूमि के इतने छोटे प्लॉटों पर क्यों खेती करते हैं?
- आरेख 1.1 में भारत में किसानों और उनके द्वारा खेती में प्रयुक्त भूमि का वितरण दिया गया है। इसकी कक्षा में चर्चा करें।

आरेख 1.1 : कृषि क्षेत्र और कृषकों का वितरण

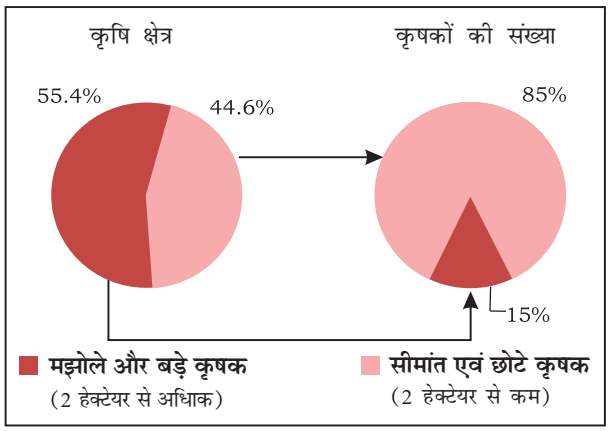

स्रोत : *पॉकेट बुक ऑफ एग्रीकल्चरल स्टैटिस्टिक्स 2017 एवं स्टेट ऑफ इंडियन एग्रीकल्चर 2017, कृषि सहयोग एवं किसानों के कल्याण विभाग (कृषि जनगणना 2011-12, के अनुसार)*

आइए चर्चा करें

- क्या आप इस बात से सहमत हैं कि पालमपुर में कृषि भूमि का वितरण असमान है? क्या भारत में भी ऐसी ही स्थिति है? व्याख्या कीजिए।

5. श्रम की व्यवस्था कौन करेगा?

भूमि के पश्चात्, **श्रम** उत्पादन का दूसरा आवश्यक कारक है। खेती में बहुत ज़्यादा परिश्रम की आवश्यकता होती है। छोटे किसान अपने परिवारों के साथ अपने खेतों में स्वयं काम करते हैं। इस तरह, वे खेती के लिए आवश्यक श्रम की व्यवस्था स्वयं ही करते हैं। मझोले और बड़े किसान अपने खेतों में काम करने के लिए दूसरे श्रमिकों को किराये पर लगाते हैं।

आइए चर्चा करें

- खेतों में किए जाने वाले कार्यों को चित्र 1.6 में पहचानिए तथा इनको उचित क्रम में व्यवस्थित कीजिए।

खेतों में काम करने के लिए श्रमिक या तो भूमिहीन परिवारों से आते हैं या बहुत छोटे प्लॉटों में खेती करने वाले परिवारों से। खेतों में काम करने वाले श्रमिकों का उगाई गई

चित्र 1.7 : *डाला और रामकली के बीच बातचीत। डाला और रामकली गाँव के सबसे निर्धन नागरिक में से हैं।*

फसल पर कोई अधिकार नहीं होता, जैसा किसानों का होता है, बल्कि उन्हें उन किसानों द्वारा मज़दूरी मिलती है जिनके लिए वे काम करते हैं। मज़दूरी नकद या वस्तु जैसे–अनाज के रूप में हो सकती है। कभी-कभी श्रमिकों को भोजन भी मिलता है। मज़दूरी एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र, एक फसल से दूसरी फसल और खेत में एक से दूसरे कृषि कार्य (जैसे बुआई और कटाई) के लिए अलग-अलग होती है। रोज़गार की अवधि में भी काफ़ी भिन्नताएँ हैं। खेत में काम करने वाले श्रमिक या तो दैनिक मज़दूरी के आधार पर कार्य करते हैं या उन्हें कार्य विशेष जैसे कटाई या पूरे साल के लिए काम पर रखा जा सकता है।

डाला पालमपुर में दैनिक मज़दूरी पर काम करने वाला एक भूमिहीन श्रमिक है। इसका मतलब है कि उसे लगातार काम ढूँढ़ते रहना पड़ता है। सरकार द्वारा खेतों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए एक दिन का न्यूनतम वेतन 300 रु. (मार्च 2017) निर्धारित

है। लेकिन, डाला को मात्र 160 रु. ही मिलते हैं। पालमपुर में खेतिहर श्रमिकों में बहुत ज़्यादा स्पर्धा है, इसलिए लोग कम वेतन में भी काम करने को सहमत हो जाते हैं। डाला अपनी स्थिति के बारे में रामकली से शिकायत करता है, जो कि एक अन्य खेतिहर श्रमिक है। डाला और रामकली दोनों गाँव के निर्धनतम व्यक्यिों में से हैं।

आइए चर्चा करें

- डाला तथा रामकली जैसे खेतिहर श्रमिक गरीब क्यों हैं?
- गोसाईंपुर और मझौली उत्तर बिहार के दो गाँव हैं। दोनों गाँवों के कुल 850 परिवारों में 250 से अधिक पुरुष ऐसे हैं, जो पंजाब और हरियाणा के ग्रामीण इलाकों या दिल्ली, मुंबई, सूरत, हैदराबाद या नागपुर में काम कर रहे हैं। इस प्रकार का प्रवास अधिसंख्य भारतीय गाँवों में होता है। लोग प्रवास क्यों करते हैं? क्या आप इस बात की व्याख्या (अपनी कल्पना के आधार पर) कर सकते हैं कि गोसाईंपुर और मझोली के प्रवासी अपने गंतव्यों पर किस तरह का काम करते होंगे?

6. खेतों के लिए आवश्यक पूँजी

आप पहले ही देख चुके हैं कि खेती के आधुनिक तरीकों के लिए बहुत अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है, अत: अब किसानों को पहले की अपेक्षा ज़्यादा पैसा चाहिए।

1. अधिसंख्य छोटे किसानों को पूँजी की व्यवस्था करने के लिए पैसा उधार लेना पड़ता है। वे बड़े किसानों से या गाँव के साहूकारों से या खेती के लिए विभिन्न आगतों की पूर्ति करने वाले व्यापारियों से कर्ज़ लेते है। ऐसे कर्ज़ों पर ब्याज़ की दर बहुत ऊँची होती है। कर्ज़ चुकाने के लिए उन्हें बहुत कष्ट सहने पड़ते है।

सविता की कहानी

सविता एक लघु कृषक है। वह अपनी एक हेक्टेयर ज़मीन पर गेहूँ पैदा करने की योजना बनाती है। बीज और कीटनाशकों के अतिरिक्त, उसे पानी खरीदने और खेती के औज़ारों की मरम्मत करवाने के लिए नकद पैसों की ज़रूरत है। उसका अनुमान है कि कार्यशील पूँजी के रूप में ही उसे 3000रु. चाहिए। उसके पास पैसा नहीं है, इसलिए वह एक बड़े किसान तेजपाल सिंह से कर्ज़ लेने का निर्णय लेती है। तेजपाल सिंह सविता को 24 प्रतिशत की दर पर चार महीने के लिए कर्ज़ देने को तैयार हो जाता है, जो ब्याज़ की एक बहुत ऊँची दर है। सविता को यह भी वचन देना पड़ता है कि वह कटाई के मौसम में उसके खेतों मे एक श्रमिक के रूप में 100 रु. प्रतिदिन पर काम करेगी। आप भी कह सकते हैं कि यह मज़दूरी बहुत कम है। सविता जानती है कि उसे अपने खेत की कटाई पूरी करने में बहुत मेहनत करनी पड़ेगी और उसके बाद तेजपाल के खेतों में श्रमिक की तरह काम करना होगा। कटाई का समय बहुत व्यस्त होता है। तीन बच्चों की माँ के रूप में उस पर घर के कामों की भी बहुत ज़िम्मेदारी है। सविता इन कठोर शर्तों को मानने के लिए तैयार हो जाती है, क्योंकि उसे मालूम है कि छोटे किसानों को कर्ज़ मिलना बहुत कठिन है।

2. छोटे किसानों के विपरीत, मझोले और बड़े किसानों को खेती से बचत होती है। इस तरह वे आवश्यक पूँजी की व्यवस्था कर लेते हैं। इन किसानों को बचत कैसे होती है? आप इसका उत्तर अगले भाग में पाएँगे।

अब तक की कहानी...

हमने उत्पादन के तीन कारकों–भूमि, श्रम और पूँजी तथा खेती में उनके प्रयोग के बारे में पढ़ा। आइए अब दिए गए रिक्त स्थानों को भरें–

उत्पादन के तीन कारकों में श्रम उत्पादन का सर्वाधिक प्रचुर मात्रा में उपलब्ध कारक है। ऐसे अनेक लोग हैं, जो गाँवों में खेतिहर मज़दूरों के रूप में काम करने को तैयार हैं, जबकि काम के अवसर सीमित हैं। वे या तो भूमिहीन परिवारों से हैं या.....। उन्हें बहुत कम मज़दूरी मिलती है और वे एक कठिन जीवन जीते हैं।

श्रम के विपरीत,.....उत्पादन का एक दुर्लभ कारक है। कृषि भूमि का क्षेत्र.....है। इसके अतिरिक्त उपलब्ध भूमि भी.....(समान/असमान) रूप से खेती में लगे लोगों में वितरित है। ऐसे कई छोटे किसान हैं जो भूमि

के छोटे टुकड़ों पर खेती करते हैं और जिनकी स्थिति भूमिहीन खेतिहर मज़दूरों से बेहतर नहीं है। उपलब्ध भूमि का अधिकतम प्रयोग करने के लिए किसान.....और..... का उपयोग करते हैं। इन दोनों से फसलों के उत्पादन में वृद्धि हुई है।

खेती की आधुनिक विधियों में.....की अत्यधिक आवश्यकता होती है। छोटे किसानों को सामान्यत: पूँजी की व्यवस्था करने के लिए पैसा उधार लेना पड़ता है और कर्ज़ चुकाने के लिए उन्हें बहुत कष्ट सहने पड़ते हैं। इसलिए, विशेष रूप से छोटे किसानों के लिए पूँजी भी उत्पादन का एक दुर्लभ कारक है।

यद्यपि भूमि और पूँजी दोनों दुर्लभ हैं, उत्पादन के इन दोनों कारकों में एक मूल अंतर है।.....प्राकृतिक संसाधन है, जबकि.....मानव निर्मित है। पूँजी को बढ़ाना संभव है, जबकि भूमि स्थिर है। इसलिए, यह बहुत आवश्यक है कि हम भूमि और खेती में प्रयुक्त अन्य प्राकृतिक संसाधनों की अच्छी तरह देखभाल करें।

7. अधिशेष कृषि उत्पादों की बिक्री

मान लीजिए कि किसानों ने उत्पादन के तीनों कारकों का प्रयोग कर अपनी भूमि में गेहूँ पैदा किया है। गेहूँ की कटाई की जाती है और उत्पादन पूर्ण हो जाता है। किसान गेहूँ का क्या करते हैं? वे परिवार के उपभोग के लिए कुछ गेहूँ रख लेते हैं और अधिशेष गेहूँ को बेच देते हैं। सविता और गोविंद के बेटों जैसे छोटे किसानों के पास बहुत कम अधिशेष गेहूँ होता है, क्योंकि उनका कुल उत्पादन बहुत कम होता है तथा इसमें से एक बड़ा भाग वे परिवार की आवश्यकताओं के लिए रख लेते हैं। इसलिए मझोले और बड़े किसान ही बाज़ार में गेहूँ की पूर्ति करते हैं। चित्र 1.1 में आप गेहूँ से लदी बाज़ार जाती बैलगाड़ी देख सकते हैं। बाज़ार में व्यापारी गेहूँ खरीदकर उसे आगे कस्बों और शहरों के दुकानदारों को बेच देते हैं।

एक बड़े किसान तेजपाल सिंह को अपनी समस्त भूमि से 350 क्विंटल अधिशेष गेहूँ प्राप्त होता है। अपने अतिरिक्त गेहूँ को वह रायगंज के बाज़ार में बेच देता है और अच्छी कमाई करता है।

तेजपाल सिंह इस कमाई का क्या करता है? पिछले वर्ष तेजपाल सिंह ने अधिकांश पैसा बैंक के अपने खाते में जमा कर दिया था। बाद में उसने इस पैसे का उपयोग सविता जैसे किसानों को कर्ज़ देने में किया, जिन्हें कर्ज़ की आवश्यकता थी। उसने बचत का उपयोग अगले मौसम की खेती के लिए कार्यशील पूँजी की व्यवस्था करने में भी किया। इस वर्ष तेजपाल सिंह बचत के पैसों से एक और ट्रैक्टर खरीदने की योजना बना रहा है। दूसरे ट्रैक्टर से, उसकी स्थिर पूँजी में वृद्धि हो जाएगी।

तेजपाल सिंह की भाँति दूसरे बड़े और मझोले किसान भी खेती के अधिशेष कृषि उत्पादों को बेचते हैं। कमाई के एक भाग को अगले मौसम के लिए पूँजी की व्यवस्था के लिए बचा कर रखा जाता है। इस तरह वे अपनी खेती के लिए पूँजी की व्यवस्था अपनी ही बचतों से कर लेते हैं। कुछ किसान बचत का उपयोग पशु, ट्रक आदि खरीदने अथवा दुकान खोलने में भी करते हैं। जैसा कि हम देखेंगे, इन सबको गैर-कृषि कार्यों के लिए पूँजी कहते हैं।

पालमपुर में गैर-कृषि क्रियाएँ

हमने देखा की पालमपुर में खेती ही प्रमुख उत्पादन क्रिया है। अब हम कुछ गैर-कृषि उत्पादन क्रियाओं पर विचार करेंगे। पालमपुर में काम करने वाले केवल 25 प्रतिशत लोग कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्य करते हैं।

1. डेयरी : अन्य प्रचलित क्रिया

पालमपुर के कई परिवारों में डेयरी एक प्रचलित क्रिया है। लोग अपनी भैंसों को कई तरह की घास और बरसात के मौसम में उगने वाली ज्वार और बाजरा (चरी) खिलाते हैं। दूध को निकट के बड़े गाँव रायगंज में बेचा जाता है। शाहपुर शहर के दो व्यापारियों ने रायगंज में दूध संग्रहण एवं शीतलन केंद्र खोला हुआ है, जहाँ से दूध दूर-दराज़ के शहरों और कस्बों में भेजा जाता है।

आइए चर्चा करें

- हम तीन किसानों के उदाहरण लेते हैं। प्रत्येक ने अपने खेतों में गेहूँ बोया है, यद्यपि उनका उत्पादन भिन्न-भिन्न है (देखिए स्तंभ 2, 'दूसरा किसान')। प्रत्येक किसान के परिवार द्वारा गेहूँ का उपभोग समान है (देखिए स्तंभ 3, 'तीसरा किसान')। इस वर्ष के समस्त अधिशेष गेहूँ का उपयोग अगले वर्ष के उत्पादन के लिए पूँजी के रूप में किया जाता है। यह भी मान लीजिए कि उत्पादन, इसमें प्रयुक्त होने वाली पूँजी का दोगुना होता है। सारणियों को पूरा करें :

पहला किसान

	उत्पादन	उपभोग	अधिशेष-उत्पादन-उपभोग	अगले वर्ष के लिए पूँजी
वर्ष 1	100	40	60	60
वर्ष 2	120	40		
वर्ष 3		40		

दूसरा किसान

	उत्पादन	उपभोग	अधिशेष-उत्पादन-उपभोग	अगले वर्ष के लिए पूँजी
वर्ष 1	80	40		
वर्ष 2		40		
वर्ष 3		40		

तीसरा किसान

	उत्पादन	उपभोग	अधिशेष-उत्पादन-उपभोग	अगले वर्ष के लिए पूँजी
वर्ष 1	60	40		
वर्ष 2		40		
वर्ष 3		40		

- तीनों किसानों के गेहूँ के तीनों वर्षों के उत्पादन की तुलना कीजिए।
- तीसरे वर्ष, तीसरे किसान के साथ क्या हुआ? क्या वह उत्पादन जारी रख सकता है? उत्पादन जारी रखने के लिए उसे क्या करना होगा?

2. पालमपुर में लघुस्तरीय विनिर्माण का एक उदाहरण

इस समय पालमपुर में 50 से कम लोग विनिर्माण कार्यों में लगे हैं। शहरों और कस्बों में बड़ी फैक्ट्रियों में होने वाले विनिर्माण के विपरीत, पालमपुर में विनिर्माण में बहुत सरल उत्पादन विधियों का प्रयोग होता है और उसे छोटे पैमाने पर ही किया जाता है। विनिर्माण कार्य पारिवारिक श्रम की सहायता से अधिकतर घरों या खेतों में किया जाता है। श्रमिकों को कभी-कभार ही किराये पर लिया जाता है।

मिश्रीलाल की कहानी

मिश्रीलाल ने गन्ना पेरने वाली एक मशीन खरीदी है, जो बिजली से चलती है और उसे अपने खेत में लगाया है। पहले गन्नों को पेरने का काम बैलों की मदद से किया जाता था, पर अब लोग इसे मशीनों से करना पसंद करते हैं। मिश्रीलाल दूसरे किसानों से भी गन्ना खरीदकर उससे गुड़ बनाता है। गुड़ को फिर शाहपुर के व्यापारियों को बेचा जाता है। इस प्रक्रिया में मिश्रीलाल थोड़ा लाभ कमा लेता है।

आइए चर्चा करें

- मिश्रीलाल को गुड़ बनाने की उत्पादन इकाई लगाने में कितनी पूँजी की ज़रूरत पड़ी?
- इस कार्य में श्रम कौन उपलब्ध कराता है?
- क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि मिश्रीलाल क्यों अपना लाभ नहीं बढ़ा पा रहा है?
- क्या आप ऐसे कारणों के बारे में सोच सकते हैं जिनसे उसे हानि भी हो सकती है।
- मिश्रीलाल अपना गुड़ गाँव में न बेचकर शाहपुर के व्यापारियों को क्यों बेचता है?

3. पालमपुर के दुकानदार

पालमपुर में ज़्यादा लोग व्यापार (वस्तु-विनिमय) नहीं करते। पालमपुर के व्यापारी वे दुकानदार हैं, जो शहरों के थोक बाज़ारों से कई प्रकार की वस्तुएँ खरीदते हैं और उन्हें गाँव में लाकर बेचते हैं। आप देखेंगे कि गाँव में छोटे जनरल स्टोरों में चावल, गेहूँ, चाय, तेल, बिस्कुट, साबुन, टूथ पेस्ट, बैट्री, मोमबत्तियाँ, कॉपियाँ, पैन, पैंसिल यहाँ तक कि कुछ कपड़े भी बिकते हैं। कुछ परिवारों ने जिनके घर बस स्टैंड के निकट हैं, अपने घर के एक भाग में छोटी दुकान खोल ली है। वे खाने की चीज़ें बेचते हैं।

करीम की कहानी

करीम ने गाँव में एक कंप्यूटर केंद्र खोल लिया है। हाल के वर्षों में कई विद्यार्थी शाहपुर शहर के कॉलेज जाने लगे हैं। करीम ने देखा कि गाँव के कई छात्र शहर की कंप्यूटर कक्षाओं में जाते हैं। गाँव में दो महिलाओं के पास कंप्यूटर अनुप्रयोग में डिग्री थी। उसने उन्हें काम पर लगाने का निश्चय किया। उसने कंप्यूटर खरीदे और अपने घर में बाज़ार की ओर खुले बाहर के कमरे में कक्षाएँ प्रारंभ की। हाईस्कूल के छात्रों ने पर्याप्त संख्या में इन कक्षाओं में आना प्रारंभ कर दिया है।

आइए चर्चा करें

- करीम की पूँजी और श्रम किस रूप से मिश्रीलाल की पूँजी और श्रम से भिन्न है?
- इससे पहले किसी और ने कंप्यूटर केंद्र क्यों नहीं शुरू किया? संभावित कारणों की चर्चा कीजिए।

4. परिवहन : तेज़ी से विकसित होता एक क्षेत्रक

पालमपुर और रायगंज के बीच सड़क पर कई प्रकार के वाहन चलते हैं। रिक्शावाले, ताँगेवाले, जीप, ट्रैक्टर, ट्रक ड्राइवर तथा परंपरागत बैलगाड़ी और दूसरी गाड़ियाँ चलाने वाले, वे लोग हैं, जो परिवहन सेवाओं में शामिल हैं। वे लोगों और वस्तुओं को एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाते हैं और इसके बदले में उन्हें पैसे मिलते हैं। गत कई वर्षों में परिवहन से जुड़े लोगों की संख्या बहुत बढ़ गई है।

किशोर की कहानी

किशोर एक खेतिहर मज़दूर है। अन्य ऐसे ही श्रमिकों की भाँति किशोर को अपनी मज़दूरी से अपने घर-परिवार की आवश्यकताएँ पूरी करने में कठिनाई होती थी। कुछ वर्ष पहले किशोर ने बैंक से कर्ज़ लिया था। यह एक सरकारी कार्यक्रम के अंतर्गत था, जिसमें भूमिहीन निर्धन परिवारों को सस्ते कर्ज़ दिए जा रहे थे। किशोर ने इस पैसे से एक भैंस खरीदी। अब वह भैंस का दूध बेचता

है। अब उसने अपनी भैंसागाड़ी भी बना ली है, जिसमें वह कई प्रकार के सामान ले जाता है। सप्ताह में एक दिन, वह गंगा के किनारे से कुम्हार के लिए मिट्टी लेकर आता है या कभी-कभी वह गुड़ अथवा अन्य वस्तुओं को लेकर शाहपुर जाता है। हरेक महीने उसे परिवहन संबंधित कोई न कोई काम मिल जाता है। परिणामस्वरूप, किशोर पिछले वर्षों की तुलना में अब अधिक कमाने लगा है।

आइए चर्चा करें

- किशोर की स्थायी पूँजी क्या है?
- क्या आप सोच सकते हैं कि उसकी कार्यशील पूँजी कितनी होगी?
- किशोर कितनी उत्पादन क्रियाओं में लगा हुआ है?
- क्या आप कह सकते हैं कि किशोर को पालमपुर की अच्छी सड़कों से लाभ हुआ है?

सारांश

गाँव में खेती मुख्य उत्पादन क्रिया है। पिछले वर्षों में खेती की विधियों में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। इनकी वजह से किसान उतनी ही भूमि से अधिक फसल पैदा करने लगे हैं। यह एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है, क्योंकि भूमि स्थायी तथा दुर्लभ है। उत्पादन को बढ़ाने के लिए भूमि और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर बहुत अधिक दबाव पड़ा है।

खेती की नयी विधियों में कम भूमि परंतु अधिक पूँजी की ज़रूरत पड़ती है। मझोले और बड़े किसान अपने उत्पादन से हुई बचत से अगले मौसम के लिए पूँजी की व्यवस्था कर लेते हैं। दूसरी ओर, छोटे किसानों के लिए, जो भारत में किसानों की कुल संख्या का 80 प्रतिशत भाग है, पूँजी की व्यवस्था करना बहुत कठिन है। उनके भूखंड का आकार छोटा होने के कारण उनका उत्पादन पर्याप्त नहीं होता। अतिरिक्त साधनों की कमी के कारण वे अपनी बचत से पूँजी नहीं निकाल पाते, अतः उन्हें कर्ज़ लेना पड़ता है। कर्ज़ के अतिरिक्त कई छोटे किसानों को अपने व अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए खेतिहर मज़दूरों के रूप में अतिरिक्त काम करना पड़ता है।

श्रम पूर्ति उत्पादन के अन्य कारकों की तुलना में सबसे अधिक प्रचुर है, अतः नयी विधियों में श्रम का अधिक प्रयोग करना आदर्श होता, दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हुआ। खेती में श्रमिकों का उपयोग सीमित है। अवसरों की तलाश में श्रमिक आस-पड़ोस के गाँवों, शहरों तथा कस्बों में जा रहे हैं। कुछ श्रमिकों ने गाँव में ही गैर-कृषि क्षेत्र में काम करना प्रारंभ कर दिया है।

इस समय गाँव में गैर-कृषि क्षेत्रक बहुत बड़ा नहीं है। भारत में ग्रामीण क्षेत्र के 100 कामगारों में से केवल 24 ही गैर-कृषि कार्यों में लगे हैं। यद्यपि, गाँव में अनेक प्रकार के गैर-कृषि कार्य होते हैं (हमने केवल कुछ ही उदाहरण देखें हैं), प्रत्येक कार्य में नियुक्त लोगों की संख्या बहुत ही कम है।

हम चाहेंगे कि भविष्य में गाँव में गैर-कृषि उत्पादन क्रियाओं में भी वृद्धि हो। खेती के विपरीत, गैर-कृषि कार्यों में कम भूमि की आवश्यकता होती है। लोग कम पूँजी से भी गैर-कृषि कार्य प्रारंभ कर सकते हैं। इस पूँजी को प्राप्त कैसे किया जाता है? या तो अपनी ही बचत का प्रयोग किया जाता है, या फिर कर्ज़ लिया जाता है। आवश्यकता है कि कर्ज़ ब्याज की कम दर पर उपलब्ध हों, ताकि बिना बचत वाले लोग भी गैर-कृषि कार्य शुरू कर सकें। गैर-कृषि कार्यों के प्रसार के लिए यह भी आवश्यक है कि ऐसे बाज़ार हों, जहाँ वस्तुएँ और सेवाएँ बेची जा सकें। पालमपुर में हमने देखा कि आस-पड़ोस के गाँवों, कस्बों और शहरों में दूध, गुड़, गेहूँ आदि उपलब्ध हैं। जैसे-जैसे ज़्यादा गाँव कस्बों और शहरों से अच्छी सड़कों, परिवहन और टेलीफ़ोन से जुड़ेंगे, भविष्य में गाँवों में गैर-कृषि उत्पादन क्रियाओं के अवसर बढ़ेंगे।

अभ्यास

1. भारत में जनगणना के दौरान दस वर्ष में एक बार प्रत्येक गाँव का सर्वेक्षण किया जाता है। पालमपुर से संबंधित सूचनाओं के आधार पर निम्न तालिका को भरिए :

   (क) अवस्थिति क्षेत्र

   (ख) गाँव का कुल क्षेत्र

   (ग) भूमि का उपयोग (हेक्टेयर में)

कृषि भूमि		भूमि जो कृषि के लिए उपलब्ध नहीं है *(निवास स्थानों, सड़कों, तालाबों, चरागाहों आदि के क्षेत्र)*
सिंचित	असिंचित	
		26 हेक्टेयर

   (घ) सुविधाएँ

शैक्षिक	
चिकित्सा	
बाज़ार	
बिजली पूर्ति	
संचार	
निकटतम कस्बा	

2. खेती की आधुनिक विधियों के लिए ऐसे अधिक आगतों की आवश्यता होती है, जिन्हें उद्योगों में विनिर्मित किया जाता है, क्या आप सहमत हैं?

3. पालमपुर में बिजली के प्रसार ने किसानों की किस तरह मदद की?

4. क्या सिंचित क्षेत्र को बढ़ाना महत्त्वपूर्ण है? क्यों?

5. पालमपुर के 450 परिवारों में भूमि के वितरण की एक सारणी बनाइए।

6. पालमपुर में खेतिहर श्रमिकों की मज़दूरी न्यूनतम मज़दूरी से कम क्यों है?

7. अपने क्षेत्र में दो श्रमिकों से बात कीजिए। खेतों में काम करने वाले या विनिर्माण कार्य में लगे मज़दूरों में से किसी को चुनें। उन्हें कितनी मज़दूरी मिलती है? क्या उन्हें नकद पैसा मिलता है या वस्तु-रूप में ? क्या उन्हें नियमित रूप से काम मिलता है? क्या वे कर्ज़ में हैं?

8. एक ही भूमि पर उत्पादन बढ़ाने के अलग-अलग कौन से तरीके हैं? समझाने के लिए उदाहरणों का प्रयोग कीजिए।

9. एक हेक्टेयर भूमि के मालिक किसान के कार्य का ब्यौरा दीजिए।

10. मझोले और बड़े किसान कृषि से कैसे पूँजी प्राप्त करते है? वे छोटे किसानों से कैसे भिन्न है?

11. सविता को किन शर्तों पर तेजपाल सिंह से ऋण मिला है? क्या ब्याज़ की कम दर पर बैंक से कर्ज़ मिलने पर सविता की स्थिति अलग होती?

12. अपने क्षेत्र के कुछ पुराने निवासियों से बात कीजिए और पिछले 30 वर्षों में सिंचाई और उत्पादन के तरीकों में हुए परिवर्तनों पर एक संक्षिप्त रिपोर्ट लिखिए (वैकल्पिक)।

13. आपके क्षेत्र में कौन से गैर-कृषि उत्पादन कार्य हो रहे हैं? इनकी एक संक्षिप्त सूची बनाइए।

14. गाँवों में और अधिक गैर-कृषि कार्य प्रारंभ करने के लिए क्या किया जा सकता है?

संदर्भ

एटीन, गिल्बर्ट, 1985, *रूरल डेवलपमेंट इन एशिया : मीटिंग्स विद पीजेंट्स*, सेज पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली।

एटीन, गिल्बर्ट, 1988, *फ़ूड एंड पावर्टी : इंडियाज़ हाफ़ वन बैटल*, सेज पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली।

राज, के.एन., 1991, *विलेज इंडिया एंड इट्स पॉलिटिकल इकोनॉमी*, सी.टी. कुरियन द्वारा संपादित *इकोनॉमी, सोसायटी एंड डेवलेपमेंट*, सेज पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली।

थार्नर, डेनियल एंड थार्नर, एलीस, 1962, *लैंड एंड लेबर इन इंडिया*, एशिया पब्लिशिंग हाउस, मुंबई।

एच टी टी पी://इकनॉमिक्स टाइम्स, इंडिया टाइम्स, कॉम/न्यूज़/पॉलिसी/गवर्नमेंट-टाइम्स-मिनिमम-वेज-फोर-एग्रीकल्चर-लेबरर/आर्टिकलशो/57408252, सी.एम.एस.

2

अध्याय

0971CH02

संसाधन के रूप में लोग

अवलोकन

'संसाधन के रूप में लोग' अध्याय जनसंख्या की, अर्थव्यवस्था पर दायित्व से अधिक परिसंपत्ति के रूप में, व्याख्या करने का प्रयास है। जब शिक्षा, प्रशिक्षण और चिकित्सा सेवाओं में निवेश किया जाता है तो वही जनसंख्या मानव पूँजी में बदल जाती है। वास्तव में, **मानव पूँजी** कौशल और उनमें निहित उत्पादन के ज्ञान का स्टॉक है।

भारत की हरित क्रांति एक नाटकीय उदाहरण है कि किस प्रकार बेहतर उत्पादन प्रौद्योगिकी के रूप में अधिक ज्ञान रूपी आगत दुर्लभ भूमि संसाधन की उत्पादकता में तीव्र वृद्धि ला सकता है। भारत में सूचना प्रौद्योगिकी में क्रांति एक आश्चर्यजनक उदाहरण है कि भौतिक मशीनरी तथा प्लांट की अपेक्षा मानव पूँजी के महत्त्व ने किस प्रकार उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है।

स्रोत : *योजना आयोग, भारत सरकार*

परिचय

'संसाधन के रूप में लोग' वर्तमान उत्पादन कौशल और क्षमताओं के संदर्भ में किसी देश के कार्यरत लोगों का वर्णन करने का एक तरीका है। उत्पादक पहलू की दृष्टि से जनसंख्या पर विचार करना **सकल राष्ट्रीय उत्पाद** के सृजन में उनके योगदान की क्षमता पर बल देता है। दूसरे संसाधनों की भाँति ही जनसंख्या भी एक संसाधन है–'एक मानव संसाधन'। यह विशाल जनसंख्या का एक सकारात्मक पहलू है, जिसे प्राय: उस वक्त अनदेखा कर दिया जाता है जब हम इसके नकारात्मक पहलू को देखते हैं, जैसे भोजन, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की जनसंख्या तक पहुँच से संबंधित समस्याओं पर विचार करते समय। जब इस विद्यमान मानव संसाधन को और अधिक शिक्षा तथा स्वास्थ्य द्वारा और विकसित किया जाता है, तब हम इसे **मानव पूँजी निर्माण** कहते हैं, जो भौतिक पूँजी निर्माण की ही भाँति देश की उत्पादक शक्ति में वृद्धि करता है।

मानव पूँजी में निवेश (शिक्षा, प्रशिक्षण और स्वास्थ्य सेवा के द्वारा) भौतिक पूँजी की ही भाँति प्रतिफल प्रदान करता है। अधिक शिक्षित या बेहतर प्रशिक्षित लोगों की उच्च उत्पादकता के कारण होने वाली अधिक आय और साथ ही अधिक स्वस्थ लोगों की उच्च उत्पादकता के रूप में इसे प्रत्यक्षत: देखा जा सकता है।

चित्र 2.1 : मानव पूँजी

आइए चर्चा करें

- चित्र 2.1 को देख कर क्या आप बता सकते हैं कि डॉक्टर, अध्यापक, इंजीनियर तथा दर्ज़ी अर्थव्यवस्था के लिए किस प्रकार परिसंपत्ति हैं?

उच्च आय से न केवल अधिक शिक्षित और अधिक स्वस्थ लोगों को लाभ होता है बल्कि समाज को भी अप्रत्यक्ष तरीकों से लाभ होता है, क्योंकि अधिक शिक्षित या अधिक स्वस्थ जनसंख्या का लाभ उन लोगों तक भी पहुँचता है जो स्वयं प्रत्यक्ष रूप से उतने शिक्षित नहीं हैं या उतनी स्वास्थ्य सेवाएँ उन्हें प्रदान नहीं की गई हैं। वास्तव में, मानव पूँजी एक तरह से अन्य संसाधनों जैसे, भूमि और भौतिक पूँजी से श्रेष्ठ है, क्योंकि मानव संसाधन भूमि और पूँजी का उपयोग कर सकता है। भूमि और पूँजी अपने आप उपयोगी नहीं हो सकते।

अनेक दशकों से भारत में विशाल जनसंख्या को एक परिसंपत्ति की अपेक्षा एक दायित्व माना जाता रहा है। लेकिन, यह आवश्यक नहीं कि एक विशाल जनसंख्या देश के लिए दायित्व ही हो। मानव पूँजी में निवेश द्वारा इसे एक उत्पादक परिसंपत्ति में बदला जा सकता है (उदाहरण के लिए, सबके लिए शिक्षा और स्वास्थ्य, आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग में औद्योगिक और कृषि श्रमिकों के प्रशिक्षण, उपयोगी वैज्ञानिक अनुसंधान आदि पर संसाधनों के व्यय द्वारा)।

निम्नलिखित दो उदाहरण स्पष्ट करते हैं कि लोग अधिक उत्पादक संसाधन बनने का प्रयास करते हैं :

सकल की कहानी

दो मित्र विलास और सकल एक ही गाँव सेमापुर में रहते थे। सकल की आयु बारह वर्ष थी। उसकी माँ शीला घर का काम-काज देखती थी। उसके पिता बूटा चौधरी खेत में काम करते थे। सकल घर के काम-काज में अपनी माँ की मदद करता था। वह अपने छोटे भाई जीतू और बहन सीतू की भी देखभाल करता था। उसके चाचा श्याम ने मैट्रिक की परीक्षा पास की थी, लेकिन वह घर में बेकार बैठा था क्योंकि उसे कोई नौकरी नहीं मिली। बूटा और शीला चाहते थे कि उनका बेटा सकल पढ़े-लिखे। वे उस पर गाँव के स्कूल में नाम लिखाने के लिए ज़ोर देते थे, जिसमें उसने शीघ्र प्रवेश पा लिया। उसने पढ़ना शुरू किया और उच्चतर माध्यमिक की परीक्षा पास कर ली। उसके पिता ने उसे अपनी पढ़ाई जारी रखने के लिए राज़ी कर लिया। उन्होंने सकल के लिए कंप्यूटर के व्यावसायिक कोर्स में अध्ययन के लिए कर्ज़ लिया। सकल प्रतिभाशाली था और आरंभ से ही पढ़ाई में उसकी रुचि थी। उसने बड़े लगन और उत्साह से अपना कोर्स पूरा किया। कुछ समय के पश्चात् उसे एक प्राइवेट फ़र्म में नौकरी मिल गई। उसने एक नए प्रकार के सॉफ़्टवेयर को डिज़ाइन भी किया। इस सॉफ़्टवेयर से फ़र्म को अपनी बिक्री बढ़ाने में सहायता मिली। उसके बॉस ने उसकी सेवाओं से प्रसन्न होकर उसे पदोन्नति दी।

चित्र 2.2 : विलास एवं सकल की कहानियाँ

विलास की कहानी

विलास ग्यारह वर्ष का एक लड़का था और वह सकल के ही गाँव में रहता था। विलास के पिता महेश एक मछुआरे थे। विलास जब केवल दो वर्ष का था, तो उसके पिता की मृत्यु हो गई थी। उसकी माँ गीता ने मछलियाँ बेचकर अपने परिवार को पाला-पोसा। वह ज़मींदार के तालाब से मछलियाँ खरीदती और निकट की मंडी में बेचती थी। वह मछलियाँ बेचकर एक दिन में केवल 150 रुपये कमा पाती थी। विलास गठिया का रोगी बन गया। उसकी माँ के पास इतने पैसे नहीं थे कि वह उसे किसी डॉक्टर को दिखा पाती। वह स्कूल भी नहीं जा सका। उसकी पढ़ने में रुचि नहीं थी। वह खाना पकाने में अपनी माँ की मदद करता तथा अपने छोटे भाई मोहन की भी देखभाल करता। कुछ समय पश्चात् उसकी माँ बीमार पड़ गई तथा उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं था। परिवार में उनकी सहायता करने वाला भी कोई नहीं था। विलास भी उसी गाँव में मछलियाँ बेचने के लिए बाध्य हुआ। अपनी माँ की तरह वह भी कम ही कमा पाता था।

आइए चर्चा करें

- क्या दोनों मित्रों के बीच आप कोई अंतर पाते हैं? वे कौन से अंतर हैं?

क्रियाकलाप

पास के किसी गाँव या झुग्गी इलाके में जाएँ और अपनी उम्र के किसी लड़के या लड़की का अध्ययन करें, जो विलास या सकल जैसी परिस्थितियों का सामना कर रहा हो।

इन दोनों व्यक्तियों के अध्ययनों में हमने देखा कि सकल स्कूल जाता था, जबकि विलास स्कूल नहीं गया। सकल शारीरिक रूप से हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ था। उसे बार-बार डॉक्टर के पास जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। विलास गठिया का रोगी था। उसके यहाँ डॉक्टर के पास जाने के साधन नहीं थे। सकल ने कंप्यूटर में डिग्री प्राप्त की थी। सकल को एक प्राइवेट फ़र्म में नौकरी मिल गई। विलास वही काम करता रहा, जो उसकी माँ करती थी। अपनी माँ की ही तरह, परिवार को पालने-पोसने के लिए उसकी आय बहुत कम थी।

सकल के मामले में कई वर्षों की शिक्षा ने उसके श्रम की गुणवत्ता बढ़ाई। इससे उसकी कुल उत्पादकता में वृद्धि हुई। कुल उत्पादकता देश की संवृद्धि में योगदान देती है। इसके

बदले में व्यक्ति को वेतन के रूप में या फिर उसके पसंद के किसी दूसरे रूप में प्रतिफल मिलता है। विलास को उसके जीवन के आरंभिक भाग में कोई शिक्षा या स्वास्थ्य सेवा नहीं मिल सकी। वह अपनी माँ की भाँति ही मछलियाँ बेचकर अपना जीवन यापन करता। इसीलिए वह अपनी माँ की ही तरह अकुशल श्रमिक का वेतन पाता था।

मानव संसाधन में (शिक्षा और चिकित्सा सेवा के द्वारा) निवेश से भविष्य में उच्च प्रतिफल प्राप्त हो सकते हैं। लोगों में यह निवेश भूमि और पूँजी में निवेश की ही तरह है।

एक बच्चा भी, जिसकी शिक्षा और स्वास्थ्य पर निवेश किया गया है, भविष्य में उच्च आय और समाज को वृहद योगदान के रूप में अधिक प्रतिफल दे सकता है। यह देखा जाता है कि शिक्षित माँ-बाप अपने बच्चों की शिक्षा पर अधिक निवेश करते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उन्होंने स्वयं भी शिक्षा के महत्त्व को अनुभव किया होता है। वे उचित पोषण और स्वच्छता के प्रति भी सचेत होते हैं। इसी प्रकार वे अपने बच्चों की स्कूली शिक्षा और अच्छे स्वास्थ्य की आवश्यकताओं का भी ध्यान रखते हैं। इस तरह इस मामले में एक अच्छा चक्र बन जाता है। इसके विपरीत, स्वयं भी अशिक्षित और अस्वच्छता तथा सुविधावंचित स्थिति में रहने वाले माँ-बाप एक दुष्चक्र सृजित कर लेते हैं और अपने बच्चों को अपनी ही तरह सुविधाओं से वंचित स्थिति में रखते हैं।

जापान जैसे देशों ने मानव संसाधन पर निवेश किया है। उनके पास कोई प्राकृतिक संसाधन नहीं था। यह विकसित धनी देश है। वे अपने देश के लिए आवश्यक प्राकृतिक संसाधनों का आयात करते हैं। वे कैसे धनी / विकसित बने? उन्होंने लोगों में विशेष रूप से शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में निवेश किया। उन लोगों ने भूमि और पूँजी जैसे अन्य संसाधनों का कुशल उपयोग किया है। इन लोगों ने जो कुशलता और प्रौद्योगिकी विकसित की उसी से ये देश धनी / विकसित बने।

पुरुषों और महिलाओं के आर्थिक क्रियाकलाप

विलास और सकल की तरह लोग विभिन्न क्रियाकलापों में संलग्न हैं। हमने देखा कि विलास मछलियाँ बेचता था और सकल को एक फ़र्म में नौकरी मिल गई थी। विभिन्न क्रियाकलापों को तीन प्रमुख क्षेत्रकों-प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक में वर्गीकृत किया गया है। प्राथमिक क्षेत्रक के अंतर्गत कृषि, वानिकी, पशुपालन, मत्स्यपालन, मुर्गीपालन और खनन एवं उत्खनन शामिल हैं। द्वितीयक क्षेत्रक में विनिर्माण शामिल है। तृतीयक क्षेत्रक में व्यापार, परिवहन, संचार, बैंकिंग, बीमा, शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यटन सेवाएँ इत्यादि शामिल किए जाते हैं। इस क्षेत्रक में क्रियाकलाप के फलस्वरूप वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन होता है। ये क्रियाकलाप राष्ट्रीय आय में मूल्य-वर्धन करते हैं। ये क्रियाएँ आर्थिक क्रियाएँ कहलाती हैं। आर्थिक क्रियाओं के दो भाग होते हैं– बाज़ार क्रियाएँ और गैर-बाज़ार क्रियाएँ। बाज़ार क्रियाओं में वेतन या लाभ के उद्देश्य से की गई क्रियाओं के लिए पारिश्रमिक का भुगतान किया जाता है। इनमें सरकारी सेवा सहित वस्तु या सेवाओं का उत्पादन शामिल है। गैर-बाज़ार क्रियाओं से अभिप्राय स्व-उपभोग के लिए उत्पादन है। इनमें

चित्र 2.3 : क्या आप इस चित्र के आधार पर क्रियाकलापों को तीन क्षेत्रकों में वर्गीकृत कर सकते हैं?

प्राथमिक उत्पादों का उपभोग और प्रसंस्करण तथा अचल संपत्तियों का स्वलेखा उत्पादन आता है।

क्रियाकलाप

अपने निवास क्षेत्र के निकट स्थित किसी गाँव अथवा कॉलोनी में जाएँ और उस गाँव अथवा कॉलोनी के लोगों द्वारा किए जाने वाले विभिन्न क्रियाकलापों को लिखें।

अगर यह संभव नहीं है तो अपने पड़ोसियों से पूछें कि उनका व्यवसाय क्या है? उनके काम को आप तीन क्षेत्रकों में से किस क्षेत्रक में रखेंगे?

बताइए कि ये क्रियाकलाप आर्थिक क्रियाएँ हैं या गैर-आर्थिक:

विलास गाँव के बाज़ार में मछली बेचता है।

विलास अपने परिवार के लिए खाना पकाता है।

सकल एक प्राइवेट फ़र्म में काम करता है।

सकल अपने छोटे भाई और बहन की देखभाल करता है।

ऐतिहासिक और सांस्कृतिक कारणों से परिवार में महिलाओं और पुरुषों के बीच श्रम का विभाजन होता है। आमतौर पर महिलाएँ घर के काम-काज देखती हैं और पुरुष खेतों में काम करते हैं। सकल की माँ शीला खाना पकाती है, बर्तन साफ़ करती है, कपड़े धोती है, घर की सफ़ाई करती है और अपने बच्चों की देखभाल करती है। सकल के पिताजी बूटा खेतों में काम करते हैं, उपज को बाज़ार में बेचते हैं और परिवार के लिए धन कमाते हैं।

शीला परिवार के पालन-पोषण के लिए जो सेवाएँ प्रदान करती है, उसके लिए उसे कोई भुगतान नहीं किया जाता। बूटा धन कमाता है, जिसे वह परिवार के पालन-पोषण पर खर्च करता है। परिवार के लिए दी गई सेवाओं के बदले महिलाओं को भुगतान नहीं किया जाता। उनकी सेवाओं को राष्ट्रीय आय में नहीं जोड़ा जाता।

विलास की माँ गीता मछली बेच कर आय कमाती थी। इस तरह महिलाओं को उनकी सेवाओं के लिए तब भुगतान किया जाता है, जब वे श्रम-बाज़ार में प्रवेश करती हैं। उनके पुरुष सहयोगी की ही तरह उनकी आय, उनकी शिक्षा और कौशल के आधार पर निर्धारित की जाती है। शिक्षा व्यक्ति के उपलब्ध आर्थिक अवसरों के बेहतर उपयोग में सहायता करती है। शिक्षा और कौशल बाज़ार में किसी व्यक्ति की आय के प्रमुख निर्धारक हैं। अधिकांश महिलाओं के पास बहुत कम शिक्षा और निम्न कौशल स्तर हैं। पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को कम पारिश्रमिक दिया जाता है। अधिकतर महिलाएँ वहाँ काम करती हैं, जहाँ नौकरी की सुरक्षा नहीं होती तथा कानूनी सुरक्षा का अभाव है। अनियमित रोज़गार और निम्न आय इस क्षेत्रक की विशेषताएँ हैं। इस क्षेत्रक में प्रसूति अवकाश, शिशु देखभाल और अन्य सामाजिक सुरक्षा तंत्र जैसी सुविधाएँ उपलब्ध नहीं होतीं। तथापि, उच्च शिक्षा और उच्च कौशल वाली महिलाओं को पुरुषों के बराबर वेतन मिलता है। संगठित क्षेत्रक में शिक्षण और चिकित्सा उन्हें सबसे अधिक आकर्षित करते हैं। कुछ महिलाओं ने सामान्य नौकरियों के अलावा प्रशासनिक और अन्य सेवाओं में प्रवेश किया है, जिनमें वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय सेवा के उच्च स्तर की आवश्यकता पड़ती है। अपनी बहन या साथ पढ़ रही किसी सहपाठी से पूछें कि वह क्या बनना चाहती है?

जनसंख्या की गुणवत्ता

जनसंख्या की गुणवत्ता साक्षरता-दर, जीवन-प्रत्याशा से निरूपित व्यक्तियों के स्वास्थ्य और देश के लोगों द्वारा प्राप्त कौशल निर्माण पर निर्भर करती है। जनसंख्या की गुणवत्ता अंतत: देश की संवृद्धि-दर निर्धारित करती है। साक्षर और स्वस्थ जनसंख्या परिसंपत्तियाँ होती हैं।

शिक्षा

अपने जीवन के आरंभिक वर्षों की सकल की शिक्षा ने बाद के वर्षों में अच्छी नौकरी और अच्छे वेतन के रूप में उसे फल दिया। हमने देखा कि सकल के विकास के लिए शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण आगत था। इसने उसके लिए नए क्षितिज खोले, नयी आकांक्षाएँ दीं और जीवन के मूल्य विकसित किए। न केवल सकल के लिए, बल्कि समाज के विकास में भी शिक्षा का योगदान है। यह राष्ट्रीय आय और सांस्कृतिक समृद्धि में वृद्धि

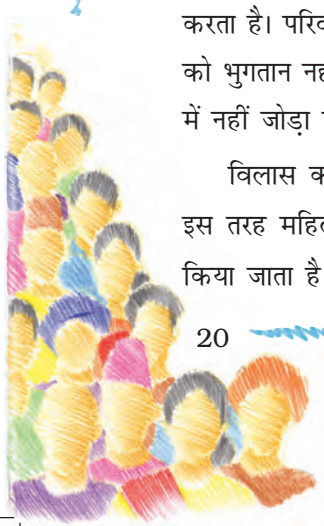

चित्र 2.4 : विद्यालय के छात्र-छात्रा

करती है और प्रशासन की कार्य-क्षमता बढ़ाती है। प्राथमिक शिक्षा में सार्वजनिक पहुँच, धारण और गुणवत्ता प्रदान करने का प्रावधान किया गया है और इस मामले में लड़कियों पर विशेष ज़ोर दिया गया है। प्रत्येक ज़िले में नवोदय विद्यालय जैसे प्रगतिनिर्धारक विद्यालयों की स्थापना की गई है। बड़ी संख्या में हाई स्कूल के विद्यार्थियों को ज्ञान और कौशल से संबंधित व्यवसाय उपलब्ध कराने के लिए व्यावसायिक शाखाएँ विकसित की गई हैं। शिक्षा पर योजना परिव्यय पहली पंचवर्षीय योजना के 151 करोड़ रुपये से बढ़ कर ग्यारवीं पंचवर्षीय योजना में 3766.90 करोड़ रुपये हो गया है। सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में शिक्षा पर व्यय 1951-52 के 0.64 प्रतिशत से बढ़कर 2015-16 में 3 प्रतिशत (बजटीय अनुमान) हो गया है। इसके बाद, केंद्रीय एवं राज्य सरकार के दस्तावेज (भारतीय

> ...व्यक्ति एक सकारात्मक परिसंपत्ति और एक कीमती राष्ट्रीय संसाधन है, जिसे बड़ी सहजता से गतिशीलता और सावधानीपूर्वक संजोने, पोषित करने तथा विकसित करने की आवश्यकता है। प्रत्येक व्यक्ति का विकास समस्याओं और आवश्यकताओं की एक भिन्न शृंखला है। ...इस जटिल और गतिशील विकास प्रक्रिया में शिक्षा की उत्प्रेरक भूमिका को बहुत सावधानी से तैयार करना चाहिए और बड़ी संवेदनशीलता के साथ कार्यान्वित करना चाहिए।
>
> *स्रोत : राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986*

***आरेख 2.1 :** भारत में साक्षरता-दर*

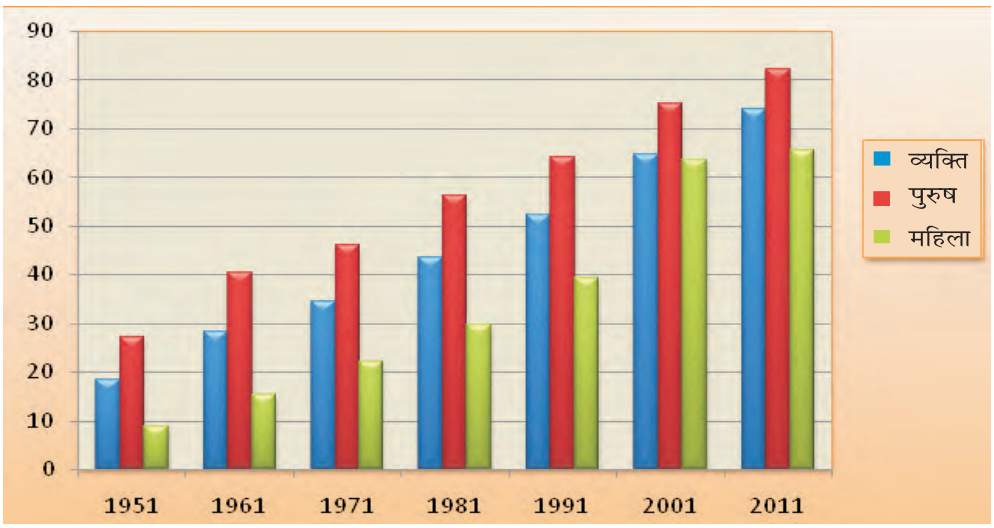

***स्रोत :** एन्विस सेंटर ऑन पापुलेशन, आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18*

आइए चर्चा करें

आरेख 2.1 का अध्ययन करें और निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दें:

- क्या 1951 से जनसंख्या की साक्षरता-दर बढ़ी है?
- किस वर्ष भारत में साक्षरता-दर सर्वाधिक रही?
- भारत में पुरुषों में साक्षरता-दर अधिक क्यों है?
- पुरुषों की अपेक्षा महिलाएँ कम शिक्षित क्यों हैं?
- आप भारत में लोगों की साक्षरता-दर का परिकलन कैसे करेंगे?
- 2020 में भारत की साक्षरता-दर का आपका पूर्वानुमान क्या है?

क्रियाकलाप

अपने विद्यालय या अपने पड़ोस के सहशिक्षा विद्यालय में पढ़ने वाले लड़के और लड़कियों की गणना करें। अपने स्कूल प्रशासक से कहें कि वे आपको लड़के और लड़कियों की संख्या के आँकड़े उपलब्ध कराएँ। अगर उनमें कोई अंतर है, तो उसका अध्ययन करें और कक्षा में उसका कारण समझाएँ।

रिजर्व बैंक) के द्वारा यह बजटीय अनुमान 2017-18 में घटकर 2.7 प्रतिशत बताया गया है। इससे साक्षरता-दर 1951 के 18 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 74 प्रतिशत हो गई है। साक्षरता प्रत्येक नागरिक का न केवल अधिकार है बल्कि यह नागरिकों द्वारा अपने कर्तव्यों का ठीक प्रकार से पालन करने तथा अपने अधिकारों का ठीक प्रकार से लाभ उठाने के लिए अनिवार्य भी है। तथापि, जनसंख्या के विभिन्न भागों के बीच व्यापक अंतर पाया जाता है। महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों में साक्षरता-दर करीब 16.6 प्रतिशत अधिक है और ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा नगरीय क्षेत्रों में साक्षरता-दर करीब 16 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2011 केरल के कुछ ज़िलों में साक्षरता-दर 94 प्रतिशत है जबकि बिहार में 62 प्रतिशत ही है। वर्ष 2013-14 प्राथमिक स्कूल प्रणाली भारत के 8.58 लाख से भी अधिक गाँवों में फैली है। दुर्भाग्यवश, स्कूल शिक्षा के इस विस्तार को शिक्षा के निम्न स्तर और पढ़ाई बीच में छोड़ने की उच्च दर ने कमज़ोर कर दिया है। 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के सभी स्कूली बच्चों को वर्ष 2010 तक प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने की दिशा में **सर्वशिक्षा अभियान** एक महत्त्वपूर्ण कदम है। राज्यों, स्थानीय सरकारों और **प्राथमिक शिक्षा सार्वभौमिक लक्ष्य** को प्राप्त करने के लिए समुदाय की सहभागिता के साथ केंद्रीय सरकार की यह एक समयबद्ध पहल है। इसके साथ ही, प्राथमिक शिक्षा में नामांकन बढ़ाने के लिए 'सेतु-पाठ्यक्रम' और 'स्कूल लौटो शिविर' प्रारंभ किए गए हैं। कक्षा में बच्चों की उपस्थिति को बढ़ावा देने, बच्चों के धारण और उनकी पोषण स्थिति में सुधार के लिए **दोपहर के भोजन** की योजना कार्यान्वित की जा रही है। इन नीतियों से भारत में शिक्षित लोगों की संख्या में वृद्धि हो सकती है।

बारहवीं योजना में उच्च शिक्षा में 18-23 वर्ष आयु वर्ग के नामांकन में 25.2 प्रतिशत तक की वृद्धि 2017-18 एवं 30 प्रतिशत 2020-21 तक करने का प्रयास किया गया है। यह विश्व औसतन 26 प्रतिशत से मिलती-जुलती है। यह रणनीति पहुँच में वृद्धि, गुणवत्ता, राज्यों के लिए विशेष पाठयक्रम में परिवर्तन को स्वीकार करना, व्यावसायीकरण तथा सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग का जाल बिछाने पर केंद्रित है। योजना दूरस्थ शिक्षा, औपचारिक, अनौपचारिक, दूरस्थ तथा संचार प्रौद्योगिकी की शिक्षा देने वाले शिक्षण संस्थानों के अभिसरण पर भी केंद्रित है। पिछले 50 वर्षों में विशेष क्षेत्रों में उच्च शिक्षा देने वाले शिक्षण संस्थानों तथा विश्वविद्यालयों की संख्या में महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई है। 1951 से 2015-16 के बीच कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों की संख्या में वृद्धि, छात्रों के नामांकन तथा अध्यापकों की भर्ती को सारणी 2.1 में देखें:

सारणी 2.1 : *उच्च शिक्षा के संस्थानों की संख्या, नामांकन तथा संकाय*

वर्ष	महाविद्यालयों की संख्या	विश्वविद्यालयों की संख्या	विद्यार्थी	शिक्षक युनिवर्सिटी एवं कॉलेज
1950-51	750	30	2,63,000	24,000
1990-91	7,346	177	49,25,000	2,72,000
1998-99	11,089	238	74,17,000	3,42,000
2010-11	33,023	523	1,86,70,050	8,16,966
2012-13	37,204	628	2,23,02,938	9,25,396
2014-15	40,760	711	2,65,85,437	12,61,350
2015-16	41,435	753	2,84,84,746	14,38,000
2016-17	42,338	795	2,94,27,158*	14,70,190*

स्रोत : *विश्वविद्यालय अनुदान आयोग वार्षिक रिपोर्ट 2010-11, 2012-13, 2013-14, 2015-16 एवं चुनिंदा शैक्षिक सांख्यिकी, मानव संसाधन विकास मंत्रालय www.ugc.ac.in-Annual Report - 2016-17.pdf*

*अखिल भारतीय उच्चतर शिक्षा सर्वेक्षण द्वारा उपलब्ध अनंतिम गणना

आइए चर्चा करें

सारणी 2.1 की कक्षा में चर्चा करें तथा निम्न प्रश्नों का उत्तर दें :

- क्या विद्यार्थियों की बढ़ती हुई संख्या को प्रवेश देने के लिए कॉलेजों की संख्या में वृद्धि पर्याप्त है?
- क्या आप सोचते हैं कि हमें विश्वविद्यालयों की संख्या बढ़ानी चाहिए?
- वर्ष 1950-51 से वर्ष 1998-99 तक शिक्षकों की संख्या में कितनी वृद्धि हुई है?
- भावी महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के बारे में आपका क्या विचार है?

स्वास्थ्य

फ़र्म का उद्देश्य लाभ को अधिकतम करना है। क्या आप सोचते हैं कि कोई भी फ़र्म ऐसे व्यक्तियों को रोज़गार देने के लिए प्रेरित होगी, जो खराब स्वास्थ्य होने के कारण स्वस्थ श्रमिकों के बराबर कार्य नहीं कर पाएँ?

किसी व्यक्ति का स्वास्थ्य उसे अपनी क्षमता को प्राप्त करने और बीमारियों से लड़ने की ताकत देता है। ऐसा कोई भी अस्वस्थ स्त्री/पुरुष संगठन के समग्र विकास में अपने योगदान को अधिकतम करने में सक्षम नहीं होगा। वास्तव में, स्वास्थ्य अपना कल्याण करने का एक अपरिहार्य आधार है। इसलिए जनसंख्या की स्वास्थ्य स्थिति को सुधारना किसी भी देश की प्राथमिकता होती है। हमारी राष्ट्रीय नीति का लक्ष्य भी जनसंख्या के अल्प सुविधा प्राप्त वर्गों पर विशेष ध्यान देते हुए स्वास्थ्य सेवाओं, परिवार कल्याण और पौष्टिक सेवा तक इनकी पहुँच को बेहतर बनाना है। पिछले पाँच दशकों में भारत ने सरकारी और निजी क्षेत्रकों में प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक सेवाओं के लिए अपेक्षित एक विस्तृत स्वास्थ्य आधारिक संरचना और जनशक्ति का निर्माण किया है।

चित्र 2.5 : स्वास्थ्य की जाँच के लिए एक पंक्ति में खड़े हुए बच्चे

इन उपायों को अपनाने से **जीवन प्रत्याशा** बढ़ कर वर्ष 2014 में 68.3 वर्ष अधिक हो गई है। **शिशु मृत्यु-दर*** 1951 के 147 से घटकर 2016 में 34 पर आ गई है। इसी अवधि में अशोधित **जन्म दर** गिर कर 20.4 और **मृत्यु-दर** 6.4 पर आ गई है। जीवन प्रत्याशा में वृद्धि और शिशु देखभाल में सुधार देश के आत्मविश्वास को, भावी प्रगति के साथ, आँकने के लिए उपयोगी है। आयु में वृद्धि आत्मविश्वास के साथ जीवन की उत्तम गुणवत्ता का सूचक है। शिशुओं की संक्रमण से रक्षा तथा माताओं के साथ बच्चों की देखभाल और पोषण सुनिश्चित करने से शिशु मृत्यु-दर घटती है।

स्रोत : *आर्थिक सर्वेक्षण, भाग-2, 2017-18*

आइए चर्चा करें

सारणी 2.2 को पढ़ें और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें:

- 1951 से 2015 तक औषधालयों की संख्या में कितने प्रतिशत की वृद्धि हुई है?
- 1951 से 2015 तक डॉक्टरों और नर्सिंगकर्मियों में कितने प्रतिशत की वृद्धि हुई है?

*शिशु मृत्यु-दर से अभिप्राय एक वर्ष से कम आयु के शिशु की मृत्यु से है।
**जन्म-दर से अभिप्राय एक विशेष अवधि में प्रति एक हज़ार व्यक्तियों के पीछे जन्म लेने वाले शिशुओं की संख्या से है।
***मृत्यु-दर से अभिप्राय एक विशेष अवधि में प्रति एक हज़ार व्यक्तियों के पीछे मरने वाले लोगों की संख्या से है।

सारणी 2.2 : संबंधित वर्षों की स्वास्थ्य आधारिक संरचना

	2013	2014	2015	2016	2017
H उपकेंद्र / प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र / सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र	1,81,139	1,82,709	1,84,359	1,85,933	1,87,505
औषधालय तथा अस्पताल	29,274	29,715	29,957	30,044	31,641
बिस्तर (सरकारी)	6,28,708	6,75,779	7,54,724	6,34,879	7,10,761
भारतीय चिकित्सा परिषद में पंजीकृत डॉक्टर	45,106	3,35,36	20,422	25,282	17,982
नर्सिंगकर्मी (ए.एन.एम + आर एन एवं आर एम + एल.एच.वी)	23,44,241	26,21,981	26,39,229	27,78,248	28,78,182

ए.एन.एम. ऑक्सलरी नर्स हाईड्राइड्स् आर.एन. एंड आर.एम. रजिस्टर्ड नर्सेस एंड रजिस्टर्ड मिडवाइव्स एल.एच.वी. लेडी हेल्थ विजीटर्स।

स्रोत : *राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्रोफाइल 2013, 2014, 2015, 2016, 2017, 2018 केन्द्रीय स्वास्थ्य गुप्तचर ब्यूरो, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय।*

- क्या आपको लगता है कि डॉक्टरों और नर्सों की संख्या में वृद्धि पर्याप्त है? यदि नहीं तो क्यों?
- किसी अस्पताल में आप और कौन सी सुविधाएँ उपलब्ध कराना चाहेंगे?
- आप हाल में जिस अस्पताल में गए, उस पर चर्चा करें।
- इस सारणी का प्रयोग करते हुए क्या आप एक आरेख बना सकते हैं?

क्रियाकलाप

आप निकट के किसी सरकारी या निजी अस्पताल में जाएँ और निम्नलिखित विवरण नोट करें–

जिस अस्पताल में आप गए, उसमें कितने बिस्तर हैं?

अस्पताल में कितने डॉक्टर हैं?

अस्पताल में कितनी नर्सें कार्यरत हैं?

इसके अलावा निम्नलिखित अतिरिक्त सूचनाएँ एकत्रित करने का प्रयास करें :

आपके इलाके में कितने अस्पताल हैं?

आपके इलाके में कितने औषधालय हैं?

भारत में ऐसे अनेक स्थान हैं जिनमें ये मौलिक सुविधाएँ भी नहीं हैं। भारत में कुल 381 मेडिकल कॉलेज और 301 डेन्टल कालेज हैं केवल चार राज्य जैसे आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु में कुल राज्यों से अधिक मेडिकल हैं।

बेरोज़गारी

सकल की माँ शीला अपने घरेलू काम-काज और बच्चों की देखभाल तथा खेती के काम में अपने पति बूटा की मदद करती थी। सकल का भाई जीतू और बहन सीतू अपना समय खेलने और घूमने-फिरने में गुज़ारते थे। क्या आप शीला या जीतू या सीतू को बेरोज़गार कह सकते हैं? यदि नहीं, तो क्यों?

बेरोज़गारी उस समय विद्यमान कही जाती है, जब प्रचलित मज़दूरी की दर पर काम करने के लिए इच्छुक लोग रोज़गार नहीं पा सकें। शीला की रुचि अपने घर के बाहर काम करने में नहीं है। जीतू और सीतू बहुत छोटे हैं और उनकी गिनती श्रम-शक्ति की जनसंख्या में नहीं हो सकती और न ही जीतू, सीतू और शीला को बेरोज़गार कहा

जा सकता है। श्रम बल जनसंख्या में वे लोग शामिल किए जाते हैं, जिनकी उम्र 15 वर्ष से 59 वर्ष के बीच है। सकल के भाई और बहन इस आयु वर्ग में नहीं आते। इसलिए उन्हें बेरोज़गार नहीं कहा जा सकता। सकल की माँ शीला परिवार के लिए काम करती है। वह अपने घर से बाहर जाकर पारिश्रमिक के लिए काम करने की इच्छुक नहीं है। उसे भी बेरोज़गार नहीं कहा जा सकता। सकल के दादा-दादी और नाना-नानी, जिनका यद्यपि इस कहानी में वर्णन नहीं है, उन्हें भी बेरोज़गार नहीं कहा जा सकता।

भारत के संदर्भ में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में बेरोज़गारी है। तथापि, ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में बेरोज़गारी की प्रकृति में अंतर है। ग्रामीण क्षेत्रों में **मौसमी** और **प्रच्छन्न बेरोज़गारी** है। नगरीय क्षेत्रों में अधिकांशत: **शिक्षित बेरोज़गारी** है।

मौसमी बेरोज़गारी तब होती है, जब लोग वर्ष के कुछ महीनों में रोज़गार प्राप्त नहीं कर पाते हैं। कृषि पर आश्रित लोग आमतौर पर इस तरह की समस्या से जूझते हैं। वर्ष में कुछ व्यस्त मौसम होते हैं जब बुआई, कटाई, निराई और गहाई होती है। कुछ विशेष महीनों में कृषि पर आश्रित लोगों को अधिक काम नहीं मिल पाता।

प्रच्छन्न बेरोज़गारी के अंतर्गत लोग नियोजित प्रतीत होते हैं, उनके पास भूखंड होता है, जहाँ उन्हें काम मिलता है। ऐसा प्राय: कृषिगत काम में लगे परिजनों में होता है। किसी काम में पाँच लोगों की आवश्यकता होती है, लेकिन उसमें आठ लोग लगे होते हैं। इनमें तीन लोग अतिरिक्त हैं। ये तीनों इसी खेत पर काम करते है जिस पर पाँच लोग काम करते है। इन तीनों द्वारा किया गया अंशदान पाँच लोगों द्वारा किए गए योगदान में कोई बढ़ोतरी नहीं करता। अगर तीन लोगों को हटा दिया जाए, तो खेत की उत्पादकता में कोई कमी नहीं आएगी। खेत में पाँच लोगों के काम की आवश्यकता है और तीन अतिरिक्त लोग प्रच्छन्न रूप से बेरोज़गार होते हैं।

शहरी क्षेत्रों के मामले में शिक्षित बेरोज़गारी एक सामान्य परिघटना बन गई है। मैट्रिक, स्नातक और स्नातकोत्तर डिग्रीधारी अनेक युवक रोज़गार पाने में असमर्थ हैं। एक अध्ययन में यह बात सामने आई है कि मैट्रिक की तुलना में स्नातक और स्नातकोत्तर युवकों में बेरोज़गारी अधिक तेज़ी से बढ़ी है। एक विरोधाभासी जनशक्ति-स्थिति सामने आई है कि कुछ विशेष श्रेणियों में जनशक्ति के आधिक्य के साथ ही कुछ अन्य श्रेणियों में जनशक्ति की कमी विद्यमान है। एक ओर तकनीकी अर्हता प्राप्त लोगों के बीच बेरोज़गारी है, तो दूसरी ओर आर्थिक संवृद्धि के लिए आवश्यक तकनीकी कौशल की कमी भी है।

बेरोज़गारी से जनशक्ति संसाधन की बर्बादी होती है। युवकों में निराशा और हताशा की भावना होती है। लोगों के पास अपने परिवार का भरण-पोषण करने के लिए पर्याप्त मुद्रा नहीं होती। शिक्षित लोगों के साथ, जो कार्य करने के इच्छुक हैं और सार्थक रोज़गार प्राप्त करने में समर्थ नहीं हैं, यह एक बड़ा सामाजिक अपव्यय है।

बेरोज़गारी से आर्थिक बोझ में वृद्धि होती है। कार्यरत जनसंख्या पर बेरोज़गारों की निर्भरता बढ़ती है। किसी व्यक्ति और साथ ही साथ समाज के जीवन की गुणवत्ता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। जब किसी परिवार को मात्र जीवन-निर्वाह स्तर पर रहना पड़ता है, तो उसके स्वास्थ्य स्तर में एक आम गिरावट आती है और स्कूल प्रणाली से अलगाव में वृद्धि होती है।

इसलिए, किसी अर्थव्यवस्था के समग्र विकास पर बेरोज़गारी का अहितकर प्रभाव पड़ता है। बेरोज़गारी में वृद्धि मंदीग्रस्त अर्थव्यवस्था का सूचक है। यह संसाधनों की बर्बादी भी करता है, जिन्हें उपयोगी ढंग से नियोजित किया जा सकता था। अगर लोगों को संसाधन के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सका, तो वे स्वाभाविक रूप से अर्थव्यवस्था के लिए दायित्व बन जाएँगे।

सांख्यिकीय रूप से भारत में बेरोज़गारी की दर निम्न है। बडी संख्या में निम्न आय और निम्न उत्पादकता वाले लोगों की गिनती नियोजित लोगों में की जाती है। वे पूरे वर्ष काम करते प्रतीत होते हैं, लेकिन उनकी क्षमता और आय के हिसाब से यह उनके लिए पर्याप्त नहीं है। वे काम तो कर रहे हैं, पर ऐसा प्रतीत होता है कि ये काम उन पर थोपे हुए हैं। इसलिए शायद वे अपनी पसंद का कोई अन्य काम करना पसंद कर सकते हैं। गरीब लोग बेकार नहीं बैठ सकते। वे किसी भी काम से जुड़ जाना चाहते हैं, चाहे उससे कितनी भी कमाई हो। अपनी इस कमाई से वे किसी तरह जीवन निर्वाह कर पाते हैं।

इसके अतिरिक्त, प्राथमिक क्षेत्रक में स्वरोज़गार एक विशेषता है। यद्यपि सभी लोगों की आवश्यकता नहीं होती है, फिर भी पूरा परिवार खेतों में काम करता है। इस तरह कृषि क्षेत्रक

चित्र 2.6 : क्या आपको स्मरण है कि जब आपने अपने जूते या चप्पल ठीक कराए थे, तो कितना भुगतान किया था?

में प्रच्छन्न बेरोज़गारी होती है। लेकिन, जो भी उत्पादन होता है उसमें पूरे परिवार की हिस्सेदारी होती। खेत के काम में साझेदारी और उत्पादित फसल में हिस्सेदारी की धारणा ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोज़गारी की कठिनाइयों में कमी लाती है। लेकिन, इससे परिवार की गरीबी कम नहीं होती और प्रत्येक परिवार से अधिशेष श्रमिक रोज़गार की तलाश में गाँवों से शहरों की ओर प्रवास करते हैं।

आइए, उपरोक्त तीनों क्षेत्रकों में रोज़गार के परिदृश्य की चर्चा करें। कृषि का सबसे अधिक अवशोषण करने वाला अर्थव्यवस्था का क्षेत्रक कृषि है। पिछले वर्षों में पूर्व चर्चित प्रच्छन्न बेरोज़गारी के कारण, कृषि पर जनसंख्या की निर्भरता में कुछ कमी आई है। कृषि अधिशेष श्रम का कुछ भाग द्वितीयक या तृतीयक क्षेत्रक में चला गया है। द्वितीयक क्षेत्रक में छोटे पैमाने पर होने वाले विनिर्माण में श्रम का सबसे अधिक अभिशोषण है। तृतीयक क्षेत्रक में जैव-प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी आदि सरीखी विभिन्न नयी सेवाएँ सामने आ रही हैं।

आइए, यह जानने के लिए एक कहानी पढ़ें कि कैसे लोग अपने गाँव की अर्थव्यवस्था के लिए परिसंपत्ति बन जाते हैं।

एक गाँव की कहानी

एक गाँव था, जिसमें अनेक परिवार रहते थे। प्रत्येक परिवार इतना उपजा लेता था कि उससे उसके सदस्य खा-पी सकें। परिवार के सदस्य अपने कपड़े बुनते, अपने बच्चों को पढ़ाते और इस तरह प्रत्येक परिवार अपनी आवश्यकताएँ स्वयं पूरी कर लेता था। इनमें से एक परिवार ने अपने एक बेटे को कृषि महाविद्यालय में भेजने का फैसला किया। लड़के को निकट के एक कृषि महाविद्यालय में प्रवेश मिल गया। कुछ समय पश्चात्, वह कृषि-इंजीनियरिंग की योग्यता प्राप्त कर गाँव वापस लौट आया। वह इतना सृजनात्मक निकला कि उसने एक उन्नत किस्म के हल का नमूना तैयार किया, जिससे गेहूँ की उपज में वृद्धि हो गई। इस तरह गाँव में ऐग्रो-इंजीनियरिंग का एक नया काम सृजित हुआ और वहीं उसकी पूर्ति हुई। गाँव के उस परिवार ने अपनी अधिशेष फसल निकट के गाँव में बेच दी। उन्हें इससे अच्छा लाभ हुआ, जिसे उन्होंने आपस में बाँट लिया। इस सफलता से प्रेरित होकर कुछ समय पश्चात् गाँव के सभी परिवारों ने एक बैठक की। वे अपने बच्चों के लिए भी बेहतर भविष्य चाह रहे थे। उन्होंने पंचायत से गाँव में एक स्कूल खोलने का अनुरोध किया। उन्होंने पंचायत को विश्वास दिलाया कि वे सभी अपने बच्चों को स्कूल में भेजेंगे। पंचायत ने सरकार की मदद से एक स्कूल खोल दिया। निकट के कस्बे से एक शिक्षक की नियुक्ति की गई। इस गाँव के सभी बच्चे स्कूल जाने लगे। कुछ समय पश्चात्, गाँव के एक परिवार ने अपनी एक लड़की को सिलाई का प्रशिक्षण दिलाया। वह अब गाँव के सभी लोगों के लिए कपड़े सीने लगी, क्योंकि अब सभी लोग अच्छे ढंग से सिले कपड़े पहनना चाहते थे। इस तरह, दर्ज़ी का एक नया काम सृजित हुआ। इसका एक और सकारात्मक प्रभाव हुआ। किसानों का कपड़े खरीदने के लिए दूर जाने में लगने वाला समय अब बचने लगा।

किसान खेतों में अधिक समय लगाने लगे थे, इसलिए उपज बढ़ गई। यह समृद्धि का प्रारंभ था। किसानों के पास उपभोग से अधिक वस्तुएँ थीं। अब वे अपने उत्पादन उन लोगों को बेच सकते थे जो उनके गाँव के बाज़ार में आते थे। समय के साथ वह गाँव, जहाँ प्रारंभ में किसी नए काम का औपचारिक रूप से कोई अवसर नहीं था–शिक्षक, दर्ज़ी, ऐग्रो-इंजीनियर और अन्य तरह के लोगों से परिपूर्ण हो गया। यह एक साधारण गाँव की कहानी थी, जहाँ मानव पूँजी के उठते स्तर ने उसे जटिल और आधुनिक आर्थिक क्रियाकलापों के स्थल के रूप में विकसित बनाया।

सारांश

आपने देखा कि शिक्षा और स्वास्थ्य के समान आगतें किस प्रकार लोगों को अर्थव्यवस्था के लिए परिसंपत्ति बनाने में सहायता करती हैं। इस अध्याय में अर्थव्यवस्था के तीनों क्षेत्रकों में होने वाली आर्थिक क्रियाओं के विषय में चर्चा की गई है। हमने बेरोज़गारी से जुड़ी समस्याओं के बारे में भी पढ़ा। अंततः अध्याय एक गाँव की कहानी के साथ समाप्त होता है जिसमें पहले कोई रोज़गार नहीं था, पर बाद में वहाँ रोज़गार के अनेक अवसर उत्पन्न हो गए।

अभ्यास

1. 'संसाधन के रूप में लोग' से आप क्या समझते हैं?
2. मानव संसाधन भूमि और भौतिक पूँजी जैसे अन्य संसाधनों से कैसे भिन्न है?
3. मानव पूँजी निर्माण में शिक्षा की क्या भूमिका है?
4. मानव पूँजी निर्माण में स्वास्थ्य की क्या भूमिका है?
5. किसी व्यक्ति के कामयाब जीवन में स्वास्थ्य की क्या भूमिका है?
6. प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रकों में किस तरह की विभिन्न आर्थिक क्रियाएँ संचालित की जाती हैं?
7. आर्थिक और गैर-आर्थिक क्रियाओं में क्या अंतर है?
8. महिलाएँ क्यों निम्न वेतन वाले कार्यों में नियोजित होती हैं?
9. 'बेरोज़गारी' शब्द की आप कैसे व्याख्या करेंगे?
10. प्रच्छन्न और मौसमी बेरोज़गारी में क्या अंतर है?
11. शिक्षित बेरोज़गारी भारत के लिए एक विशेष समस्या क्यों है?
12. आप के विचार से भारत किस क्षेत्रक में रोज़गार के सर्वाधिक अवसर सृजित कर सकता है?
13. क्या आप शिक्षा प्रणाली में शिक्षित बेरोज़गारों की समस्या दूर करने के लिए कुछ उपाय सुझा सकते हैं?
14. क्या आप कुछ ऐसे गाँवों की कल्पना कर सकते हैं जहाँ पहले रोज़गार का कोई अवसर नहीं था, लेकिन बाद में बहुतायत में हो गया?
15. किस पूँजी को आप सबसे अच्छा मानते हैं–भूमि, श्रम, भौतिक पूँजी और मानव पूँजी? क्यों?

संदर्भ

आर्थिक सर्वेक्षण 2004-05, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली।

दसवीं पंचवर्षीय योजना 2002-07 का मध्यावधि मूल्यांकन, भाग-2, योजना आयोग, नयी दिल्ली।

दसवीं पंचवर्षीय योजना 2002-07, योजना आयोग, नयी दिल्ली।

भारत दर्शन 2020, प्रतिवेदन, योजना आयोग, भारत सरकार, नयी दिल्ली।

गैरी, एस. बेकर, 1966, *ह्यूमन कैपीटल : ए थ्योरिटिकल एंड एंपिरिकल एनालिसिस विद स्पेशल रेफरेंस टू एजूकेशन*, जनरल सीरीज़, नंबर 80, नेशनल ब्यूरो ऑफ इकानामिक रिसर्च, न्यूयार्क।

थ्योडोर, डब्ल्यू. शुल्टज़, इंवैस्टमेंट इन ह्यूमन कैपीटल, *अमेरिकन इकानॉमिक रिव्यू*, मार्च 1961.

एन.सी.ई.आर.टी. 2016, *विद्यालयों के लिये अर्थशास्त्र का शब्दकोश (त्रिभाषी)* पृ॰ 62

3
अध्याय

0971CH03

निर्धनता : एक चुनौती

अवलोकन

इस अध्याय में निर्धनता के विषय में चर्चा की गई है, जो स्वतंत्र भारत के सम्मुख एक सर्वाधिक कठिन चुनौती है। उदाहरणों द्वारा इस बहुआयामी समस्या की चर्चा करने के पश्चात् यह अध्याय सामाजिक विज्ञानों में निर्धनता के प्रति दृष्टिकोण की भी चर्चा करता है। भारत तथा विश्व में निर्धनता की प्रवृत्तियों को निर्धनता रेखा की अवधारणा के माध्यम से समझाया गया है। निर्धनता के कारणों एवं सरकार द्वारा किए गए निर्धनता निवारण के उपायों की भी चर्चा की गई है। निर्धनता की आधिकारिक अवधारणा को मानव निर्धनता तक विस्तृत करके अध्याय का समापन किया गया है।

परिचय

अपने दैनिक जीवन में हम अनेक ऐसे लोगों के संपर्क में आते हैं, जिनके बारे में हम सोचते हैं कि वे निर्धन हैं। वे गाँवों के भूमिहीन श्रमिक भी हो सकते हैं और शहरों की भीड़ भरी झुग्गियों में रहने वाले लोग भी। वे निर्माण-स्थलों के दैनिक वेतनभोगी श्रमिक भी हो सकते हैं और ढाबों में काम करने वाले बाल-श्रमिक भी। वे चिथड़ों में बच्चे उठाए भिखारी भी हो सकते हैं। हम अपने चारों ओर निर्धनता देखते हैं। वास्तव में, देश का हर चौथा व्यक्ति निर्धन है। इसका अर्थ यह है कि वर्ष 2011-12 में भारत में मोटे तौर पर 270 मिलीयन या 27 करोड़ लोग निर्धनता में जीते हैं। इसका यह भी अर्थ है कि विश्व में भारत में सबसे अधिक निर्धनों का संकेंद्रण है। यह इस चुनौती की गंभीरता को दर्शाता है।

निर्धनता के दो विशिष्ट मामले

शहरी निर्धनता

तैंतीस वर्षीय रामसरन झारखंड में राँची के निकट गेहूँ के आटे की एक मिल में दैनिक श्रमिक के रूप में काम करता है। जब कभी उसे रोज़गार मिलता है, तो वह एक महीने में लगभग 1500 रुपये कमा लेता है। यह छह सदस्यों के परिवार को चलाने के लिए पर्याप्त नहीं है, जिसमें उसकी पत्नी और 6 माह से 12 वर्ष तक की आयु के चार बच्चे शामिल हैं। उसे रामगढ़ के समीप

चित्र 3.1 : रामसरन की कहानी

गाँव में रह रहे अपने बूढ़े माता-पिता के लिए भी पैसा भेजना पड़ता है। उसके भूमिहीन श्रमिक पिता अपने जीवन निर्वाह के लिए रामसरन और हज़ारीबाग में रह रहे उसके भाई पर निर्भर हैं। रामसरन शहर के बाहरी क्षेत्र में स्थित भीड़ भरी बस्ती में किराये पर एक कमरे के मकान में रहता है। यह ईंटों और मिट्टी के खपड़ों से बनी एक कामचलाऊ झोंपड़ी है। उसकी पत्नी संता देवी कुछ घरों में अंशकालिक नौकरानी का काम करती है तथा 800 रुपये और कमा लेती है। वे दिन में दो बार दाल और चावल का अल्प-भोजन जुटा लेते हैं, पर यह उन सबके लिए कभी पर्याप्त नहीं होता। उसका बड़ा बेटा परिवार की आय में वृद्धि के लिए चाय की एक दुकान में एक सहायक का काम करके 300 रुपये और कमा लेता है। उसकी 10 साल की बेटी छोटे बच्चों की देखभाल करती है। कोई भी बच्चा स्कूल नहीं जाता। उनमें से प्रत्येक के पास दो जोड़े फटे-पुराने कपड़े ही हैं। नए कपड़े तभी खरीदे जाते हैं, जब पुराने बिलकुल पहनने योग्य नहीं रहते। जूते पहनना विलासिता है। छोटे बच्चे अल्प-पोषित रहते हैं। जब वे बीमार होते हैं, तो उन्हें चिकित्सा की कोई सुविधा नहीं मिलती।

ग्रामीण निर्धनता

लक्खा सिंह उत्तर प्रदेश में मेरठ के पास एक गाँव का रहने वाला है। उसके परिवार के पास कोई भूमि नहीं है, इसलिए वह बड़े किसानों के लिए छोटे-मोटे काम करता है। काम अनियमित होता है और आय भी वैसी ही होती है। कई बार उसे पूरे दिन की मेहनत के बदले 50 रुपये ही मिलते हैं। लेकिन प्रायः खेतों में पूरे दिन मेहनत करने के बाद उसे वस्तु के रूप में कुछ किलोग्राम गेहूँ, दाल या थोड़ी सी सब्ज़ी ही मिल पाती है। आठ सदस्यों का परिवार हमेशा दो वक्त का भोजन भी नहीं जुटा पाता। लक्खा सिंह गाँव के बाहर एक कच्ची झोंपड़ी में रहता है। परिवार की महिलाएँ पूरा दिन खेतों में चारा काटने और खेतों से जलाने की लकड़ियाँ बीनने में ही गुज़ार देती हैं। उसके पिता की, जो तपेदिक के मरीज़ थे, चिकित्सा के अभाव में दो वर्ष पूर्व मृत्यु हो गई। उसकी माँ अब उसी बीमारी से ग्रस्त है और उसका जीवन भी धीरे-धीरे क्षीण हो रहा है। यद्यपि गाँव में एक प्राथमिक विद्यालय है, लक्खा वहाँ भी नहीं गया। उसे 10 वर्ष की उम्र से ही कमाना शुरू करना पड़ा। नए कपड़े खरीदना कुछ वर्षों में ही संभव हो पाता है। यहाँ तक कि परिवार के लिए साबुन और तेल भी एक विलासिता है।

चित्र 3.2 : लक्खा सिंह की कहानी

निर्धनता के उपरोक्त मामलों का अध्ययन करें और निर्धनता से संबद्ध निम्नलिखित मुद्दों पर चर्चा करें :

- भूमिहीनता
- बेरोज़गारी
- परिवार का आकार
- निरक्षरता
- खराब स्वास्थ्य / कुपोषण
- बाल-श्रम
- असहायता

ऊपर के दोनों विशिष्ट उदाहरण निर्धनता के अनेक आयामों को दर्शाते हैं। वे दर्शाते हैं कि निर्धनता का अर्थ भुखमरी और आश्रय का न होना है। यह एक ऐसी स्थिति भी है, जब माता-पिता अपने बच्चों को विद्यालय नहीं भेज पाते या कोई बीमार आदमी इलाज नहीं करवा पाता। निर्धनता का अर्थ स्वच्छ जल और सफ़ाई सुविधाओं का अभाव भी है। इसका अर्थ नियमित रोज़गार की कमी भी है तथा न्यूनतम शालीनता स्तर का अभाव भी है। अंततः इसका अर्थ है असहायता की भावना के साथ जीना। निर्धन लोग ऐसी स्थिति में रहते हैं जिसमें उनके साथ खेतों, कारखानों, सरकारी कार्यालयों, अस्पतालों, रेलवे स्टेशनों और लगभग सभी स्थानों पर दुर्व्यवहार होता है। स्पष्ट है कि कोई भी निर्धनता में जीना नहीं चाहता।

अपने करोड़ों लोगों को दयनीय निर्धनता से बाहर निकालना स्वतंत्र भारत की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक रही है। महात्मा गांधी हमेशा इस पर बल दिया करते थे कि भारत सही अर्थों में तभी स्वतंत्र होगा, जब यहाँ का सबसे निर्धन व्यक्ति भी मानवीय व्यथा से मुक्त होगा।

सामाजिक वैज्ञानिकों की दृष्टि में निर्धनता

चूंकि निर्धनता के अनेक पहलू हैं, सामाजिक वैज्ञानिक उसे अनेक सूचकों के माध्यम से देखते हैं। सामान्यतया प्रयोग किए जाने वाले सूचक वे हैं, जो आय और उपभोग के स्तर से संबंधित हैं, लेकिन अब निर्धनता को निरक्षरता स्तर, कुपोषण के कारण रोग प्रतिरोधी क्षमता की कमी, स्वास्थ्य सेवाओं की कमी, रोज़गार के अवसरों की कमी, सुरक्षित पेयजल एवं स्वच्छता तक पहुँच की कमी आदि जैसे अन्य सामाजिक सूचकों के माध्यम से भी देखा जाता है। सामाजिक अपवर्जन और असुरक्षा पर आधारित निर्धनता का विश्लेषण अब बहुत सामान्य होता जा रहा है (देखें बाक्स)।

सामाजिक अपवर्जन

इस अवधारणा के अनुसार निर्धनता को इस संदर्भ में देखा जाना चाहिए कि निर्धनों को बेहतर माहौल और अधिक अच्छे वातावरण में रहने वाले संपन्न लोगों की सामाजिक समता से अपवर्जित रहकर केवल निकृष्ट वातावरण में दूसरे निर्धनों के साथ रहना पड़ता है। सामान्य अर्थ में सामाजिक अपवर्जन निर्धनता का एक कारण और परिणाम दोनों हो सकता है। मोटे तौर पर यह एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति या समूह उन सुविधाओं, लाभों और अवसरों से अपवर्जित रहते हैं, जिनका उपभोग दूसरे (उनसे 'अधिक अच्छे') करते हैं। इसका एक विशिष्ट उदाहरण भारत में जाति-व्यवस्था की कार्य-शैली है, जिसमें कुछ जातियों के लोगों को समान अवसरों से अपवर्जित रखा जाता है। इस प्रकार, सामाजिक अपवर्जन लोगों की आय ही बहुत कम नहीं करता बल्कि यह इससे भी कहीं अधिक क्षति पहुँचा सकता है।

असुरक्षा

निर्धनता के प्रति असुरक्षा एक माप है जो कुछ विशेष समुदायों (जैसे किसी पिछड़ी जाति के सदस्य) या व्यक्तियों (जैसे कोई विधवा या शारीरिक रूप से विकलांग व्यक्ति) के भावी वर्षों में निर्धन होने या निर्धन बने रहने की अधिक संभावना जताता है। असुरक्षा का निर्धारण परिसंपत्तियों, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोज़गार के अवसरों के रूप में जीविका खोजने के लिए विभिन्न समुदायों के पास उपलब्ध विकल्पों से होता है। इसके अलावा, इसका विश्लेषण प्राकृतिक आपदाओं (भूकंप, सुनामी), आतंकवाद आदि मामलों में इन समूहों के समक्ष विद्यमान बड़े जोखिमों के आधार पर किया जाता है। अतिरिक्त विश्लेषण इन जोखिमों से निपटने की उनकी सामाजिक और आर्थिक क्षमता के आधार पर किया जाता है। वास्तव में, जब सभी लोगों के लिए बुरा समय आता है, चाहे कोई बाढ़ हो या भूकंप या फिर नौकरियों की उपलब्धता में कमी, दूसरे लोगों की तुलना में अधिक प्रभावित होने की बड़ी संभावना का निरूपण ही असुरक्षा है।

निर्धनता रेखा

निर्धनता पर चर्चा के केंद्र में सामान्यतया 'निर्धनता रेखा' की अवधारणा होती है। निर्धनता के आकलन की एक सर्वमान्य सामान्य विधि आय अथवा उपभोग स्तरों पर आधारित है। किसी

व्यक्ति को निर्धन माना जाता है, यदि उसकी आय या उपभोग स्तर किसी ऐसे 'न्यूनतम स्तर' से नीचे गिर जाए जो मूल आवश्यकताओं के एक दिए हुए समूह को पूर्ण करने के लिए आवश्यक है। मूल आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए आवश्यक वस्तुएँ विभिन्न कालों एवं विभिन्न देशों में भिन्न हैं। अत: काल एवं स्थान के अनुसार निर्धनता रेखा भिन्न हो सकती है। प्रत्येक देश एक काल्पनिक रेखा का प्रयोग करता है, जिसे विकास एवं उसके स्वीकृत न्यूनतम सामाजिक मानदंडों के वर्तमान स्तर के अनुरूप माना जाता है। उदाहरण के लिए, अमेरिका में उस आदमी को निर्धन माना जाता है जिसके पास कार नहीं है, जबकि भारत में अब भी कार रखना विलासिता मानी जाती है।

भारत में निर्धनता रेखा का निर्धारण करते समय जीवन निर्वाह के लिए खाद्य आवश्यकता, कपड़ों, जूतों, ईंधन और प्रकाश, शैक्षिक एवं चिकित्सा संबंधी आवश्यकताओं आदि पर विचार किया जाता है। इन भौतिक मात्राओं को रुपयों में उनकी कीमतों से गुणा कर दिया जाता है। निर्धनता रेखा का आकलन करते समय खाद्य आवश्यकता के लिए वर्तमान सूत्र वांछित कैलोरी आवश्यकताओं पर आधारित है। खाद्य वस्तुएँ जैसे–अनाज, दालें, सब्ज़ियाँ, दूध, तेल, चीनी आदि मिलकर इस आवश्यक कैलोरी की पूर्ति करती हैं। आयु, लिंग, काम करने की प्रकृति आदि के आधार पर कैलोरी आवश्यकताएँ बदलती रहती हैं। भारत में स्वीकृत कैलोरी आवश्यकता ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन एवं नगरीय क्षेत्रों में 2100 कैलोरी प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन है। चूँकि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोग अधिक शारीरिक कार्य करते हैं, अत: ग्रामीण क्षेत्रों में कैलोरी आवश्यकता शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक मानी गई है। अनाज आदि के रूप में इन कैलोरी आवश्यकताओं को खरीदने के लिए प्रतिव्यक्ति मौद्रिक व्यय को, कीमतों में वृद्धि को ध्यान में रखते हुए, समय-समय पर संशोधित किया जाता है।

इन परिकल्पनाओं के आधार पर वर्ष 2011-12 में किसी व्यक्ति के लिए निर्धनता रेखा का निर्धारण ग्रामीण क्षेत्रों में 816 रुपये प्रतिमाह और शहरी क्षेत्रों में 1000 रुपये प्रतिमाह किया गया था। कम कैलोरी की आवश्यकता के बावजूद शहरी क्षेत्रों के लिए उच्च राशि निश्चित की गई, क्योंकि शहरी क्षेत्रों में अनेक आवश्यक वस्तुओं की कीमतें अधिक होती हैं। इस प्रकार, वर्ष 2011-12 में ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाला पाँच सदस्यों का परिवार निर्धनता रेखा के नीचे होगा, यदि उसकी आय लगभग 4,080 रुपये प्रतिमाह से कम है। इसी तरह के परिवार को शहरी क्षेत्रों में अपनी मूल आवश्यकताएँ पूरा करने के लिए कम से कम 5,000 रुपये प्रतिमाह की आवश्यकता होगी। निर्धनता रेखा का आकलन समय-समय पर (सामान्यत: हर पाँच वर्ष पर) प्रतिदर्श सर्वेक्षण के माध्यम से किया जाता है। यह सर्वेक्षण **राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन** अर्थात् नेशनल सैंपल सर्वे ऑर्गनाइज़ेशन (एन.एस.एस.ओ.) द्वारा कराए जाते हैं, तथापि विकासशील देशों के बीच तुलना करने के लिए विश्व बैंक जैसे अनेक अंतर्राष्ट्रीय संगठन निर्धनता रेखा के लिए एक समान मानक का प्रयोग करते हैं, जैसे $1.9 (2011 पी.पी.पी.) प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन के समतुल्य न्यूनतम उपलब्धता के आधार पर।

आइए चर्चा करें

- विभिन्न देश विभिन्न निर्धनता रेखाओं का प्रयोग क्यों करते हैं?
- आपके अनुसार आपके क्षेत्र में 'न्यूनतम आवश्यक स्तर' क्या होगा?

निर्धनता के अनुमान

तालिका 3.1 से यह स्पष्ट है कि भारत में निर्धनता अनुपात में वर्ष 1993-94 में लगभग 45 प्रतिशत से वर्ष 2004-05 में 37.2 प्रतिशत तक महत्त्वपूर्ण गिरावट आई है। वर्ष 2011-12 में निर्धनता रेखा के नीचे के निर्धनों का अनुपात और भी गिर कर 22 प्रतिशत पर आ गया। यदि यही प्रवृत्ति रही तो अगले कुछ वर्षों में निर्धनता रेखा से नीचे के लोगों की संख्या 20 प्रतिशत से भी नीचे आ जाएगी। यद्यपि निर्धनता रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का प्रतिशत पूर्व के दो दशकों (1973-93) में गिरा है, निर्धन लोगों की संख्या वर्ष 2004-05 में 407 मिलियन से गिरकर 270 मिलियन वर्ष 2011-12 जिसमें औसतन गिरावट 2.2 प्रतिशत वर्ष 2004-05 से 2011-12 के बीच में हुई है।

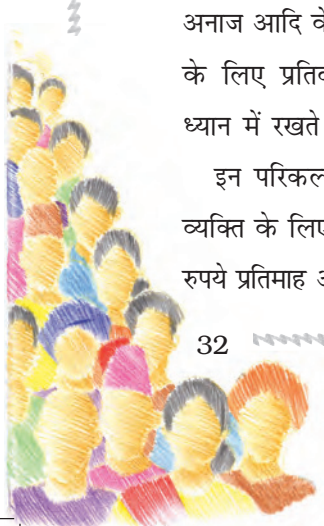

तालिका 3.1 : भारत में निर्धनता के अनुमान (तेंदुलकर कार्यप्रणाली)

	निर्धनता अनुपात (प्रतिशत)			निर्धनों की संख्या (करोड़)		
वर्ष	ग्रामीण	शहरी	योग	ग्रामीण	शहरी	संयुक्त योग
1993-94	507	32	45	329	75	404
2004-05	42	26	37	326	81	407
2009-10	34	21	30	278	76	355
2011-12	26	14	22	217	53	270

***स्रोत :** आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18*

आइए चर्चा करें

तालिका 3.1 का अध्ययन कीजिए और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

- 1993-94 और 2004-05 के मध्य निर्धनता अनुपात में गिरावट आने के बावजूद निर्धनों की संख्या 407 करोड़ के लगभग क्यों बनी रही?
- क्या भारत में निर्धनता में कमी की गतिकि ग्रामीण और शहरी भारत में समान है?

असुरक्षित समूह

निर्धनता रेखा से नीचे के लोगों का अनुपात भी भारत में सभी सामाजिक समूहों और आर्थिक वर्गों में एक समान नहीं है। जो सामाजिक समूह निर्धनता के प्रति सर्वाधिक असुरक्षित हैं, वे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के परिवार हैं। इसी प्रकार, आर्थिक समूहों में सर्वाधिक असुरक्षित समूह, ग्रामीण कृषि श्रमिक परिवार और नगरीय अनियत मज़दूर परिवार हैं। निम्नलिखित आरेख 3.1 इन सभी समूहों में निर्धन लोगों के प्रतिशत को दर्शाता है। यद्यपि निर्धनता रेखा के नीचे के लोगों का औसत भारत में सभी समूहों के लिए 22 है, अनुसूचित जनजातियों के 100 में से 43 लोग अपनी मूल आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ हैं। इसी तरह नगरीय क्षेत्रों में 34 प्रतिशत अनियत मज़दूर निर्धनता रेखा के नीचे हैं। लगभग 34 प्रतिशत अनियत कृषि श्रमिक ग्रामीण क्षेत्र में और 29 प्रतिशत अनुसूचित जातियाँ भी निर्धन हैं। अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के सामाजिक रूप से सुविधावंचित सामाजिक समूहों

आरेख 3.1 : भारत में निर्धनता, 2000 – सर्वाधिक असुरक्षित समूह

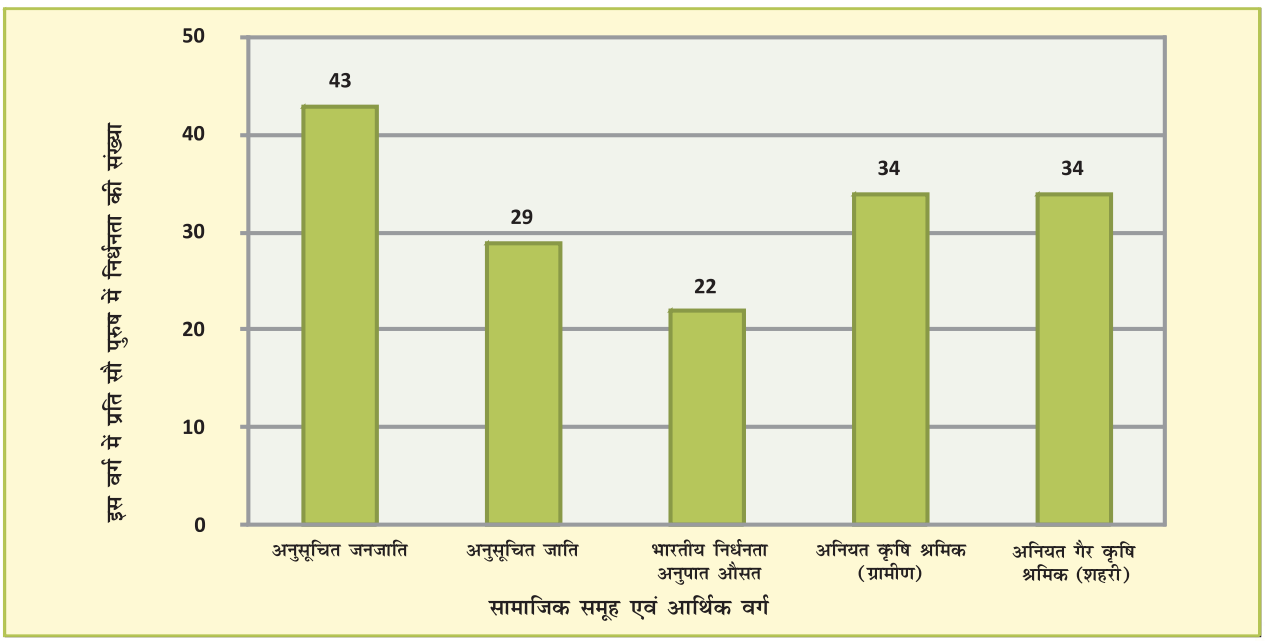

***स्रोत:** (www.worldbank.org/2016/India-s-poverty-profile)*

चित्र 3.3 : शिवरमन की कहानी

का भूमिहीन अनियत दिहाड़ी श्रमिक होना उनकी दोहरी असुविधा की समस्या की गंभीरता को दिखाता है। हाल के कुछ अध्ययनों ने दर्शाया है कि 1990 के दशक के दौरान अनुसूचित जनजाति परिवारों को छोड़ कर अन्य सभी तीनों समूहों (अनुसूचित जाति, ग्रामीण कृषि श्रमिक और शहरी अनियमित मज़दूर परिवार) में निर्धनता में कमी आई है।

इन सामाजिक समूहों के अतिरिक्त परिवारों में भी आय असमानता है। निर्धन परिवारों में सभी लोगों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, लेकिन कुछ लोग दूसरों से अधिक कठिनाइयों का सामना करते हैं। कुछ संदर्भों में महिलाओं, वृद्ध लोगों और बच्चियों को भी ढंग से परिवार के उपलब्ध संसाधनों तक पहुँच से वंचित किया जाता है।

शिवरमन की कहानी

शिवरमन तमिलनाडु में करूर कस्बे के निकट एक छोटे से गाँव में रहता है। करूर हथकरघा और बिजलीकरघा के अपने कपड़ों के लिए प्रसिद्ध है। गाँव में 100 परिवार रहते हैं। शिवरमन आर्युथांथियार (मोची) जाति का है और अब वह 160 रुपया प्रतिदिन के हिसाब से एक खेतिहर मज़दूर के रूप में काम करता है। लेकिन उसे यह काम वर्ष में मात्र पाँच या छह महीने मिलता है। अन्य समय में वह गाँव में दूसरे छोटे-मोटे काम करता है। उसकी पत्नी शशिकला भी उसके साथ काम करती है। लेकिन इन दिनों उसे कभी-कभी ही काम मिल पाता है। यदि मिलता भी है तो उसी काम के लिए जो शिवरमन करता है, उसे 100 रुपये प्रतिदिन मिलता है। परिवार में आठ सदस्य हैं। शिवरमन की 65 वर्ष की विधवा माँ

बीमार है और प्रतिदिन के कामों में उसे सहायता की आवश्यकता पड़ती है। उसकी 25 वर्ष की एक अविवाहित बहन है और उसके अपने चार बच्चे हैं जिनकी आयु 1 वर्ष से 16 वर्ष के बीच है। उनमें से तीन लड़कियाँ हैं और सबसे छोटा बेटा है। कोई भी लड़की विद्यालय नहीं जाती। लड़कियों के लिए विद्यालय की पुस्तकें और अन्य वस्तुएँ खरीदना विलासिता है और उसके बस से बाहर है। फिर एक दिन उनकी शादी भी करनी है, इसलिए वह अभी उनकी शिक्षा पर खर्च नहीं करना चाहता। उसकी माँ की अब जीने की कोई इच्छा नहीं है और वह मृत्यु की प्रतीक्षा कर रही है। उसकी बहन और सबसे बड़ी लड़की घर का काम करती है। शिवरमन अपने बेटे को बड़ा होने पर विद्यालय भेजना चाहता है। उसकी अविवाहित बहन की उसकी पत्नी के साथ नहीं बनती। शशिकला उसे एक बोझ समझती है, लेकिन शिवरमन धन की कमी के कारण उसके लिए कोई योग्य वर नहीं ढूँढ़ पा रहा है। यद्यपि उसके परिवार को दो जून की रोटी का प्रबंध करना कठिन हो रहा है, शिवरमन मात्र अपने बेटे के लिए कभी-कभी दूध खरीद लेता है।

आइए चर्चा करें

अपने आस-पास के कुछ निर्धन परिवारों का अवलोकन करें और यह पता लगाने का प्रयास करें कि :

- वे किस सामाजिक और आर्थिक समूह से संबद्ध हैं?
- परिवार में कमाने वाले सदस्य कौन हैं?
- परिवार में वृद्धों की स्थिति क्या है?
- क्या सभी बच्चे (लड़के और लड़कियाँ) विद्यालय जाते हैं?

अंतर्राज्यीय असमानताएँ

भारत में निर्धनता का एक और पहलू या आयाम है। प्रत्येक राज्य में निर्धन लोगों का अनुपात एक समान नहीं है। यद्यपि 1970 के दशक के प्रारंभ से राज्य स्तरीय निर्धनता में सुदीर्घकालिक कमी हुई है, निर्धनता कम करने में सफलता की दर विभिन्न राज्यों में अलग-अलग है। वर्ष 2011-12 भारत में निर्धनता अनुपात 22 प्रतिशत है। कुछ राज्य जैसे मध्य प्रदेश, असम, उत्तर प्रदेश, बिहार एवं ओडिशा में निर्धनता अनुपात राष्ट्रीय अनुपात से ज्यादा है। जैसा कि आरेख 3.2 दर्शाता है, बिहार और ओडिशा क्रमशः 33.7 और 32.6 प्रतिशत निर्धनता औसत के साथ दो सर्वाधिक निर्धन राज्य बने हुए हैं। ओडिशा, मध्य प्रदेश, बिहार और उत्तर प्रदेश में ग्रामीण निर्धनता के साथ नगरीय निर्धनता भी अधिक है।

इसकी तुलना में केरल, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात और पश्चिम बंगाल में निर्धनता में उल्लेखनीय गिरावट आई है। पंजाब और हरियाणा जैसे राज्य उच्च कृषि वृद्धि दर से निर्धनता कम करने में पारंपरिक रूप से सफल रहे हैं। केरल ने मानव संसाधन विकास पर अधिक ध्यान दिया है। पश्चिम बंगाल में भूमि सुधार उपायों से निर्धनता कम करने में सहायता मिली है। आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में अनाज का सार्वजनिक वितरण इसमें सुधार का कारण हो सकता है।

वैश्विक निर्धनता परिदृश्य

विभिन्न देशों में अत्यंत आर्थिक निर्धनता (विश्व बैंक की परिभाषा के अनुसार प्रतिदिन $ 1.9 से कम पर जीवन निर्वाह करना) में रहने वाले लोगों का अनुपात 1990 के 36 प्रतिशत से गिर कर 2015 में 10 प्रतिशत हो गया है। यद्यपि वैश्विक निर्धनता में उल्लेखनीय गिरावट आई है, लेकिन इसमें बृहत क्षेत्रीय भिन्नताएँ पाई जाती हैं। तीव्र आर्थिक प्रगति और मानव संसाधन विकास में बृहत निवेश के कारण चीन और दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में निर्धनता में विशेष कमी आई है। चीन में निर्धनों की संख्या 1981 के 88.3 प्रतिशत से घट कर 2008 में 14.7 प्रतिशत और वर्ष 2015 में 0.7 प्रतिशत रह गई है। दक्षिण एशिया के देशों (भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, नेपाल, बाँग्ला देश, भूटान) में निर्धनों की संख्या में गिरावट इतनी ही तीव्र रही है और 2005 में 34 प्रतिशत से गिरकर 2013 में 16.2 प्रतिशत हो गई है। निर्धनों के प्रतिशत में गिरावट के साथ ही निर्धनों की संख्या में भी कमी आई, जो 2005 में 510.4 मिलीयन से घट कर 2013 में 274.5 मिलीयन रह गई है। भिन्न निर्धनता रेखा परिभाषा के कारण भारत में भी निर्धनता राष्ट्रीय अनुमान से अधिक है।

आरेख 3.2 : *भारत के चुनिंदा राज्यों में निर्धनता अनुपात, (2011 जनगणना के अनुसार)*

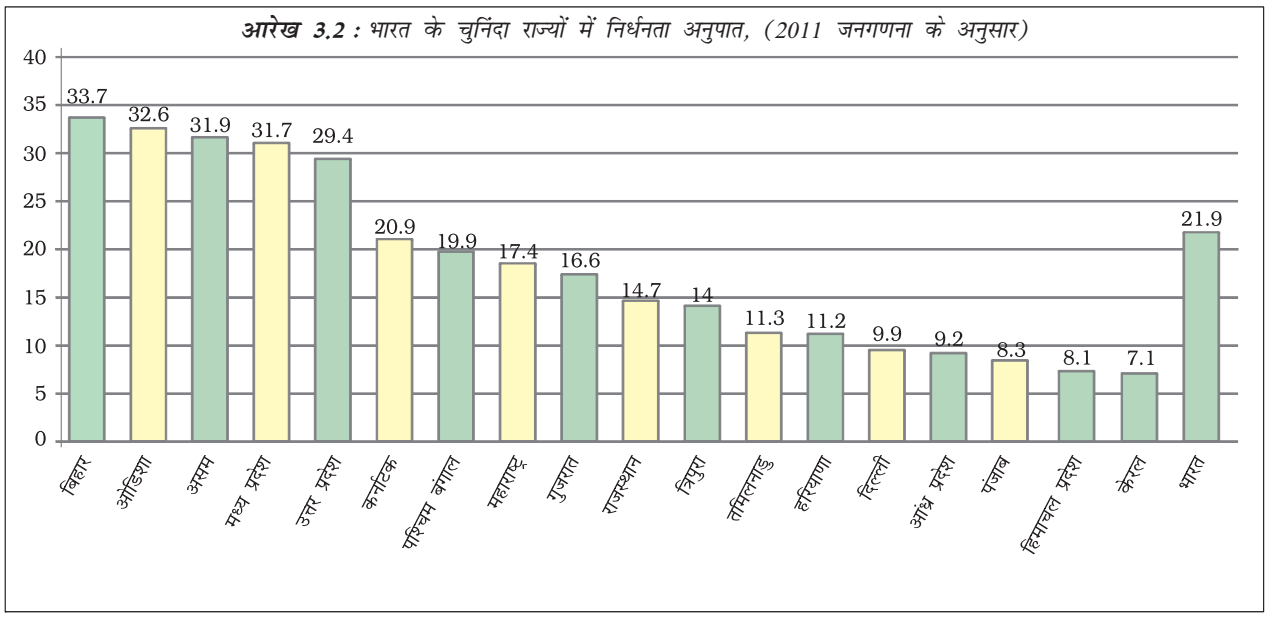

स्रोत : *आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18.*

आइए चर्चा करें

आरेख का अध्ययन कर निम्नलिखित कार्य करें :

- तीन राज्यों की पहचान करें जहाँ निर्धनता अनुपात सर्वाधिक है।
- तीन राज्यों की पहचान करें जहाँ निर्धनता अनुपात सबसे कम है।

सब-सहारा अफ्रीका में निर्धनता वास्तव में 2005 के 51 प्रतिशत से घटकर 2015 में 41 प्रतिशत हो गई है (आरेख 3.3 देखें)। लैटिन अमेरिका में निर्धनता का अनुपात वही रहा है। यहाँ पर निर्धनता रेखा 2005 में 10 प्रतिशत से गिर कर 2015 में 4 प्रतिशत रह गई है। (देखें आरेख 3.3) रूस जैसे पूर्व समाजवादी देशों में भी निर्धनता पुन: व्याप्त हो गई, जहाँ पहले आधिकारिक रूप से कोई निर्धनता थी ही नहीं। तालिका 3.2 अंतर्राष्ट्रीय निर्धनता रेखा (अर्थात $ 1.9 डालर प्रतिदिन से नीचे की जनसंख्या) की परिभाषा के अनुसार विभिन्न देशों में निर्धनता के नीचे रहने वाले लोगों का अनुपात दर्शाती है। संयुक्त राष्ट्र के नये सतत विकास के लक्ष्य को 2030 तक सभी प्रकार की गरीबी खत्म करने का प्रस्ताव है।

आइए चर्चा करें

आरेख 3.4 का अध्ययन कर निम्नलिखित कार्य करें :

- विश्व के उन क्षेत्रों की पहचान करें जहाँ निर्धनता अनुपात में गिरावट आई है।
- विश्व के उस क्षेत्र की पहचान करें जहाँ निर्धनों की संख्या सर्वाधिक है।

तालिका 3.2 : *निर्धनता हैडकांउट अनुपात : कुछ चुनिंदा देशों के बीच तुलना*

देश	प्रतिदिन $ 1.9 से कम पाने वालों की संख्या
1. नाइजीरिया	53.5 (2009)
2. बाँग्लादेश	14.8 (2016)
3. भारत	21.2 (2011)
4. पाकिस्तान	4.0 (2015)
5. चीन	0.7 (2015)
6. ब्राज़ील	3.4 (2015)
7. इंडोनेशिया	5.7 (2017)
8. श्रीलंका	0.7 (2016)

स्रोत : *विश्व बैंक के आँकड़े*

आरेख 3.3 : *प्रतिदिन $ 1.9 पर जीवनयापन करने वाले लोग (2005-2015)*

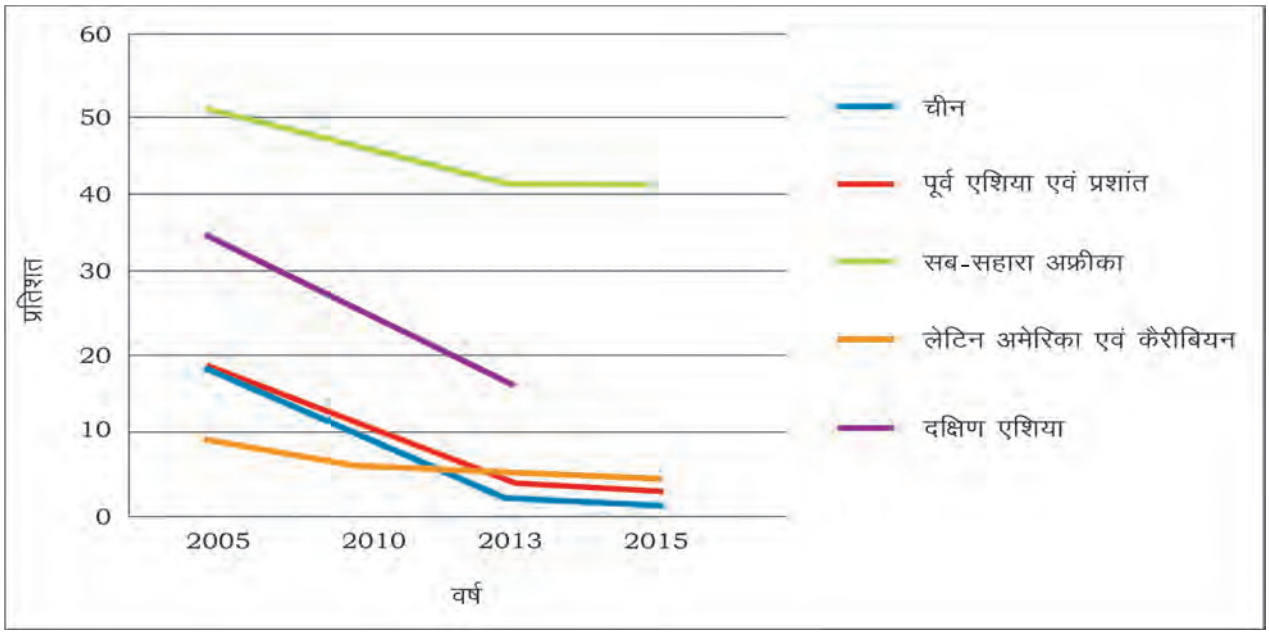

स्रोत : *विश्व बैंक के आँकड़े*

आरेख 3.4 : *क्षेत्रानुसार निर्धनों की संख्या ($ 1.90 प्रतिदिन) मीलियन*

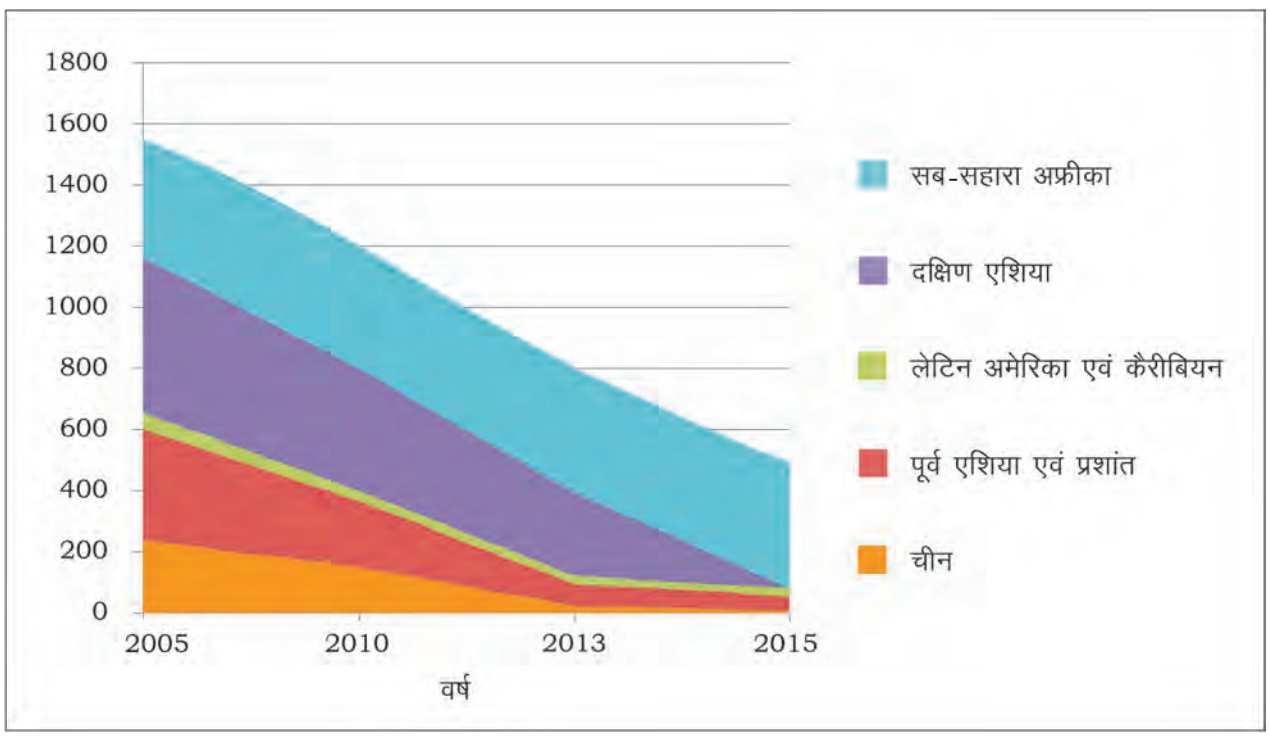

स्रोत : *विश्व बैंक के आँकड़े*
(http://databank.worldbank.org/data/reports.aspx?source=poverty-and-equity-database)

निर्धनता के कारण

भारत में व्यापक निर्धनता के अनेक कारण हैं। एक ऐतिहासिक कारण ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन के दौरान आर्थिक विकास का निम्न स्तर है। औपनिवेशिक सरकार की नीतियों ने पारंपरिक हस्तशिल्पकारी को नष्ट कर दिया और वस्त्र जैसे उद्योगों के विकास को हतोत्साहित किया। विकास की धीमी दर 1980 के दशक तक जारी रही। इसके परिणामस्वरूप रोज़गार के अवसर घटे और आय की वृद्धि दर गिरी। इसके साथ-साथ जनसंख्या में उच्च दर से वृद्धि हुई। इन दोनों ने प्रतिव्यक्ति आय की संवृद्धि दर को बहुत कम कर दिया। आर्थिक प्रगति को बढ़ावा और जनसंख्या नियंत्रण, दोनों मोर्चों पर असफलता के कारण निर्धनता का चक्र बना रहा।

सिंचाई और हरित क्रांति के प्रसार से कृषि क्षेत्रक में रोज़गार के अनेक अवसर सृजित हुए। लेकिन इनका प्रभाव भारत के कुछ भागों तक ही सीमित रहा। सार्वजनिक और निजी, दोनों क्षेत्रकों ने कुछ रोज़गार उपलब्ध कराए। लेकिन ये रोज़गार तलाश करने वाले सभी लोगों के लिए पर्याप्त नहीं हो सके। शहरों में उपयुक्त नौकरी पाने में असफल अनेक लोग रिक्शा चालक, विक्रेता, गृह निर्माण श्रमिक, घरेलू नौकर आदि के रूप में कार्य करने लगे। अनियमित और कम आय के कारण ये लोग महँगे मकानों में नहीं रह सकते थे। वे शहरों से बाहर झुग्गियों में रहने लगे और निर्धनता की समस्याएँ जो मुख्य रूप से एक ग्रामीण परिघटना थी, नगरीय क्षेत्र की भी एक विशषेता बन गई।

उच्च निर्धनता दर की एक और विशेषता आय असमानता रही है। इसका एक प्रमुख कारण भूमि और अन्य संसाधनों का असमान वितरण है। अनेक नीतियों के बावजूद, हम किसी सार्थक ढंग से इस मुद्दे से नहीं निपट सके हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में परिसंपत्तियों के पुनर्वितरण पर लक्षित भूमि सुधार जैसी प्रमुख नीति-पहल को ज़्यादातर राज्य सरकारों ने प्रभावी ढंग से कार्यान्वित नहीं किया। चूँकि भारत में भूमि-संसाधनों की कमी निर्धनता का एक प्रमुख कारण रही है, इस नीति का उचित कार्यान्वयन करोड़ों ग्रामीण निर्धनों का जीवन सुधार सकता था। अनेक अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक कारक भी निर्धनता के लिए उत्तरदायी हैं। अतिनिर्धनों सहित भारत में लोग सामाजिक दायित्वों और धार्मिक अनुष्ठानों के आयोजन में बहुत पैसा खर्च करते हैं। छोटे किसानों को बीज, उर्वरक, कीटनाशकों जैसे कृषि आगतों की खरीदारी के लिए धनराशि की ज़रूरत होती है। चूँकि निर्धन कठिनाई से ही कोई बचत कर पाते हैं, वे इनके लिए कर्ज़ लेते हैं। निर्धनता के चलते पुनः भुगतान करने में असमर्थता के कारण वे ऋणग्रस्त हो जाते हैं। अतः अत्यधिक ऋणग्रस्तता निर्धनता का कारण और परिणाम दोनों है।

निर्धनता-निरोधी उपाय

निर्धनता उन्मूलन भारत की विकास रणनीति का एक प्रमुख उद्देश्य रहा है। सरकार की वर्तमान निर्धनता-निरोधी रणनीति मोटे तौर पर दो कारकों (1) **आर्थिक संवृद्धि** को प्रोत्साहन और (2) **लक्षित निर्धनता-निरोधी** कार्यक्रमों पर निर्भर है।

1980 के दशक के आरंभ तक समाप्त हुए 30 वर्ष की अवधि के दौरान प्रतिव्यक्ति आय में कोई वृद्धि नहीं हुई और निर्धनता में भी अधिक कमी नहीं आई। 1950 के दशक के आरंभ में आधिकारिक निर्धनता अनुमान 45 प्रतिशत का था और 1980 के दशक के आरंभ में भी वही बना रहा। 1980 के दशक से भारत की आर्थिक संवृद्धि-दर विश्व में सबसे अधिक रही। संवृद्धि-दर 1970 के दशक के करीब 3.5 प्रतिशत के औसत से बढ़कर 1980 और 1990 के दशक में 6 प्रतिशत के करीब पहुँच गई। विकास की उच्च दर ने निर्धनता को कम करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसलिए यह स्पष्ट होता जा रहा है कि आर्थिक संवृद्धि और निर्धनता उन्मूलन के बीच एक घनिष्ठ संबंध है। आर्थिक संवृद्धि अवसरों को व्यापक बना देती है और मानव विकास में निवेश के लिए आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराती है। यह शिक्षा में निवेश से अधिक आर्थिक प्रतिफल पाने की आशा में लोगों को अपने बच्चों को लड़कियों सहित स्कूल भेजने के लिए प्रोत्साहित करती है। तथापि, यह संभव है कि आर्थिक विकास से सृजित अवसरों से निर्धन लोग प्रत्यक्ष लाभ नहीं उठा सके। इसके अतिरिक्त कृषि क्षेत्रक में संवृद्धि अपेक्षा से बहुत कम रही। निर्धनता पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा क्योंकि निर्धन लोगों का एक बड़ा भाग गाँव में रहता है और कृषि पर आश्रित है।

इन परिस्थितियों में लक्षित निर्धनता-निरोधी कार्यक्रमों की स्पष्ट आवश्यकता है। यद्यपि ऐसी अनेक योजनाएँ हैं जिनको प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से निर्धनता कम करने के लिए बनाया गया, उनमें से कुछ का उल्लेख यहाँ करना आवश्यक है। **महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार अभिनियम 2005 (मनरेगा)** का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका सुरक्षित करने के लिये हर घर के लिये मजदूरी रोजगार कम से कम 100 दिनों के लिये उपलब्ध कराना है। इसका उद्देश्य सतत् विकास में, मदद करना ताकि सूखा, वन कटाई एवं मिट्टी के कटाव जैसी समस्याओं से बचा जा सके। इस प्रावधान के तहत एक-तिहाई रोजगार महिलाओं के लिये सुरक्षित किया गया है।

इस स्कीम के अंतर्गत 4.78 करोड़ परिवार को 220 करोड़ प्रतिव्यक्ति रोजगार उपलब्ध कराया गया हैं। इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं महिलाओं का हिस्सा क्रमशः 23 प्रतिशत, 17 प्रतिशत एवं 53 प्रतिशत हैं औसतन रोजगार वर्ष 2006-07 में 65 रुपये से बढ़ाकर 132 रुपये वर्ष 2013-14 में कर दिया गया है। हाल ही में, मार्च 2018 में, विभिन्न राज्यों में अकुशल मैनुअल श्रमिकों के लिये मजदूरी दर संशोधित कर दी गई है। इन राज्यों एवं संघ शासित प्रदेशों में मजदूरी दर की सीमा-परिसर - ₹ 281/- प्रतिदिन (हरियाणा के श्रमिकों के लियें) से ₹ 168/- प्रतिदिन (बिहार और झारखण्ड के श्रमिकों के लिये) तय की गई है। केंद्र सरकार **राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कोष** भी स्थापित करेगी। इसी तरह राज्य सरकारें भी योजना के कार्यान्वयन के लिए **राज्य रोज़गार गारंटी कोष** की स्थापना करेंगी। कार्यक्रम के अंतर्गत अगर आवेदक को 15 दिन के अंदर रोज़गार उपलब्ध नहीं कराया गया तो वह दैनिक बेरोज़गार भत्ते का हकदार होगा। एक और महत्त्वपूर्ण योजना **राष्ट्रीय काम के बदले अनाज** कार्यक्रम है जिसे 2004 में देश के सबसे पिछड़े 150 ज़िलों में लागू किया गया था। यह कार्यक्रम उन सभी ग्रामीण निर्धनों के लिए है, जिन्हें मज़दूरी पर रोज़गार की आवश्यकता है और जो अकुशल शारीरिक काम करने के इच्छुक हैं। इसका कार्यान्वयन शत-प्रतिशत केंद्रीय वित्तपोषित कार्यक्रम के रूप में किया गया है और राज्यों को खाद्यान्न निःशुल्क उपलब्ध कराए जा रहे हैं। एक बार एन.आर.ई.जी.ए. लागू हो जाए तो काम के बदले अनाज (एन.एफ.डब्ल्यू.पी.) का राष्ट्रीय कार्यक्रम भी इस कार्यक्रम के अंतर्गत आ जाएगा।

प्रधानमंत्री रोज़गार योजना एक अन्य योजना है, जिसे 1993 में आरंभ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे शहरों में शिक्षित बेरोज़गार युवाओं के लिए स्वरोज़गार के अवसर सृजित करना है। उन्हें लघु व्यवसाय और उद्योग स्थापित करने में उनकी सहायता दी जाती है। **ग्रामीण रोज़गार सृजन** कार्यक्रम का आरंभ 1995 में किया गया। इसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे शहरों में स्वरोज़गार के अवसर सृजित करना है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में इस कार्यक्रम के अंतर्गत 25 लाख नए रोज़गार के अवसर सृजित करने का लक्ष्य रखा गया है। **स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना** का आरंभ 1999 में किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य सहायता-प्राप्त निर्धन परिवारों को स्वसहायता समूहों में संगठित कर बैंक ऋण और सरकारी सहायिकी के संयोजन द्वारा निर्धनता रेखा से ऊपर लाना है। **प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना** (2000 में आरंभ) के अंतर्गत प्राथमिक स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा, ग्रामीण आश्रय, ग्रामीण पेयजल और ग्रामीण विद्युतीकरण जैसी मूल सुविधाओं के लिए राज्यों को अतिरिक्त केंद्रीय सहायता प्रदान की जाती है। एक और महत्त्वपूर्ण योजना **अंत्योदय अन्न योजना** है, जिसके बारे में आप अगले अध्याय में विस्तार से पढ़ेंगे।

इन कार्यक्रमों के मिले-जुले परिणाम हुए हैं। उनके कम प्रभावी होने का एक मुख्य कारण उचित कार्यान्वयन और सही लक्ष्य निश्चित करने की कमी है। इसके अतिरिक्त, कुछ योजनाएँ परस्पर-व्यापी भी हैं। अच्छी नीयत के बावजूद इन योजनाओं के लाभ उनके पात्र, निर्धनों को पूरी तरह नहीं मिल पाए। इसलिए, हाल के वर्षों में निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों के उचित परिवीक्षण पर अधिक बल दिया गया है।

भावी चुनौतियाँ

भारत में निर्धनता में निश्चित रूप से गिरावट आई है, लेकिन प्रगति के बावजूद निर्धनता उन्मूलन भारत की एक सबसे बाध्यकारी चुनौती है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों और विभिन्न राज्यों में निर्धनता में व्यापक असमानता है। कुछ सामाजिक और आर्थिक समूह निर्धनता के प्रति अधिक असुरक्षित हैं। आशा की जा रही है कि निर्धनता उन्मूलन में अगले दस से पंद्रह वर्षों में अधिक प्रगति होगी। यह मुख्यतः उच्च आर्थिक संवृद्धि, सर्वजनीन निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा पर ज़ोर, जनसंख्या विकास में गिरावट, महिलाओं और समाज के आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्गों के बढ़ते सशक्तीकरण के कारण संभव हो सकेगा।

लोगों के लिए निर्धनता की आधिकारिक परिभाषा उनके केवल एक सीमित भाग पर लागू होती है। यह न्यूनतम जीवन निर्वाह के 'उचित' स्तर की अपेक्षा जीवन निर्वाह के 'न्यूनतम' स्तर के विषय में है। अनेक बुद्धिजीवियों ने इसका समर्थन किया है कि निर्धनता की अवधारणा का विस्तार 'मानव निर्धनता' तक कर देना चाहिए। हो सकता है कि बड़ी संख्या में लोग अपना भोजन जुटाने में समर्थ हों, लेकिन क्या उनके पास शिक्षा है? या घर है? या स्वास्थ्य सेवा की सुविधा है? या रोज़गार की सुरक्षा है? या आत्मविश्वास है? क्या वे जाति और लिंग आधारित भेदभाव से मुक्त हैं? क्या बाल श्रम की प्रथा अब भी प्रचलित है? विश्वव्यापी अनुभव बताते हैं कि विकास के साथ निर्धनता की परिभाषा भी बदलती है। निर्धनता उन्मूलन हमेशा एक गतिशील लक्ष्य है। आशा है कि हम अगले दशक के अंत तक सभी लोगों को, केवल आय के संदर्भ में, न्यूनतम आवश्यक आय उपलब्ध करा सकेंगे। सभी को स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और रोज़गार सुरक्षा उपलब्ध कराना, लैंगिक समता तथा निर्धनों का सम्मान जैसी बड़ी चुनौतियाँ हमारे लक्ष्य होंगे। ये और भी बड़े काम होंगे।

सारांश

आपने इस अध्याय में देखा कि निर्धनता के अनेक आयाम हैं। सामान्यत: इसे 'निर्धनता रेखा' की अवधारणा के द्वारा मापा जाता है। इस अवधारणा के द्वारा हमने निर्धनता में मुख्य वैश्विक तथा राष्ट्रीय प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया है। परंतु हाल के वर्षों में निर्धनता का विश्लेषण सामाजिक अपवर्जन जैसी अनेक नयी अवधारणाओं के द्वारा समृद्ध हो रहा है। इसी प्रकार चुनौतियाँ भी बढ़ती जा रही हैं, क्योंकि विद्वान लोग इस अवधारणा का 'मानव निर्धनता' में विस्तार कर रहे हैं।

अभ्यास

1 भारत में निर्धनता रेखा का आकलन कैसे किया जाता है?

2 क्या आप समझते हैं कि निर्धनता आकलन का वर्तमान तरीका सही है?

3 भारत में 1973 से निर्धनता की प्रवृत्तियों की चर्चा करें।

4 भारत में निर्धनता में अंतर-राज्य असमानताओं का एक विवरण प्रस्तुत करें।

5 उन सामाजिक और आर्थिक समूहों की पहचान करें जो भारत में निर्धनता के समक्ष निरुपाय हैं।

6 भारत में अंतर्राज्यीय निर्धनता में विभिन्नता के कारण बताइए।

7 वैश्विक निर्धनता की प्रवृत्तियों की चर्चा करें।

8 निर्धनता उन्मूलन की वर्तमान सरकारी रणनीति की चर्चा करें।

9 निम्नलिखित प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर दें :

(क) मानव निर्धनता से आप क्या समझते हैं?

(ख) निर्धनों में भी सबसे निर्धन कौन हैं?

(ग) राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम, 2005 की मुख्य विशेषताएँ क्या हैं?

संदर्भ

डेटन, ऐंगस एंड वैलेरी, कोजेल (सं.), 2005, द *ग्रेट इंडियन पावर्टी डिबेट*, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, नयी दिल्ली।

इकोनॉमिक सर्वे 2015-16, *चैप्टर ऑन सोशल सेक्टर्स*, [ऑनलाइन वेब] यूआरएल: एचटीटीपी / इंडिया बजट, एनआईसी. आईएन / ईएस 2004-05, सोशल एच.टी.एम., मिनिस्ट्री ऑफ़ फाइनैंस, गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, नयी दिल्ली।

मिडटर्म एप्रेज़ल ऑफ द टेन्थ फाइव ईयर प्लान 2002-07, भाग-दो, अध्याय-7: *पॉवर्टी एलिमिनेशन एंड रूरल एम्पलॉयमेंट* [आनलाइन वेब] एचटीटीपी: / डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू. प्लानिंग कमीशन, एनआईसी.आईएन / मिडटर्म इंगलिश-पीडीएफ / चैप्टर 07 पीडीएफ, प्लानिंग कमीशन, नयी दिल्ली।

नेशलन रूरल एम्पलॉयमेंट गारंटी ऐक्ट 2005 [आन लाइन वेब] एचटीटीपी: / रूरल एनआईसी.आईएन / राजस्व पीडीएफ।

टेन्थ फ़ाइव ईयर प्लान 2002-07, अध्याय- 3.2, *पॉवर्टी एलीवेशन इन रूरल इंडिया: स्ट्रेटजी एंड प्रोग्राम्स*, [आनलाइन वेब] एचटीटीपी: / डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू.प्लानिंग कमीशन, एनआईसीआईएन / प्लान्स / प्लानरिल / फाइव ईयर / टेन्थ, वाल्यूम-2 / वी-2 सीएच-3-2 पीडीएफ, प्लानिंग कमीशन, नयी दिल्ली।

वर्ल्ड डेवलपमेंट सूचक 2016, *सतत विकास के लक्ष्य की विशेषता*, द वर्ल्ड बैंक, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, दिल्ली।

पाणिग्रही अरविंद एण्ड विशाल मोरे 'पावर्टी बाइ सोशल रिलिजियस एण्ड इकोनॉमिक ग्रुप्स इन इंडिया एण्ड इट्स लार्जेस्ट स्टेट, वर्किंग पेपर न. 2013-14, प्रोग्राम ऑन इण्डियन इकोनॉमिक पोलिसीज, कोलम्बिया युनिर्वसिटी।

4
अध्याय

0971CH04

भारत में खाद्य सुरक्षा

अवलोकन

खाद्य सुरक्षा का अर्थ है, सभी लोगों के लिए सदैव भोजन की उपलब्धता, पहुँच और उसे प्राप्त करने का सामर्थ्य। जब भी अनाज के उत्पादन या उसके वितरण की समस्या आती है, तो सहज ही निर्धन परिवार इससे अधिक प्रभावित होते हैं। खाद्य सुरक्षा **सार्वजनिक वितरण प्रणाली, शासकीय सतर्कता** और **खाद्य सुरक्षा के खतरे की स्थिति** में सरकार द्वारा की गई कार्यवाही पर निर्भर करती है।

खाद्य सुरक्षा क्या है?

जीवन के लिए भोजन उतना ही आवश्यक है जितना कि साँस लेने के लिए वायु। लेकिन खाद्य सुरक्षा मात्र दो जून की रोटी पाना नहीं है, बल्कि उससे कहीं अधिक है। खाद्य सुरक्षा के निम्नलिखित आयाम हैं :

(क) खाद्य उपलब्धता का तात्पर्य देश में खाद्य उत्पादन, खाद्य आयात और सरकारी अनाज भंडारों में संचित पिछले वर्षों के स्टॉक से है।

(ख) पहुँच का अर्थ है कि खाद्य प्रत्येक व्यक्ति को मिलता रहे।

(ग) सामर्थ्य का अर्थ है कि लोगों के पास अपनी भोजन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त और पौष्टिक भोजन खरीदने के लिए धन उपलब्ध हो।

किसी देश में खाद्य सुरक्षा केवल तभी सुनिश्चित होती है जब (1) सभी लोगों के लिए पर्याप्त खाद्य उपलब्ध हो, (2) सभी लोगों के पास स्वीकार्य गुणवत्ता के खाद्य-पदार्थ खरीदने की क्षमता हो और (3) खाद्य की उपलब्धता में कोई बाधा नहीं हो।

खाद्य सुरक्षा क्यों?

समाज का अधिक गरीब वर्ग तो हर समय खाद्य असुरक्षा से ग्रस्त हो सकता है परंतु जब देश भूकंप, सूखा, बाढ़, सुनामी, फसलों के खराब होने से पैदा हुए अकाल आदि राष्ट्रीय आपदाओं से गुज़र रहा हो, तो निर्धनता रेखा से ऊपर के लोग भी खाद्य असुरक्षा से ग्रस्त हो सकते हैं।

1970 के दशक में खाद्य सुरक्षा का अर्थ था–'आधारिक खाद्य पदार्थों की सदैव पर्याप्त उपलब्धता' (सं. रा. 1975)। अमर्त्य सेन ने खाद्य सुरक्षा में एक नया आयाम जोड़ा और हकदारियों के आधार पर खाद्य तक पहुँच पर ज़ोर दिया। हकदारियों का अभिप्राय राज्य या सामाजिक रूप से उपलब्ध कराई गई अन्य पूर्तियों के साथ-साथ उन वस्तुओं से है, जिनका उत्पादन और विनिमय बाज़ार में किसी व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है। तदनुसार, खाद्य सुरक्षा के अर्थ में काफ़ी परिवर्तन हुआ है। विश्व खाद्य शिखर सम्मेलन, 1995 में यह घोषणा की गई कि ''वैयक्तिक, पारिवारिक, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा वैश्विक स्तर पर खाद्य सुरक्षा का अस्तित्व तभी है, जब सक्रिय और स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए आहार संबंधी ज़रूरतों और खाद्य पदार्थों को पूरा करने के लिए पर्याप्त, सुरक्षित एवं पौष्टिक खाद्य तक सभी लोगों की भौतिक एवं आर्थिक पहुँच सदैव हो'' (खाद्य एवं कृषि संगठन 1996, पृष्ठ 3)। इसके अतिरिक्त घोषणा में यह भी स्वीकार किया गया कि ''खाद्य तक पहुँच बढ़ाने में निर्धनता का उन्मूलन किया जाना परमावश्यक है।''

किसी आपदा के समय खाद्य सुरक्षा कैसे प्रभावित होती है? किसी प्राकृतिक आपदा जैसे, सूखे के कारण खाद्यान्न की कुल उपज में गिरावट आती है। इससे प्रभावित क्षेत्र में खाद्य की कमी हो जाती है। खाद्य की कमी के कारण कीमतें बढ़ जाती हैं। कुछ लोग ऊँची कीमतों पर खाद्य पदार्थ नहीं खरीद सकते। अगर यह आपदा अधिक विस्तृत क्षेत्र में आती है या अधिक लंबे समय तक बनी रहती है, तो भुखमरी की स्थिति पैदा हो सकती है। व्यापक भुखमरी से अकाल की स्थिति बन सकती है।

अकाल के दौरान बड़े पैमाने पर मौतें होती हैं जो भुखमरी तथा विवश होकर दूषित जल या सड़े भोजन के प्रयोग से फैलने वाली महामारियों तथा भुखमरी से उत्पन्न कमज़ोरी से रोगों के प्रति शरीर की प्रतिरोधी क्षमता में गिरावट के कारण होती है।

भारत में जो सबसे भयानक अकाल पड़ा था, वह 1943 का बंगाल का अकाल था। इस अकाल में भारत के बंगाल प्रांत में तीस लाख लोग मारे गए थे।

क्या आपको मालूम है कि बंगाल के अकाल से सबसे अधिक कौन लोग प्रभावित हुए? चावल की कीमतों में भारी वृद्धि से खेतिहर मज़दूर, मछुआरे, परिवहनकर्मी और अन्य अनियमित श्रमिक सबसे अधिक प्रभावित हुए। इस अकाल में सबसे अधिक वही मरे।

सारणी 4.1 : *बंगाल प्रांत में चावल की उपज*

वर्ष	उत्पादन (लाख टन)	आयात (लाख टन)	निर्यात (लाख टन)	कुल उपलब्धता (लाख टन)
1938	85	–	–	85
1939	79	04	–	83
1940	82	03	–	85
1941	68	02	–	70
1942	93	–	01	92
1943	76	03	–	79

स्रोत : *सेन, ए.के., 1983, पृष्ठ 61 (देखें इस अध्याय का 'संदर्भ')*

आइए चर्चा करें

- कुछ लोगों का कहना है कि बंगाल का अकाल चावल की कमी के कारण हुआ था। सारणी 4.1 का अध्ययन करें और बताएँ कि क्या आप इस कथन से सहमत हैं?
- किस वर्ष में खाद्य उपलब्धता में भारी कमी हुई?

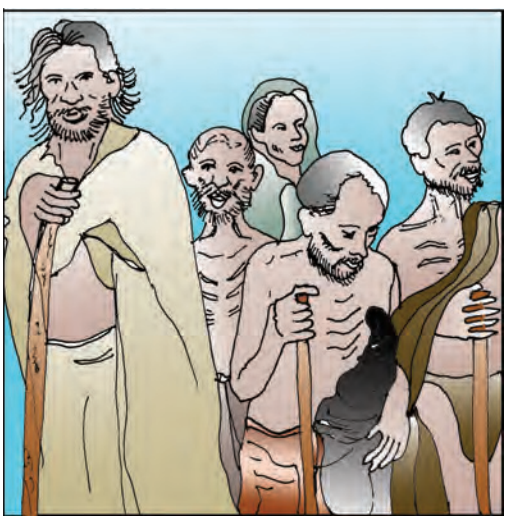

चित्र 4.1 : *राहत केंद्र पर भुखमरी से पीड़ित लोग, 1945*

चित्र 4.2 : *1943 के बंगाल के अकाल के दौरान पूर्वी बंगाल के चटगाँव ज़िले में गाँव छोड़ कर जाता हुआ एक परिवार।*

सुझाए गए कार्य

(क) चित्र 4.1 में आप क्या देखते हैं?

(ख) पहले चित्र में कौन सा आयु वर्ग दिख रहा है?

(ग) क्या आप कह सकते हैं कि चित्र 4.2 में दिखाया गया परिवार गरीब है? क्यों?

(घ) क्या आप अकाल पड़ने से पहले (दोनों चित्रों में दिखाए गए) लोगों की जीविका के स्रोत के बारे में अनुमान लगा सकते हैं? (गाँव के संदर्भ में)

(ङ) ज्ञात करें कि किसी राहत शिविर में प्राकृतिक आपदा के पीड़ितों को किस तरह की मदद दी जाती है।

(च) क्या आपने इस तरह के पीड़ितों की कभी (धन, खाद्य, कपड़ों, दवाओं आदि के रूप में) सहायता की है?

परियोजना कार्य : भारत में अकाल संबंधी और सूचनाएँ एकत्र करें।

भारत में बंगाल जैसा अकाल पुन: कभी नहीं पड़ा। लेकिन यह चिंता का विषय है कि आज भी उड़ीसा में कालाहांडी तथा काशीपुर जैसे स्थान हैं, जहाँ अकाल जैसी दशाएँ अनेक वर्षों से बनी हुई हैं और ऐसी भी सूचना मिली है कि वहाँ भूख के कारण कुछ लोगों की मृत्यु भी हुई है। हाल के कुछ वर्षों में राजस्थान के बारन ज़िले, झारखंड के पालामू ज़िले तथा अन्य सुदूरवर्ती क्षेत्रों में भूख के कारण लोगों की मृत्यु की सूचना मिली है। अत: किसी भी देश में खाद्य सुरक्षा आवश्यक होती है ताकि सदैव खाद्य की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सके।

खाद्य-असुरक्षित कौन हैं?

यद्यपि भारत में लोगों का एक बड़ा वर्ग खाद्य एवं पोषण की दृष्टि से असुरक्षित है, परंतु इससे सर्वाधिक प्रभावित वर्गों में निम्नलिखित शामिल हैं : भूमिहीन जो थोड़ी बहुत अथवा नगण्य भूमि पर निर्भर हैं, पारंपरिक दस्तकार, पारंपरिक सेवाएँ प्रदान करने वाले लोग, अपना छोटा-मोटा काम करने वाले कामगार और निराश्रित तथा भिखारी। शहरी क्षेत्रों में खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित वे परिवार हैं जिनके कामकाजी सदस्य प्राय: कम वेतन वाले व्यवसायों और अनियत श्रम-बाज़ार में काम करते हैं। ये कामगार अधिकतर मौसमी कार्यों में लगे हैं और उनको इतनी कम मज़दूरी दी जाती है कि वे मात्र जीवित रह सकते हैं।

रामू की कहानी

रामू रायपुर गाँव में कृषि क्षेत्रक में एक अनियत खेतिहर मज़दूर के रूप में काम करता है। उसका सबसे बड़ा बेटा सोमू दस वर्ष का है। वह भी गाँव के सरपंच सतपाल सिंह के पशुओं की देखभाल करने वाले पाली के रूप में काम करता है। सोमू सरपंच के यहाँ पूरे वर्ष काम करता है और उसे इस काम के लिए सिर्फ़ एक हज़ार रुपये मिलते हैं। रामू के तीन और बेटे और दो बेटियाँ हैं, लेकिन वे अभी बहुत कम उम्र के हैं और वे खेत में काम नहीं कर सकते। रामू की पत्नी सुनहरी भी पशुओं की सफ़ाई करने और गोबर हटाने का काम (अंशकालिक) करती है। उसे अपने रोज़ाना काम के बदले आधा लीटर दूध और सब्ज़ियों के साथ कुछ पका खाना मिलता है। इसके अलावा व्यस्त मौसम में वह अपने पति के साथ मिल कर खेती में काम करती है और उनकी आमदनी बढ़ जाती है। कृषि एक मौसमी कार्य है और रामू को केवल बुआई, पौधा-रोपण और फसल की कटाई के समय काम मिलता है। वह वर्ष में फसल तैयार होने और पकने तक की अवधि के दौरान लगभग चार महीने बेरोज़गार रहता है। तब वह दूसरे कार्यों में काम की तलाश करता है। कभी-कभी उसे ईंट भट्टे में या गाँव में चल रहे निर्माण कार्यों में काम मिल जाता है। रामू अपने इन प्रयासों से नकद या फिर वस्तु रूप में इतना कमा लेता है, जिससे वह अपने परिवार के दो जून के भोजन के लिए ज़रूरी चीज़ें जुटा सके। बहरहाल, जब वह कहीं काम पाने में असफल रहता है तो उसे और उसके परिवार को वास्तव में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, और कभी-कभी उसके छोटे बच्चों को भूखे पेट ही सोना पड़ता है। परिवार को दूध तथा सब्ज़ियाँ भोजन के साथ नियमित रूप से नहीं मिलती हैं। रामू कृषि कार्य की मौसमी प्रकृति के कारण अपनी बेरोज़गारी के चार महीनों में खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित रहता है।

आइए चर्चा करें

- कृषि एक मौसमी क्रिया क्यों है?
- रामू वर्ष के लगभग चार महीने बेरोज़गार क्यों रहता है?
- जब रामू बेरोज़गार होता है, तो वह क्या करता है?
- रामू के परिवार में पूरक आय कौन प्रदान करता है?
- कोई भी काम पाने में असमर्थ होने पर, रामू को कठिनाई क्यों होती है?
- रामू खाद्य की दृष्टि से कब असुरक्षित होता है?

अहमद की कहानी

अहमद बंगलोर में रिक्शा चलाता है। वह अपने तीन भाइयों, दो बहनों और बूढ़े माँ-बाप के साथ झुमरी तलैया से आया है। वह एक झुग्गी में रहता है। उसके परिवार के समस्त सदस्यों का पालन-पोषण रिक्शा चलाने से होने वाली उसकी प्रतिदिन की आय पर निर्भर है। बहरहाल, उसका रोज़गार सुरक्षित नहीं है और उसकी आय प्रतिदिन घटती-बढ़ती रहती है। कभी-कभी वह इतना कमा लेता है कि समस्त दैनिक आवश्यकताओं की चीज़ें खरीदने के पश्चात् अपनी आय में से कुछ बचा लेता है। अन्य दिनों में वह मुश्किल से इतना ही कमा पाता है, जिससे वह दैनिक आवश्यकता की वस्तुएँ ही खरीद सके। सौभाग्यवश, अहमद को एक पीला कार्ड प्राप्त है, जो निर्धनता रेखा से नीचे के लोगों का पी.डी.एस. कार्ड है। इस कार्ड से अहमद अपनी दैनिक ज़रूरतों के उपभोग के लिए पर्याप्त मात्रा में गेहूँ, चावल, चीनी और मिट्टी का तेल प्राप्त कर लेता है। वह इन चीज़ों को बाज़ार की कीमत से आधी कीमत पर प्राप्त कर लेता है। वह अपना मासिक भंडार उस विशेष दिन खरीदता है, जिस दिन दुकान निर्धनता रेखा के नीचे के लोगों के लिए खुलती है। इस तरह अहमद अपनी इस अपर्याप्त आय से अपने बड़े परिवार का किसी तरह पालन-पोषण कर रहा है, जहाँ वह अकेला कमाने वाला सदस्य है।

आइए चर्चा करें

- क्या रिक्शा चलाने से अहमद को नियमित आय होती है?
- रिक्शा चलाने से होने वाली थोड़ी सी आय के बावजूद पीला कार्ड अहमद को अपना परिवार चलाने में कैसे मदद कर रहा है?
- रामू खाद्य की दृष्टि से कब असुरक्षित होता है?

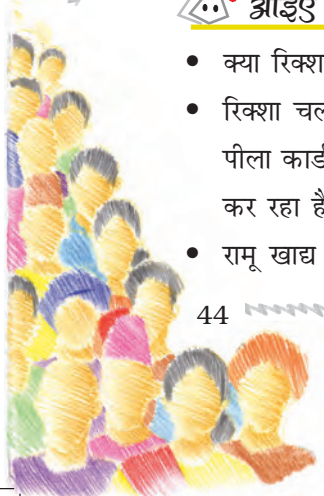

खाद्य पदार्थ खरीदने में असमर्थता के साथ सामाजिक संरचना भी खाद्य की दृष्टि से असुरक्षा में भूमिका निभाती है। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ी जातियों के कुछ वर्गों (इनमें से निचली जातियाँ) का या तो भूमि का आधार कमज़ोर होता है या फिर उनकी भूमि की उत्पादकता बहुत कम होती है, वे खाद्य की दृष्टि से शीघ्र असुरक्षित हो जाते हैं। वे लोग भी खाद्य की दृष्टि से सर्वाधिक असुरक्षित होते हैं, जो प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित हैं और जिन्हें काम की तलाश में दूसरी जगह जाना पड़ता है। कुपोषण से सबसे अधिक महिलाएँ प्रभावित होती हैं। यह गंभीर चिंता का विषय है क्योंकि इससे अजन्मे बच्चों को भी कुपोषण का खतरा रहता है। खाद्य असुरक्षा से ग्रस्त आबादी का बड़ा भाग गर्भवती तथा दूध पिला रही महिलाओं तथा पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चों का है। देश के कुछ क्षेत्रों, जैसे, आर्थिक रूप से पिछड़े राज्य जहाँ गरीबी अधिक है, आदिवासी और सुदूर-क्षेत्र, प्राकृतिक आपदाओं से बार-बार प्रभावित होने वाले क्षेत्र आदि में खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित लोगों की संख्या आनुपातिक रूप से बहुत अधिक है। वास्तव में, उत्तर प्रदेश (पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी हिस्से), बिहार, झारखंड, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के कुछ भागों में खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित लोगों की सर्वाधिक संख्या है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं पारिवारिक सर्वेक्षण (एन.एच.एफ़.एस.) 1998-99 के अनुसार भारत में ऐसी महिलाओं और बच्चों की संख्या 11 करोड़ के लगभग है।

भुखमरी खाद्य की दृष्टि से असुरक्षा को इंगित करने वाला एक दूसरा पहलू है। भुखमरी गरीबी की एक अभिव्यक्ति मात्र नहीं है, यह गरीबी लाती है। इस तरह खाद्य की दृष्टि से सुरक्षित होने से वर्तमान में भुखमरी समाप्त हो जाती है और भविष्य में भुखमरी का खतरा कम हो जाता है। भुखमरी के दीर्घकालिक और मौसमी आयाम होते हैं। दीर्घकालिक भुखमरी मात्रा एवं / या गुणवत्ता के आधार पर अपर्याप्त आहार ग्रहण करने के कारण होती है। गरीब लोग अपनी अत्यंत निम्न आय और जीवित रहने के लिए खाद्य पदार्थ खरीदने में अक्षमता के

कारण दीर्घकालिक भुखमरी से ग्रस्त होते हैं। मौसमी भुखमरी फसल उपजाने और काटने के चक्र से संबद्ध है। यह ग्रामीण क्षेत्रों की कृषि क्रियाओं की मौसमी प्रकृति के कारण तथा नगरीय क्षेत्रों में अनियमित श्रम के कारण होती है। जैसे, बरसात के मौसम में अनियत निर्माण श्रमिक को कम काम रहता है। इस तरह की भुखमरी तब होती है, जब कोई व्यक्ति पूरे वर्ष काम पाने में अक्षम रहता है।

सारणी 4.2 में दिखाया गया है कि भारत में मौसमी और साथ ही दीर्घकालिक भुखमरी के प्रतिशत में गिरावट आई है।

सारणी 4.2 : *भारत में 'भुखमरी' से ग्रस्त परिवारों का प्रतिशत*

वर्ष	भुखमरी के प्रकार		
	मौसमी	दीर्घकालिक	कुल
ग्रामीण			
1983	16.2	2.3	18.5
1993–94	4.2	0.9	5.1
1999–2000	2.6	0.7	3.3
शहरी			
1983	5.6	0.8	6.4
1993–94	1.1	0.5	1.6
1999–2000	0.6	0.3	0.9

स्रोत : *सागर 2004, विद्या (देखें इस अध्याय का 'संदर्भ')*

स्वतंत्रता के बाद खाद्यान्नों में आत्मनिर्भर होना भारत का लक्ष्य रहा है।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय नीति-निर्माताओं ने खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के सभी उपाय किए। भारत ने कृषि में एक नयी रणनीति अपनाई, जिसकी परिणति हरित क्रांति में हुई, विशेषकर गेहूँ और चावल के उत्पादन में।

तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने जुलाई, 1968 में 'गेहूँ क्रांति' शीर्षक से एक विशेष डाक टिकट जारी कर कृषि के क्षेत्रक में हरित क्रांति की प्रभावशाली प्रगति को आधिकारिक रूप से दर्ज किया। गेहूँ की सफलता के बाद चावल के क्षेत्र में इस सफलता की पुनरावृत्ति हुई। बहरहाल, अनाज की उपज में वृद्धि समानुपातिक नहीं थी। उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में

चित्र 4.3 : *पंजाब का एक किसान एच.वाई.वी. प्रकारों वाले गेहूँ के एक खेत के सामने, जिस पर हरित क्रांति आधारित है*

सर्वाधिक वृद्धि हुई जोकि 44.01 और 30.21 करोड़ टन क्रमशः 2015–16 में है। वर्ष 2015–16 में कुल अनाजों का उत्पादन 252.22 करोड़ टन है। वर्ष 2016–17 में कुल अनाजों का उत्पादन 275.68 करोड़ टन है। गेहूँ के उत्पादन में उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश में उल्लेखनीय वृद्धि हुई जोकि 26.87 और 17.69 करोड़ टन क्रमशः 2015–16 में है। दूसरी तरफ, पश्चिम बंगाल एवं उत्तर प्रदेश में चावल के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि जोकि 15.75 एवं 12.51 करोड़ टन क्रमशः 2015–16 में है।

सुझाई गई क्रियाएँ

- निकट के किसी गाँव में कुछ खेतों पर जाएँ और किसानों द्वारा उपजाई गई खाद्य फसलों का ब्यौरा एकत्रित करें।

भारत में खाद्य सुरक्षा

70 के दशक के प्रारंभ में हरित क्रांति के आने के बाद से मौसम की विपरीत दशाओं के दौरान भी देश में अकाल नहीं पड़ा है।

देश भर में उपजाई जाने वाली विविध फसलों के कारण भारत पिछले तीस वर्षों के दौरान खाद्यान्नों के मामले में आत्मनिर्भर बन गया है। सरकार द्वारा सावधानीपूर्वक तैयार की गई खाद्य सुरक्षा व्यवस्था के कारण देश में (खराब मौसम स्थितियों के बावजूद अथवा किसी अन्य कारण से) अनाज की उपलब्धता और भी सुनिश्चित हो गई। इस व्यवस्था के दो घटक हैं: (क) बफ़र स्टॉक और (ख) सार्वजनिक वितरण प्रणाली।

आरेख 4.1 : भारत में अनाज की उपज (करोड़ टन)

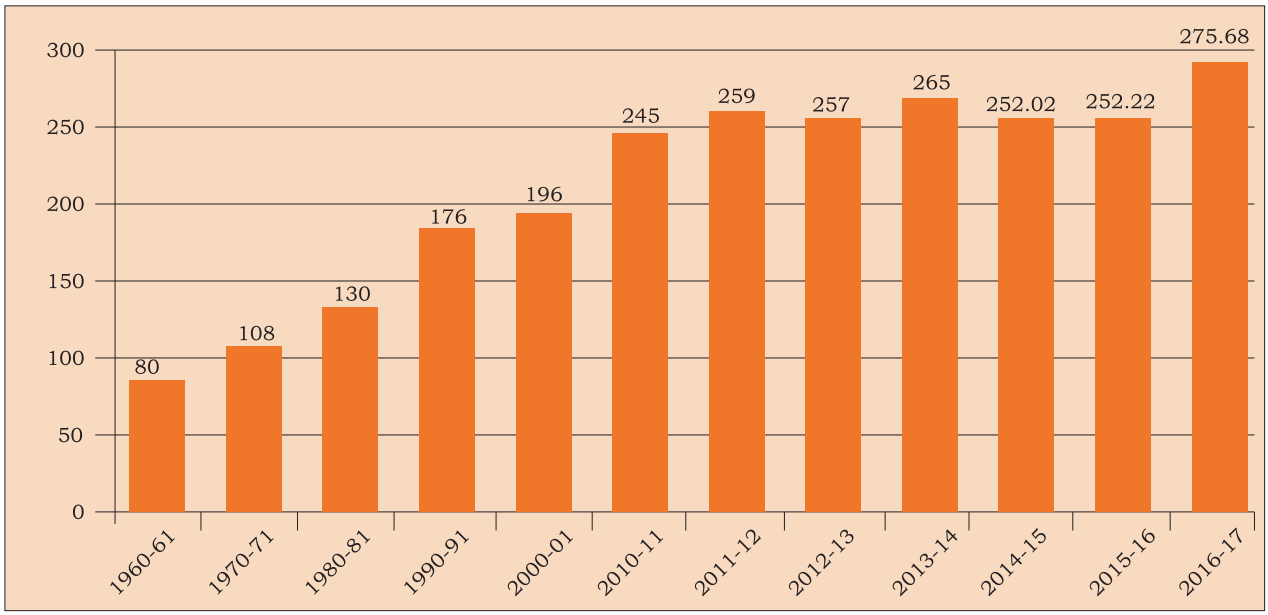

स्रोत : कृषि निगम और किसानों के कल्याण विभाग, वार्षिक रिपोर्ट 2017-18

आइए चर्चा करें

आरेख 4.1 का अध्ययन करें और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें :

- हमारे देश में किस वर्ष में अनाज उत्पादन 200 करोड़ टन प्रतिवर्ष से अधिक हुआ?
- भारत में किस दशक में अनाज उत्पादन में सर्वाधिक दशकीय वृद्धि हुई?
- क्या 2000-01 से भारत में उत्पादन में वृद्धि स्थायी है?

बफ़र स्टॉक क्या है?

बफ़र स्टॉक **भारतीय खाद्य निगम** (एफ़.सी.आई.) के माध्यम से सरकार द्वारा अधिप्राप्त अनाज, गेहूँ और चावल का भंडार है। भारतीय खाद्य निगम अधिशेष उत्पादन वाले राज्यों में किसानों से गेहूँ और चावल खरीदता है। किसानों को उनकी फसल के लिए पहले से घोषित कीमतें दी जाती हैं। इस मूल्य को **न्यूनतम समर्थित कीमत** कहा जाता है। इन फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से बुआई के मौसम से पहले सरकार न्यूनतम समर्थित कीमत की घोषणा करती है। खरीदे हुए अनाज खाद्य भंडारों में रखे जाते हैं। क्या आप जानते हैं कि सरकार बफ़र स्टॉक क्यों बनाती है? ऐसा कमी वाले क्षेत्रों में और समाज के गरीब वर्गों में बाज़ार कीमत से कम कीमत पर अनाज के वितरण के लिए किया जाता है। इस कीमत को **निर्गम कीमत** भी कहते हैं। यह खराब मौसम में या फिर आपदा काल में अनाज की कमी की समस्या हल करने में भी मदद करता है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली क्या है?

भारतीय खाद्य निगम द्वारा अधिप्राप्त अनाज को सरकार विनियमित राशन दुकानों के माध्यम से समाज के गरीब वर्गों में वितरित करती है। इसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पी.डी.एस.)कहते हैं। अब अधिकांश क्षेत्रों, गाँवों, कस्बों और शहरों में राशन की दुकानें हैं। देश भर में लगभग 5.5 लाख राशन की दुकानें हैं। राशन की दुकानों में, जिन्हें **उचित दर वाली दुकानें** कहा जाता है, चीनी खाद्यान्न और खाना पकाने के लिए मिट्टी के तेल का भंडार होता है। ये सब बाज़ार कीमत से कम कीमत पर लोगों को बेचा जाता है। राशन कार्ड रखने वाला कोई भी परिवार प्रतिमाह इनकी एक अनुबंधित मात्रा (जैसे 35 किलोग्राम अनाज, 5 लीटर मिट्टी का तेल, 5 किलोग्राम चीनी आदि) निकटवर्ती राशन की दुकान से खरीद सकता है।

राशन कार्ड तीन प्रकार के होते हैं : (क) निर्धनों में भी निर्धन लोगों के लिए अंत्योदय कार्ड, (ख) निर्धनता रेखा से नीचे के लोगों के लिए बी पी एल कार्ड और (ग) अन्य लोगों के लिए ए पी एल कार्ड।

सुझाई गई क्रियाएँ

- अपने इलाके की राशन की दुकान पर जाएँ और वहाँ से निम्नलिखित ब्यौरा प्राप्त करें :
  1 राशन की दुकान कब खुलती है?
  2 राशन की दुकान पर कौन-कौन सी चीज़ें बेची जाती हैं?
  3 राशन की दुकान के चावल और चीनी (निर्धरता की रेखा से नीचे वाले परिवारों के लिए) की कीमत की तुलना किसी अन्य किराने की दुकान की कीमतों से करें।
- पता लगाएँ :
  1 क्या आपके पास राशन कार्ड है?
  2 इस राशन कार्ड से आपके परिवार ने हाल में कौन-सी चीज़ खरीदी है?
  3 क्या उन्हें किसी तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है?
  4 राशन की दुकानें क्यों ज़रूरी हैं?

चित्र 4.4

भारत में राशन व्यवस्था की शुरुआत बंगाल के अकाल की पृष्ठभूमि में 1940 के दशक में हुई। हरित क्रांति से पूर्व भारी खाद्य संकट के कारण 60 के दशक के दौरान राशन प्रणाली पुनर्जीवित की गई। गरीबी के उच्च स्तरों को ध्यान में रखते हुए 70 के दशक के मध्य एन.एस.एस.ओ. की रिपोर्ट के अनुसार खाद्य संबंधी तीन महत्त्वपूर्ण अंत:क्षेप कार्यक्रम प्रारंभ किए गए: **सार्वजनिक वितरण प्रणाली** (जो पहले से ही थी, लेकिन उसे और मज़बूत किया गया), **एकीकृत बाल विकास सेवाएँ** (आई.सी.डी.एस., जो प्रायोगिक आधार पर 1975 में शुरू की गई) और **काम के बदले अनाज** (एफ.एफ.डब्ल्यू., 1977-78 में प्रारंभ)। इन वर्षों में कई नए कार्यक्रम शुरू किए गए हैं और कार्यक्रमों को चलाने के बढ़ते अनुभवों के आधार पर अन्य कार्यक्रमों का पुनर्गठन किया गया। वर्तमान में अनेक **गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम** (पी.ए.पी.) चल रहे हैं जो अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। इनमें स्पष्ट रूप से घटक खाद्य भी है, जहाँ सार्वजनिक वितरण प्रणाली, दोपहर का भोजन आदि विशेष रूप से खाद्य की दृष्टि से सुरक्षा के कार्यक्रम हैं। अधिकतर पी.ए.पी. भी खाद्य सुरक्षा बढ़ाते हैं, रोज़गार कार्यक्रम गरीबों की आय मे बढ़ोतरी कर खाद्य सुरक्षा में बड़ा योगदान करते हैं।

सुझाए गए क्रियाकलाप

सरकार की ओर से शुरू किए गए खाद्य पर आधारित कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी एकत्र करें।

संकेत: ग्रामीण वेतन रोज़गार कार्यक्रम, रोज़गार गारंटी योजना, संपूर्ण ग्रामीण रोज़गार योजना, दोपहर का भोजन, एकीकृत बाल विकास सेवाएँ आदि।

अपने शिक्षक के साथ चर्चा करें।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की वर्तमान स्थिति

सार्वजनिक वितरण प्रणाली खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में भारत सरकार का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कदम है। प्रारंभ में यह प्रणाली सबके लिए थी और निर्धनों और गैर-निर्धनों के बीच कोई भेद नहीं किया जाता था। बाद के वर्षों में सार्वजनिक

भारतीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013

भारतीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013 के तहत खाद्य एवं पोषण संबंधी सुरक्षा सस्ती कीमतों पर उपलब्ध कराई जा सके ताकि मानव गरिमामय जीवन निर्वाह कर सके। इस अधिनियम के तहत 75 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या एवं 50 प्रतिशत शहरी जनसंख्या को योग्य परिवार में वर्गीकृत किया गाया है।

वितरण प्रणाली को अधिक दक्ष और अधिक लक्षित बनाने के लिए संशोधित किया गया। 1992 में देश के 1700 ब्लॉकों में संशोधित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (आर पी डी एस) शुरू की गई। इसका लक्ष्य दूर-दराज़ और पिछड़े क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली से लाभ पहुँचाना था। जून 1997 से 'सभी क्षेत्रों में गरीबों' को लक्षित करने के सिद्धांत को अपनाने के लिए लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टी.पी.डी.एस.) प्रारंभ की गई। यह पहला मौका था जब निर्धनों और गैर-निर्धनों के लिए विभेदक कीमत नीति अपनाई गई। इसके अलावा, 2000 में दो विशेष योजनाएँ–**अंत्योदय अन्न योजना** और **अन्नपूर्णा योजना** प्रारंभ की गईं। ये योजनाएँ क्रमश: 'गरीबों में भी सर्वाधिक गरीब' और 'दीन वरिष्ठ नागरिक' समूहों पर लक्षित हैं। इन दोनों योजनाओं का संचालन सार्वजनिक वितरण प्रणाली के वर्तमान नेटवर्क से जोड़ दिया गया है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताओं का सारांश सारणी 4.3 में दिया गया है।

इन वर्षों के दौरान सार्वजनिक वितरण प्रणाली मूल्यों को स्थिर बनाने और सामर्थ्य अनुसार कीमतों पर उपभोक्ताओं को खाद्यान्न उपलब्ध कराने की सरकार की नीति में सर्वाधिक प्रभावी साधन सिद्ध हुई है। इसने देश के अनाज की अधिशेष क्षेत्रों

***सारणी 4.3** : सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ*

योजना का काम	आरंभ का वर्ष	लक्षित समूह	अद्यतन मात्रा	निर्गम कीमत (रु. प्र.कि.)
सार्वजनिक वितरण प्रणाली	1992 तक	सर्वजनीन	–	गेहूँ – 2.34 चावल – 2.89
संशोधित सार्वजनिक वितरण प्रणाली	1992	पिछड़े ब्लॉक	20 कि. खाद्यान्न	गेहूँ – 2.80 चावल – 3.77
लक्षित सार्वजनिक विवरण प्रणाली	1997	निर्धन और गैर-निर्धन बी.पी.एल. ए.पी.एल.	35 कि. खाद्यान्न	बी पी एल – गेहूँ – 4.15 चावल – 5.65 ए पी एल – गेहूँ – 6.10 चावल – 8.30
अंत्योदय अन्न योजना	2002	निर्धनों में सबसे निर्धन	35 कि. खाद्यान्न	गेहूँ – 2.00 चावल – 3.00
अन्नपूर्णा योजना	2000	दीन वरिष्ठ नागरिक	10 कि. खाद्यान्न	नि:शुल्क
राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम	2013	योग्य परिवार	5 कि. प्रति व्यक्ति प्रति माह	गेंहू–2.00 चावल–3.00 अनाज–1.00

***नोट** : बी पी एल: निर्धनता रेखा से नीचे, ए पी एल : निर्धनता रेखा से ऊपर।*
***स्रोत** : आर्थिक सर्वेक्षण*

से कमी वाले क्षेत्रों में खाद्य पूर्ति के माध्यम से अकाल और भुखमरी की व्यापकता को रोकने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके अतिरिक्त, आमतौर पर निर्धन परिवारों के पक्ष में कीमतों का संशोधन होता रहा है। न्यूनतम समर्थित कीमत और अधिप्राप्ति ने खाद्यान्नों के उत्पादन की वृद्धि में योगदान दिया है तथा कुछ क्षेत्रों में किसानों को आय सुरक्षा प्रदान की है।

तथापि सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अनेक आधारों पर कड़ी आलोचना का सामना करना पड़ा है। अनाजों से ठसाठस भरे अन्न भंडारों के बावजूद भुखमरी की घटनाएँ हो रही हैं। एफ.सी.आई. के भंडार अनाज से भरे हैं। कहीं अनाज सड़ रहा हैं तो कुछ स्थानों पर चूहे अनाज खा रहे हैं। नीचे दिया गया आरेख 4.2 में केन्द्रीय पूल में खाद्यान्न का स्टॉक और इसकी मोजा मानदडों में अंतर को दर्शाती है।

आओ चर्चा करें

आरेख 4.2 का अध्ययन करें और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें:

- हाल में किस वर्ष में सरकार के पास खाद्यान्न का स्टॉक सबसे अधिक था?
- एफ.सी.आई. का न्यूनतम बफ़र स्टॉक प्रतिमान क्या है?
- एफ.सी.आई. के भंडारों में खाद्यान्न ठसाठस क्यों भरा हुआ है?

अंत्योदय अन्न योजना

अंत्योदय अन्न योजना दिसंबर 2000 में शुरू की गई थी। इस योजना के अंतर्गत लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली में आने वाले निर्धनता रेखा से नीचे के परिवारों में से एक करोड़ लोगों की पहचान की गई। संबंधित राज्य के ग्रामीण विकास विभागों ने गरीबी रेखा से नीचे के गरीब परिवारों को सर्वेक्षण के द्वारा चुना। 2 रुपये प्रति किलोग्राम गेहूँ और 3 रुपये प्रति किलोग्राम की अत्यधिक आर्थिक सहायता प्राप्त दर पर प्रत्येक पात्र परिवार को 25 किलोग्राम अनाज उपलब्ध कराया गया। अनाज की यह मात्रा अप्रैल 2002 में 25 किलोग्राम से बढ़ा कर 35 किलोग्राम कर दी गई। जून 2003 और अगस्त 2004 में इसमें 50-50 लाख अतिरिक्त बी.पी.एल. परिवार दो बार जोड़े गए। इससे इस योजना में आने वाले परिवारों की संख्या 2 करोड़ हो गई।

सहायिकी (सब्सिडी) वह भुगतान है जो सरकार द्वारा किसी उत्पादक को बाज़ार कीमत की अनुपूर्ति के लिए किया जाता है। सहायिकी से घरेलू उत्पादकों के लिए ऊँची आय कायम रखते हुए, उपभोक्ता कीमतों को कम किया जा सकता है।

आरेख 4.2 : *न्यूनतम बफ़र स्टॉक का स्तर (करोड़ टन) एवं चावल और गेहूँ के मानक*

स्रोत : *भारतीय खाद्य निगम, 2018; बफ़र स्टॉक का स्तर 1 जुलाई 2017 से माननीय है*

वर्ष 2014 में एफ.सी.आई. के पास गेहूँ और चावल का भंडार 65.2 करोड़ टन था जो न्यूनतम बफ़र प्रतिमान से बहुत अधिक था। फिर भी यह बफ़र स्टॉक प्रतिमानों से लगातार ऊँचा बना रहा। सरकार द्वारा शुरू की गई विभिन्न योजनाओं के अधीन खाद्यान्नों के वितरण के द्वारा स्थिति में सुधार हुआ। अनाज वितरण से हालात सुधरे। इस बात पर आम सहमति है कि बफ़र स्टॉक का उच्च स्तर बेहद अवांछनीय है और यह बर्बादी भी है। विशाल खाद्य स्टॉक का भंडारण बर्बादी और अनाज की गुणवत्ता में ह्रास के अतिरिक्त उच्च रख-रखाव लागत के लिए भी ज़िम्मेदार है। न्यूनतम समर्थित कीमत को कुछ वर्ष के लिए स्थिर रखने पर गंभीरता से विचार करना चाहिए।

वर्धित न्यूनतम समर्थित कीमत पर अनाज की अधिक खरीदारी प्रमुख अनाज उत्पादक राज्यों जैसे पंजाब, हरियाणा और आंध्र प्रदेश की ओर से डाले गए दबावों का नतीजा है। इसके अलावा, चूँकि खरीदारी कुछ समृद्ध क्षेत्रों (पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश और कुछ सीमा तक पश्चिम बंगाल) में मुख्यत: दो फसलों-गेहूँ और चावल तक सीमित है, न्यूनतम समर्थित कीमत में वृद्धि ने विशेषतया खाद्यान्नों के अधिशेष वाले राज्यों के किसानों को अपनी भूमि पर मोटे अनाजों की खेती समाप्त कर धान और गेहूँ उपजाने के लिए प्रेरित किया है, जबकि मोटे अनाज गरीबों का प्रमुख भोजन है। धान की खेती के लिए सघन सिंचाई से पर्यावरण और जल स्तर में गिरावट भी आई है, जिससे इन राज्यों में कृषिगत विकास को बनाए रखने में खतरा पैदा हो गया है।

> न्यूनतम समर्थित कीमतों के बढ़ने से सरकार की खाद्यान्नों की वसूली अनुरक्षण लागत बढ़ गई है। एफ.सी.आई. की बढ़ती परिवहन और भंडारण लागत ने इसे और बढ़ा दिया है।

एन.एस.एस.ओ. न. 558 की रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण भारत में प्रति व्यक्ति चावल की खपत 6.38 किग्रा. वर्ष 2004-05 से घटकर 5.98 किग्रा. वर्ष 2011-12 में हो गया।

चित्र 4.5 : भंडारों में खाद्यान्न ले जाते हुए किसान

नगरीय भारत में प्रति व्यक्ति प्रति माह चावल की खपत 4.71 किग्रा. से घटकर 4.49 किग्रा. 2011-12 में हो गया। प्रतिव्यक्ति पी.डी.एस. चावल की खपत 2004-05 से 2011-12 तक ग्रामीण भारत में दुगनी हुई है और नगरीय भारत में 66 प्रतिशत बढ़ी हैं। पी.डी.एस. गेहूँ की प्रति माह प्रति व्यक्ति खपत 2004-05 से ग्रामीण एवं नगरीय भारत में दोगुना हो गई है।

पी.डी.एस. डीलर अधिक लाभ कमाने के लिए अनाज को खुले बाज़ार में बेचना, राशन दुकानों में घटिया अनाज बेचना, दुकान कभी-कभार खोलना जैसे अपचार करते हैं। राशन दुकानों में घटिया किस्म के अनाज का पड़ा रहना आम बात है, जो बिक नहीं पाता। यह एक बड़ी समस्या साबित हो रही है। जब राशन की दुकानें इन अनाजों को बेच नहीं पातीं, तो एफ.सी.आई. के गोदामों में अनाज का विशाल स्टॉक जमा हो जाता है। हाल के वर्षों में एक और कारण से सार्वजनिक वितरण प्रणाली में गिरावट आई है। पहले प्रत्येक परिवार के पास निर्धन या गैर-निर्धन राशन कार्ड था जिसमें चावल, गेहूँ, चीनी आदि वस्तुओं का एक निश्चित कोटा होता था। ये प्रत्येक परिवार को एक समान निम्न कीमत पर बेचे जाते थे।

आज आप जो तीन प्रकार के कार्ड और कीमतों की शृंखला देखते हैं, पहले यह नहीं थी। बड़ी संख्या में परिवार राशन की दुकानों से अनाज खरीद सकते थे। हाँ, उनका कोटा निश्चित था। इनमें निम्न आय वर्ग के परिवार शामिल थे, जिनकी आय निर्धनता रेखा से नीचे के परिवार की आय से थोड़ी ही अधिक थी। अब तीन भिन्न कीमतों वाले टी.पी.डी.एस. की व्यवस्था में निर्धनता रेखा से ऊपर वाले किसी भी परिवार को राशन दुकान पर बहुत कम छूट मिलती है। ए.पी.एल. परिवारों के लिए कीमतें लगभग उतनी ही ऊँची हैं जितनी खुले बाज़ार में, इसलिए राशन की दुकान से इन चीज़ों की खरीदारी के लिए उनको बहुत कम प्रोत्साहन प्राप्त है।

सहकारी समितियों की खाद्य सुरक्षा में भूमिका

भारत में विशेषकर देश के दक्षिणी और पश्चिमी भागों में सहकारी समितियाँ भी खाद्य सुरक्षा में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। सहकारी समितियाँ निर्धन लोगों को खाद्यान्न की बिक्री के लिए कम कीमत वाली दुकानें खोलती हैं। उदाहरणार्थ, तमिलनाडु में जितनी राशन की दुकानें है, उनमें से करीब 94 प्रतिशत सहकारी समितियों के माध्यम से चलाई जा रही हैं। दिल्ली में मदर डेयरी उपभोक्ताओं को दिल्ली सरकार द्वारा निर्धारित नियंत्रित दरों पर दूध और सब्ज़ियाँ उपलब्ध कराने में तेज़ी से प्रगति कर रही है। गुजरात में दूध तथा दुग्ध उत्पादों में अमूल एक और सफल सहकारी समिति का उदाहरण है। इसने देश में श्वेत क्रांति ला दी हैं। देश के विभिन्न भागों में कार्यरत सहकारी समितियों के और अनेक उदाहरण हैं, जिन्होंने समाज के विभिन्न वर्गों के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित कराई है।

इसी तरह, महाराष्ट्र में *एकेडमी आफ डेवलपमेंट साइंस* (ए.डी.एस.) ने विभिन्न क्षेत्रों में अनाज बैंकों की स्थापना के लिए गैर-सरकारी संगठनों के नेटवर्क में सहायता की है। ए.डी.एस. गैर-सरकारी संगठनों के लिए खाद्य सुरक्षा के विषय में प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण कार्यक्रम संचालित करती है। अनाज बैंक अब धीरे-धीरे महाराष्ट्र के विभिन्न भागों में खुलते जा रहे हैं। अनाज बैंकों की स्थापना, गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से उन्हें फैलाने और खाद्य सुरक्षा पर सरकार की नीति को प्रभावित करने में ए.डी.एस. की कोशिश रंग ला रही है। ए.डी.एस. अनाज बैंक कार्यक्रम को एक सफल और नए प्रकार के खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम के रूप में स्वीकृति मिली है।

सारांश

किसी देश की खाद्य सुरक्षा तब सुनिश्चित होती है, जब उसके सभी नागरिकों को पोषक भोजन उपलब्ध होता है। सभी व्यक्तियों के पास स्वीकार्य गुणवत्ता के खाद्य खरीदने की सामर्थ्य होती है और भोजन तक पहुँचने में कोई अवरोध नहीं होता। निर्धनता रेखा से नीचे रह रहे लोग खाद्य की दृष्टि से सदैव ही असुरक्षित रह सकते हैं, जबकि संपन्न लोग भी आपदाओं के समय खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित हो सकते हैं। यद्यपि भारत में लोगों का एक बड़ा वर्ग खाद्य और पोषक तत्वों की असुरक्षा से ग्रस्त है, सबसे अधिक प्रभावित समूह ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीन और गरीब परिवार, बहुत कम वेतन वाले कार्यों में लगे लोग और शहरी क्षेत्रों में मौसमी कार्यों में लगे अनियत श्रमिक हैं। देश के कुछ क्षेत्रों में खाद्य की दृष्टि से असुरक्षित लोगों की बड़ी संख्या तुलनात्मक रूप से बहुत अधिक है जैसे, आर्थिक रूप से पिछड़े राज्यों में जहाँ बहुत अधिक गरीबी है, जनजातियों वाले व दूरस्थ क्षेत्रों में और ऐसे क्षेत्रों में जहाँ प्राकृतिक आपदाएँ आती रहती हैं। समाज के सभी वर्गों के लिए खाद्य की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार ने सावधानीपूर्वक खाद्य सुरक्षा प्रणाली तैयार की है, जिसके दो घटक हैं: (क) बफ़र स्टॉक और (ख) सार्वजनिक वितरण प्रणाली। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अतिरिक्त कई निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम भी शुरू किए गए, जिनमें खाद्य सुरक्षा का घटक भी शामिल था। इनमें से कुछ कार्यक्रम हैं: एकीकृत बाल विकास सेवाएँ, काम के बदले अनाज, दोपहर का भोजन, अंत्योदय अन्न योजना आदि। खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने में सरकार की भूमिका के अतिरिक्त अनेक सहकारी समितियाँ और गैर-सरकारी संगठन भी हैं, जो इस दिशा में तेज़ी से काम कर रहे हैं।

अभ्यास

1. भारत में खाद्य सुरक्षा कैसे सुनिश्चित की जाती है?
2. कौन लोग खाद्य असुरक्षा से अधिक ग्रस्त हो सकते हैं?
3. भारत में कौन से राज्य खाद्य असुरक्षा से अधिक ग्रस्त हैं?
4. क्या आप मानते हैं कि हरित क्रांति ने भारत को खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बना दिया है? कैसे?
5. भारत में लोगों का एक वर्ग अब भी खाद्य से वंचित है? व्याख्या कीजिए।
6. जब कोई आपदा आती है तो खाद्य पूर्ति पर क्या प्रभाव होता है?
7. मौसमी भुखमरी और दीर्घकालिक भुखमरी में भेद कीजिए?
8. गरीबों को खाद्य सुरक्षा देने के लिए सरकार ने क्या किया? सरकार की ओर से शुरू की गई किन्हीं दो योजनाओं की चर्चा कीजिए।
9. सरकार बफ़र स्टॉक क्यों बनाती है?
10. टिप्पणी लिखें :
    (क) न्यूनतम समर्थित कीमत
    (ख) बफ़र स्टॉक
    (ग) निर्गम कीमत
    (घ) उचित दर की दुकान
11. राशन की दुकानों के संचालन में क्या समस्याएँ हैं?
12. खाद्य और संबंधित वस्तुओं को उपलब्ध कराने में सहकारी समितियों की भूमिका पर एक टिप्पणी लिखें।

संदर्भ

देव, एस. महेंद्र, कानन, के.पी. और रामचंद्रन, नीरा (सं.), 2003, *'टुआर्डस ए फूड सिक्योर इंडिया: इश्यूज़ एंड पॉलिसीज़*, इंस्टीच्यूट फॉर ह्यूमन डेवलपेमेंट, नयी दिल्ली।

एफ.ए.ओ. 1996, *वर्ल्ड फूड सम्मिट* 1995, फूड एण्ड एग्रीकल्चरल ऑर्गनाइजेशन, रोम।

आर्थिक सर्वेक्षण 2002-03, 2003-04, 2004-05, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली।

आई.आई.पी.एस. 2000, *नेशनल हेल्थ एंड फैमली सर्वे-2,* इंटरनेशलन इंस्टीच्यूट ऑफ पॉपुलेशन साइंसेज़, मुंबई।

सागर, विद्या, 2004, *फ़ूड सिक्युरिटी इन इंडिया,* पेपर प्रजेंटेड इन ए.डी.आर.एफ.-आई.एफ.आर.आई. फ़ाइनल मीटिंग ऑन फ़ूड सिक्युरिटी इन इंडिया, सितंबर 10-11, नयी दिल्ली।

सक्सेना, एन.सी., 2004, *सेनेरजाइज़िंग गर्वमेंट एफर्ट फॉर फ़ूड सिक्युरिटी,* स्वामीनाथन, एम.एस. और मेडरानो, पैड्रो, (सं.) में, टुवार्डस हंगर फ्री इंडिया, ईस्ट-वेस्ट बुक्स, चेन्नई।

सक्सेना, एन.सी., 2004, *रिऑर्गनाइज़िंग पॉलिसीज़ एंड डेलेवरी फॉर एलीवियेटिंग हंगर एंड मालन्यूट्रिशन,* नेशनल फूड सिक्युरिटी सम्मिट, नयी दिल्ली में प्रस्तुत पर्चा।

सेन, ए.के., 1983, *पॉवर्टी एंड फैमिंस : एन ऐसे ऑन इनटाईटलमेंट एंड डेप्रिवेशन,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

शर्मा, रेखा और मीनाक्षी, जे.वी., 2004, *माइक्रोन्यूट्रियेंट डिफिसिएन्सीज़ इन रूरल डाइट्स,* टुवार्डस हंगर फ्री इंडिया: फ्रॉम विजन टू एक्शन, प्रोसीडिंग्स ऑफ कंसलटेशन ऑन 'टुवार्डस हंगर फ्री इंडिया : काउंट डाउन फ्रॉम 2007' नयी दिल्ली।

यू.एन. 1975, *रिपोर्ट ऑफ द वर्ल्ड फूड कॉन्फ्रेंस 1975 (रोम),* यूनाइटेड नेशंस, न्यूयार्क।

भारतीय खाद्य निगम; (fci.gov.in/stocks.php/view=18)

विषय-सूची

अध्याय 1 — 1
लोकतंत्र क्या? लोकतंत्र क्यों?

अध्याय 2 — 20
संविधान निर्माण

अध्याय 3 — 36
चुनावी राजनीति

अध्याय 4 — 60
संस्थाओं का कामकाज

अध्याय 5 — 80
लोकतांत्रिक अधिकार

0973CH01

अध्याय 1

लोकतंत्र क्या?
लोकतंत्र क्यों?

परिचय

लोकतंत्र क्या है? इसकी विशेषताएँ क्या है? हम बहुत सरल परिभाषा से शुरुआत करते हैं। फिर हम बारी-बारी से इन बिंदुओं का व्यावहारिक अर्थ जानेंगे। यहाँ हमारा उद्देश्य किसी भी सरकार के लोकतांत्रिक होने की न्यूनतम विशेषताओं को चिह्नित करना है। यह अध्याय पढ़ लेने के बाद हम लोकतांत्रिक और गैर-लोकतांत्रिक शासन में अंतर कर सकते हैं। अध्याय के अंत में हम इस न्यूनतम लक्ष्य से आगे बढ़कर लोकतंत्र की वृहत्तर परिभाषा पर आएँगे।

समकालीन दुनिया में लोकतंत्र ही सबसे लोकप्रिय शासन पद्धति है। पर ऐसा क्यों है? कौन-सी चीज़ इसे दूसरी व्यवस्थाओं से बेहतर बनाती है? क्या यही शासन की सर्वोत्तम व्यवस्था है? इन सवालों पर हम इस अध्याय के बाद वाले हिस्से में चर्चा करेंगे।

1.1 लोकतंत्र क्या है?

आप सरकार के विभिन्न रूपों के बारे में पढ़ चुके हैं। लोकतंत्र की अब तक की आपकी समझ के आधार पर, कुछ उदाहरण देते हुए सरकारों की कुछ सामान्य विशेषताएँ लिखें:

- लोकतांत्रिक सरकारें
- गैर-लोकतांत्रिक सरकारें

परिभाषा की ज़रूरत क्यों?

आगे बढ़ने से पहले, आइए सबसे पहले एक मेधावी छात्रा मेरी की आपत्ति पर गौर किया जाए। वह लोकतंत्र को परिभाषित करने के इस तरीके को पसंद नहीं करती और कुछ बुनियादी सवाल पूछना चाहती है। उसकी अध्यापिका मेटिल्डा लिंगदोह ने उसके सवालों का जवाब देना शुरू किया तो कक्षा की अन्य छात्राएँ भी इस चर्चा में भाग लेने लगीं।

मेरी: मैडम, मुझे यह तरीका ठीक नहीं लगता। पहले लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के बारे में चर्चा किया और अब आकर हम लोकतंत्र का मतलब जानने की कोशिश कर रहे हैं। मेरे कहने का मतलब है कि इस काम को ही हमें पहले करना था और पहले अध्याय वाली पढ़ाई अब। क्या ऐसा ठीक नहीं होता?

लिंगदोह मैडम: तुम्हारी बातों में दम है। पर क्या हम अपने सामान्य जीवन में भी ऐसा ही नहीं करते? क्या हम कलम, बरसात या प्रेम जैसे शब्दों का उपयोग करने के पहले इनकी परिभाषा स्पष्ट करना ज़रूरी मानते हैं? ज़रा सोचो, क्या हमारे पास इन शब्दों की बहुत स्पष्ट और सर्वमान्य परिभाषा है? शब्दों का उपयोग करके ही हम उनका अर्थ जानते हैं।

मेरी: फिर परिभाषा की ज़रूरत ही क्यों है?

लिंगदोह मैडम: हमें परिभाषा की ज़रूरत तभी पड़ती है जब हमें किसी शब्द का उपयोग करने में परेशानी होती है। हमें बारिश की परिभाषा की ज़रूरत तभी होती है जब हमें बूँदा-बाँदी और बादल फटने जैसी स्थिति और सामान्य बरसात में फ़र्क करना हो। लोकतंत्र पर भी यही बात लागू होती है। हमें इसके लिए भी स्पष्ट परिभाषा की ज़रूरत है क्योंकि लोग इस शब्द का प्रयोग अलग-अलग अर्थों के लिए करते हैं, बहुत अलग-अलग तरह की सरकारें भी खुद को लोकतांत्रिक ही कहती हैं।

रिबियांग: लेकिन हमें परिभाषा बनाने की ज़रूरत ही क्या है? एक दिन आपने हमें अब्राहम लिंकन का एक वाक्य सुनाया था: "लोगों के लिए, लोगों की और लोगों के द्वारा चलने वाली शासन व्यवस्था ही लोकतंत्र है।" मेघालय में हम स्वयं पर राज करते रहे हैं। इसे सभी लोग मानते भी हैं। हमें इसमें बदलाव करने की क्या ज़रूरत है?

लिंगदोह मैडम: मैं यह नहीं कहती कि इसमें बदलाव करने की ज़रूरत है। मुझे भी यह परिभाषा बहुत सुंदर लगती है। जब तक हम इस मसले पर खुद से विचार न करें तब तक यह तय करना मुश्किल होगा कि लोकतंत्र की यही सर्वोत्तम परिभाषा है। हमें किसी चीज को सिर्फ़ इसी आधार पर स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए कि किसी बहुत नामी-गिरामी आदमी ने उसके लिए कुछ बहुत अच्छा कहा है या सभी लोग उसे सही मानते हैं।

योलांदा: मैडम, क्या मैं कुछ कह सकती हूँ? हमें कोई परिभाषा तलाशने की ज़रूरत नहीं है। मैंने कहीं पढ़ा है कि 'डेमोक्रेसी' यूनानी शब्द 'डेमोक्रेशिया' से बना है। यूनानी में 'डेमोस' का अर्थ होता है 'लोग' और 'क्रेशिया' का अर्थ होता है 'शासन'। इस प्रकार डेमोक्रेसी अर्थात लोकतंत्र का अर्थ है लोगों का शासन। यही सही अर्थ है। फिर परिभाषा की क्या ज़रूरत है?

लिंगदोह मैडम: इस सवाल पर विचार करने का यह भी बहुत उपयोगी तरीका है। पर मैं इतना कहूँगी कि सिर्फ शब्द की उत्पत्ति से उसकी परिभाषा निकालने का तरीका हरदम उपयोगी नहीं रहता। शब्द का अर्थ हमेशा अपने मूल से जुड़ा या बंधा नहीं रहता। समय और प्रयोग के साथ-साथ उसका अर्थ बदलता भी रहता है। अब कंप्यूटर शब्द को ही लो। यह कंप्यूटिंग अर्थात गणना शब्द से बना है। मुश्किल गणनाओं को सरलता से करने के लिए बने यंत्र को ही कंप्यूटर कहा जाता था। दरअसल ये बहुत शक्तिशाली कैलकुलेटर थे। पर आज शायद ही कोई इस अर्थ में कंप्यूटर शब्द का प्रयोग करता है। अब तो कंप्यूटर का उपयोग लिखने, पढ़ने, डिजाइन बनाने, संगीत बनाने-सुनने और फिल्म देखने में होता है। शब्द वही

मैंने तो यह भी सुना है कि लोकतंत्र एक ऐसी व्यवस्था है जहाँ लोक पर तंत्र हावी रहता है। इसके बारे में आपकी क्या राय है?

रहते हैं पर समय बीतने के साथ उनका अर्थ बदल सकता है। ऐसी स्थिति में सिर्फ शब्दों के मूल अर्थ पर ही भरोसा करना बहुत उपयोगी नहीं होता।

मेरी: मैडम, आपके कहने का मतलब यह है कि इस विषय पर खुद सोचने का कोई शॉर्टकट नहीं है। हमें इसके अर्थ पर गौर करना ही होगा और इसकी परिभाषा गढ़नी होगी।

लिंगदोह मैडम: एकदम सही। इसलिए आओ अब यह काम कर ही डालें।

खुद करें, खुद सीखें

आइए लिंगदोह मैडम की बात को गंभीरता से लें और कलम, बारिश और प्रेम जैसे सदा प्रयोग होने वाले साधारण शब्दों की ठीक-ठीक परिभाषा लिखने की कोशिश करें। जैसे, क्या कलम की कोई ऐसी स्पष्ट परिभाषा है जो उसे पेंसिल, ब्रुश, हाइलाइटर या मार्कर से अलग बताती हो?

- **इस प्रयोग से आपने क्या सीखा?**
- **लोकतंत्र का अर्थ समझने में इस अनुभव ने हमें क्या-क्या सिखाया?**

एक सरल परिभाषा

आइए, उस चर्चा पर फिर से गौर करें जो खुद को लोकतांत्रिक बताने का दावा करने वाली सरकारों के बीच की समानताओं और असमानताओं से जुड़ी थी। सभी लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं की पहचान के लिए एक बहुत ही सरल पैमाना था लोगों के पास अपनी सरकार को चुनने का अधिकार होना। इसलिए, हम एक सरल परिभाषा से शुरुआत कर सकते हैं। **लोकतंत्र शासन का एक ऐसा रूप है जिसमें शासकों का चुनाव लोग करते हैं।**

यह एक उपयोगी शुरुआत है। यह परिभाषा बहुत स्पष्ट ढंग से लोकतांत्रिक और गैर-लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में अंतर कर देती है। म्यांमार के सैनिक शासकों का चुनाव लोगों ने नहीं किया है। जिन लोगों का सेना पर नियंत्रण था वे देश के शासक बन गए। शासक के फ़ैसलों में लोगों की कोई भागीदारी नहीं है। पिनोशे (चिले) जैसे तानाशाहों का चुनाव लोग नहीं करते। यही बात राजशाहियों पर भी लागू होती है। सऊदी अरब के शाह लोगों द्वारा शासक नहीं चुने गए हैं बल्कि राजपरिवार में जन्म लेने के कारण उन्होंने यह हक पाया है।

लेकिन यह सरल परिभाषा पूर्ण या पर्याप्त नहीं है। इससे हमें यह समझ में आता है कि लोकतंत्र का मतलब लोगों का शासन है। पर इस परिभाषा का प्रयोग यदि हमने बिना सोचे-समझे किया तो फिर उन सभी सरकारों को लोकतांत्रिक कहना पड़ेगा जो चुनाव करवाती हैं और फिर हम सही नतीजे पर नहीं पहुँच पाएँगे। जैसा कि हम अध्याय 3 में देखेंगे कि समकालीन दुनिया की हर सरकार, चाहे वह लोकतांत्रिक हो या न हो, खुद को लोकतांत्रिक कहना, कहलाना चाहती है। इसलिए हमें असली लोकतंत्र और दिखावटी लोकतंत्र वाली सरकारों के बीच सावधानीपूर्वक फ़र्क करना होगा। यह काम हम तभी कर पाएँगे जब हम इस परिभाषा के एक-एक शब्द को सावधानी से समझें और लोकतांत्रिक सरकार की विशेषताओं को जानें।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

रिबियांग स्कूल से घर गई और उसने लोकतंत्र के बारे में कुछ अन्य प्रसिद्ध व्यक्तियों के कथनों को जमा किया। इस बार उसने इन उक्तियों को कहने या लिखने वाले के नाम का उपयोग नहीं किया। वह चाहती है कि आप भी इन्हें पढ़ें और बताएँ कि ये उक्तियाँ कितनी अच्छी या उपयोगी हैं?

- लोकतंत्र हर व्यक्ति को अपना शोषक आप बन जाने का अधिकार देता है।
- लोकतंत्र का मतलब है अपने तानाशाहों का चुनाव करना पर उनके मुँह से अपनी इच्छा की बातें सुनने के बाद।
- व्यक्ति की न्यायप्रियता लोकतंत्र को संभव बनाती है लेकिन अन्याय के प्रति व्यक्ति का रुझान लोकतंत्र को ज़रूरी बनाता है।
- लोकतंत्र शासन का ऐसा तरीका है जो सुनिश्चित करता है कि हम जैसी सरकार के लायक हैं वैसी सरकार ही हम पर शासन करे।
- लोकतंत्र की सारी बुराइयों को और अधिक लोकतंत्र से ही दूर किया जा सकता है।

© स्टेफन पेरे, थाइलैंड, केगल कार्टून्स।

कार्टून बूझें

इराक में अमेरिका और अन्य विदेशी शक्तियों की उपस्थिति में हुए चुनाव के समय यह कार्टून बना था। यह कार्टून क्या कहता है? इसमें 'डेमोक्रेसी' को इस तरह क्यों लिखा गया है?

1.2 लोकतंत्र की विशेषताएँ

हमने इस सरल परिभाषा के साथ शुरुआत की है कि **लोकतंत्र शासन का एक रूप है जिसमें जनता शासकों का चुनाव करती है।** इससे अनेक सवाल उठ खड़े होते हैं:

- इस परिभाषा के अनुसार **शासक** कौन हैं? किसी सरकार को लोकतांत्रिक कहे जाने के लिए उसके किन अधिकारियों का चुना हुआ होना आवश्यक है। लोकतंत्र में वे कौन-से फ़ैसले हैं जो बिना चुने हुए अधिकारी भी ले सकते हैं?
- किस तरह के **चुनाव** को लोकतांत्रिक चुनाव कहते हैं? किसी चुनाव को लोकतांत्रिक कहने के लिए किन शर्तों को पूरा किया जाना ज़रूरी है?
- कौन **लोग** शासकों का चुनाव कर सकते हैं या खुद शासक चुने जा सकते हैं? क्या इसमें प्रत्येक नागरिक का बराबरी की हैसियत से भाग लेना ज़रूरी है? क्या कोई लोकतांत्रिक व्यवस्था अपने कुछ नागरिकों को इस अधिकार से वंचित कर सकती है?
- **सरकार के किस स्वरूप** को लोकतांत्रिक कहेंगे? क्या चुने हुए शासक लोकतंत्र में अपनी मर्ज़ी से सब कुछ कर सकते हैं या लोकतांत्रिक सरकार के लिए कुछ लक्ष्मणरेखाओं में बंधकर काम करना ज़रूरी है? क्या लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को नागरिकों के कुछ अधिकारों का आदर करना चाहिए?

आइए, कुछ उदाहरणों के साथ इन सब पर बारी-बारी से विचार करें।

प्रमुख फ़ैसले निर्वाचित नेताओं के हाथ

पाकिस्तान में ज़नरल परवेज़ मुशर्रफ़ ने अक्तूबर 1999 में सैनिक तख्तापलट की अगुवाई की। उन्होंने लोकतांत्रिक ढंग से चुनी हुई सरकार को

कार्टून बूझें

सीरिया पश्चिम एशिया का एक छोटा-सा देश है। शासक बाथ पार्टी और उसकी कुछ सहयोगी पार्टियों को ही देश में राजनैतिक गतिविधियों की अनुमति है। क्या इस कार्टून को चीन और मैक्सिको पर भी लागू किया जा सकता है? लोकतंत्र के माथे पर पत्तों से बने ताज का क्या महत्त्व है?

© एमद हज़्ज़ाज़, जॉर्डन, केगल कार्टून्स, 7 जून 2005

उखाड़ फेंका और खुद को देश का 'मुख्य कार्यकारी' घोषित किया। बाद में उन्होंने खुद को राष्ट्रपति घोषित किया और 2002 में एक जनमत संग्रह कराके अपना कार्यकाल पाँच साल के लिए बढ़वा लिया। पाकिस्तानी मीडिया, मानवाधिकार संगठनों और लोकतंत्र के लिए काम करने वालों ने आरोप लगाया कि जनमत संग्रह एक धोखाधड़ी है और इसमें बड़े पैमाने पर गड़बड़ियाँ की गई हैं। अगस्त 2002 में उन्होंने 'लीगल फ्रेमवर्क आर्डर' के ज़रिए पाकिस्तान के संविधान को बदल डाला। इस आर्डर के अनुसार राष्ट्रपति, राष्ट्रीय और प्रांतीय असेंबलियों को भंग कर सकता है। मंत्रिपरिषद् के कामकाज पर एक राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् की निगरानी रहती है जिसके ज़्यादातर सदस्य फ़ौजी अधिकारी हैं। इस कानून के पास हो जाने के बाद राष्ट्रीय और प्रांतीय असेंबलियों के लिए चुनाव कराए गए। इस प्रकार पाकिस्तान में चुनाव भी हुए, चुने हुए प्रतिनिधियों को कुछ अधिकार भी मिले लेकिन सर्वोच्च सत्ता सेना के अधिकारियों और ज़नरल मुशर्रफ़ के पास थी।

स्पष्ट है कि ज़नरल मुशर्रफ़ के शासन वाले पाकिस्तान को लोकतंत्र न कहने के अनेक ठोस कारण हैं। लेकिन यहाँ सिर्फ़ एक कारण पर ही चर्चा करते हैं। क्या हम कह सकते हैं कि पाकिस्तान के लोगों ने अपने शासकों का चुनाव किया है? हम ऐसा नहीं कह सकते। लोगों ने राष्ट्रीय और प्रांतीय असेंबलियों के लिए अपने प्रतिनिधियों का चुनाव किया है। लेकिन चुने हुए प्रतिनिधि वास्तविक शासक नहीं थे। वे अंतिम फ़ैसला नहीं कर सकते। अंतिम फ़ैसला सेना के अधिकारियों और ज़नरल मुशर्रफ़ के हाथ में था जो जनता द्वारा नहीं चुने गए थे। ऐसा तानाशाही और राजशाही वाली अनेक शासन व्यवस्थाओं में होता है। वहाँ औपचारिक रूप से चुनी हुई

संसद और सरकार तो होती है पर असली सत्ता उन लोगों के हाथ में होती है जिन्हें जनता नहीं चुनती। कुछ देशो में असली ताकत विदेशी शक्तियों के हाथ में रहती है न कि चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथ में। इसे लोगों का शासन नहीं कहा जा सकता।

इससे हम लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की पहली विशेषता पर पहुँचते हैं। **लोकतंत्र में अंतिम निर्णय लेने की शक्ति लोगों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के पास ही होनी चाहिए।**

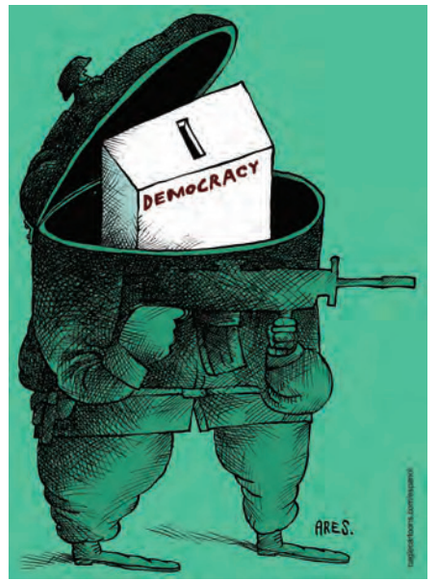

© ऐरेस, केगल कार्टूस डॉट कॉम, केगल कार्टूस | 22 जनवरी 2005

कार्टून बूझें

यह कार्टून लातिनी अमेरिका के संदर्भ में बना था। क्या आपको लगता है कि यह पाकिस्तान पर भी फिट बैठता है? कुछ अन्य देशों के बारे में सोचिए जिन पर यह कार्टून लागू हो सकता है। क्या ऐसा कई बार हमारे देश में भी होता है?

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावी मुकाबला

चीन की संसद को कवांगुओ रेममिन दाइवियाओ दाहुई (राष्ट्रीय जन संसद) कहते हैं। चीन की संसद के लिए प्रति पाँच वर्ष बाद नियमित रूप से चुनाव होते हैं। इस संसद को देश का राष्ट्रपति नियुक्त करने का अधिकार है। इसमें पूरे चीन से करीब 3000 सदस्य आते हैं। कुछ सदस्यों का चुनाव सेना भी करती है। चुनाव लड़ने से पहले सभी उम्मीदवारों को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी से मंजूरी लेनी होती है। 2002-03 में हुए चुनावों में सिर्फ कम्युनिस्ट पार्टी और उससे संबद्ध कुछ छोटी पार्टियों के सदस्यों को ही चुनाव लड़ने की अनुमति मिली। सरकार सदा कम्युनिस्ट पार्टी की ही बनती है।

1930 में आज़ाद होने के बाद से मैक्सिको में हर छः वर्ष बाद राष्ट्रपति चुनने के लिए चुनाव कराए जाते हैं। देश में कभी भी फ़ौजी शासन या तानाशाही नहीं आई। लेकिन सन् 2000 तक हर चुनाव में पीआरआई (इंस्टीट्यूशनल रिवोल्यूशनरी पार्टी) नाम की एक पार्टी को ही जीत मिलती थी। विपक्षी दल चुनाव में हिस्सा लेते थे पर कभी भी उन्हें जीत हासिल नहीं होती थी। चुनाव में तरह-तरह के हथकंडे अपनाकर हर हाल में जीत हासिल करने के लिए पीआरआई कुख्यात थी। सरकारी दफ़्तरों में काम करने वाले सभी लोगों के लिए पार्टी की बैठकों में जाना अनिवार्य था। सरकारी स्कूलों के अध्यापक अपने छात्र-छात्राओं के माँ-बाप से पीआरआई के लिए वोट देने को कहते थे। मीडिया भी जब-तब विपक्षी दलों की आलोचना करने के अलावा उनकी गतिविधियों को नज़रअंदाज ही करती थी। कई बार एकदम अंतिम क्षणों में मतदान केंद्रों को एक जगह से हटाकर दूसरी जगह कर दिया जाता था जिससे अनेक लोग वोट ही नहीं डाल पाते थे। पीआरआई अपने उम्मीदवारों के चुनाव अभियान पर काफ़ी पैसे खर्च करती थी।

क्या हम ऊपर वर्णित चुनावों को लोगों द्वारा अपना शासक चुनने का उदाहरण मान सकते हैं? इन उदाहरणों को पढ़ने के बाद तो यही लगता है कि हम ऐसा नहीं कह सकते। यहाँ काफ़ी सारी समस्याएँ हैं। चीन के चुनावों में

जाने कहाँ-कहाँ की बातें हो रही हैं! क्या लोकतंत्र का मतलब सिर्फ सरकारों और शासनों से ही है? क्या हम अपनी कक्षा में लोकतांत्रिक व्यवस्था की बात कर सकते हैं? क्या हम अपने परिवार में लोकतंत्र की बात कर सकते हैं? क्या हम एक लोकतांत्रिक परिवार की बात कर सकते हैं?

लोगों के सामने कोई वास्तविक और गंभीर विकल्प ही नहीं होता। लोगों को शासक दल या उसके द्वारा स्वीकृत उम्मीदवारों को ही वोट देना होता है। क्या हम इसे मनपसंद चुनाव कह सकते हैं? मैक्सिको के मामले में ऐसा लगता है कि कहने को विकल्प होते हुए भी असल में वहाँ की जनता के पास कोई दूसरा विकल्प न था। किसी भी तरह वहाँ शासक दल को पराजित नहीं किया जा सकता था, लोगों के चाहने पर भी नहीं। वहाँ हुए चुनाव निष्पक्ष नहीं थे।

इस प्रकार अब हम लोकतंत्र की अपनी समझ में एक अन्य विशेषता या गुण को जोड़ सकते हैं। लोकतंत्र के लिए सिर्फ़ चुनाव कराना ही पर्याप्त नहीं होता। चुनाव में एक से ज़्यादा असली राजनैतिक विकल्पों के बीच चुनने की स्थिति भी होनी चाहिए। लोगों के पास यह विकल्प रहना चाहिए कि वे चाहें तो शासक दल को गद्दी से उतार दें। इस प्रकार, **लोकतंत्र निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनावों पर आधारित होना चाहिए ताकि सत्ता में बैठे लोगों के लिए जीत-हार के समान अवसर हों।** लोकतांत्रिक चुनावों के बारे में हम अध्याय 3 में और बातें जानेंगे।

एक व्यक्ति-एक वोट-एक मोल

पहले हमने पढ़ा है कि किस तरह लोकतंत्र के लिए होने वाला संघर्ष सार्वभौम वयस्क मताधिकार के साथ जुड़ा था। अब इस सिद्धांत को लगभग पूरी दुनिया में मान लिया गया है। पर किसी व्यक्ति को मतदान के समान अधिकार से वंचित करने के उदाहरण भी कम नहीं हैं।

- 2015 तक सऊदी अरब में औरतों को वोट देने का अधिकार नहीं था।
- एस्टोनिया ने अपने यहाँ नागरिकता के नियम कुछ इस तरह से बनाए हैं कि रूसी अल्पसंख्यक समाज के लोगों को मतदान का अधिकार हासिल करने में मुश्किल होती है।
- फिजी की चुनाव प्रणाली में वहाँ के मूल वासियों के वोट का महत्त्व भारतीय मूल के फिजी नागरिक के वोट से ज़्यादा है।

लोकतंत्र राजनैतिक समानता के बुनियादी सिद्धांत पर आधारित है। इस प्रकार हम लोकतंत्र की तीसरी विशेषता को जान लेते हैं: **लोकतंत्र में हर वयस्क नागरिक का एक वोट होना चाहिए और हर वोट का एक समान मूल्य होना चाहिए।** अध्याय 3 में हम इस बारे में ज़्यादा विस्तार से पढ़ेंगे।

कार्टून बूझें

यह कार्टून लातिनी अमेरिका के लोकतंत्र के कामकाज से संबंधित है। इसमें सिक्कों की थैलियों का क्या मतलब है? राजनीति में थैलीशाहों की भूमिका के बारे में कार्टून बनाने वाला क्या कहना चाहता है? क्या इस कार्टून को भारत पर भी लागू किया जा सकता है?

© नारिकॉन, एल इकोनोमिस्ता, मैक्सिको, केगल कार्टून। 17 मई 2005

© जान ट्रेवर, अल्बूकर्क जर्नल, अमेरिका, केगल कार्टूंस।

कार्टून बूझें

यह कार्टून सद्दाम हुसैन के शासन को उखाड़ फेंकने के बाद हुए चुनावों से संबंधित है। उन्हें जेल में बंद दिखाया गया है। यहाँ कार्टूनिस्ट क्या कहना चाहता है? इस कार्टून के संदेश और अध्याय में आए पहले कार्टून के संदेश की तुलना कीजिए।

कानून का राज और अधिकारों का आदर

जिंबाब्वे को 1980 में अल्पसंख्यक गोरों के शासन से मुक्ति मिली। उसके बाद देश पर जानु–पीएफ दल का राज है जिसने देश के स्वतंत्रता–संघर्ष की अगुवाई की थी। इसके नेता राबर्ट मुगाबे आज़ादी के बाद से ही शासन कर रहे थे। चुनाव नियमित रूप से होते थे और सदा जानु–पीएफ दल ही जीतता था। राष्ट्रपति मुगाबे कम लोकप्रिय नहीं थे पर वे चुनाव में गलत तरीके भी अपनाते थे। आज़ादी के बाद से उनकी सरकार ने कई बार संविधान में बदलाव करके राष्ट्रपति के अधिकारों में वृद्धि की थी और उसकी ज़वाबदेही को कम किया था। विपक्षी दलों के कार्यकर्ताओं को परेशान किया जाता था और उनकी सभाओं में गड़बड़ कराई जाती थी। सरकार विरोधी प्रदर्शनों और आंदोलनों को गैर–कानूनी घोषित कर दिया गया था। एक ऐसा कानून भी था जो राष्ट्रपति की आलोचना के अधिकार को सीमित करता था। टेलीविजन और रेडियो पर सरकारी नियंत्रण था और उन पर सिर्फ़ शासक दल के विचार ही प्रसारित होते थे। अखबार स्वतंत्र थे पर सरकार की आलोचना करने वाले पत्रकारों को परेशान किया जाता था। सरकार ने कुछ ऐसे अदालती फ़ैसलों की परवाह नहीं की जो उसके खिलाफ़ जाते थे और उसने जजों पर दबाव भी डाला। 2017 में मुगाबे को राष्ट्रपति पद से हटा दिया गया।

जिंबाब्वे का उदाहरण बताता है कि शासकों के लिए बार–बार जनादेश पाना लोकतंत्र की एक ज़रूरत है पर इतना ही पर्याप्त नहीं है। लोकप्रिय नेता भी अलोकतांत्रिक हो सकते हैं। लोकप्रिय नेता भी तानाशाह हो सकते हैं। अगर हम लोकतंत्र को परखना चाहते हैं तो चुनावों पर नजर डालना ज़रूरी है। पर उतना ही ज़रूरी है कि चुनाव के पहले और बाद की स्थितियों पर भी नज़र डाली जाए। चुनाव के पहले सत्ता पक्ष के विरोधी समूहों के कामकाज़ समेत सभी तरह की राजनैतिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त गुंजाइश रहनी चाहिए। इसके लिए ज़रूरी है कि सरकार नागरिकों के

जिंबाब्वे की बात क्यों करें? मैं तो अपने देश में भी इस तरह की घटनाओं की खबर अखबारों में पढ़ते रहती हूँ। हम इसकी चर्चा क्यों नहीं करते?

कार्टून बूझें

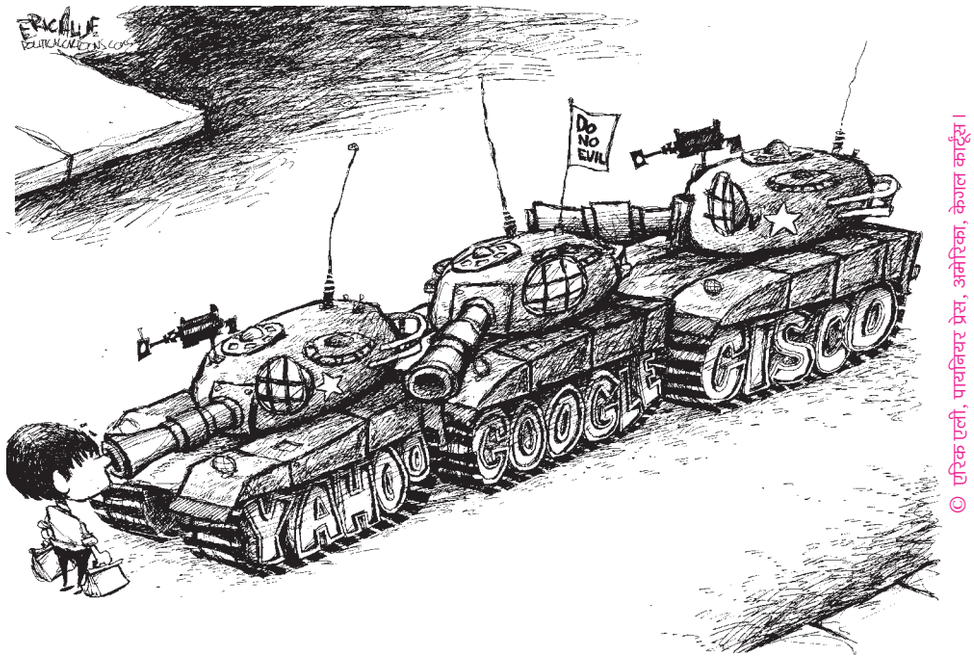

© एरिक एली, पायनियर प्रेस, अमेरिका, केगल कार्टूंस।

चीनी सरकार ने 'गूगल' और 'याहू' जैसी लोकप्रिय वेबसाइटों पर बंदिशें लगाकर इंटरनेट पर सूचना के मुक्त प्रवाह को रोक दिया। इस कार्टून में इसी पर टिप्पणी की गई है। टैंक और निहत्थे छात्र की तस्वीर पाठक को चीन के हाल के इतिहास की एक अन्य बड़ी घटना की याद दिलाते हैं। वह घटना क्या थी? उसके बारे में अन्य ब्यौरे जुटाओ।

कुछ बुनियादी अधिकारों का आदर करे। उनको सोचने की, अपनी राय बनाने की, सार्वजनिक रूप से अपने विचार व्यक्त करने की, संगठन बनाने की, विरोध करने और अन्य राजनैतिक गतिविधियाँ करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। कानून की नज़र में सभी लोगों की समानता होनी चाहिए। इन अधिकारों की रक्षा स्वतंत्र न्यायपालिका को करनी चाहिए जिसके आदेशों का पालन सब लोग करते हों। इन अधिकारों के बारे में हम अधिक विस्तार से अध्याय 5 में पढ़ेंगे।

इसी प्रकार कुछ दूसरी शर्तें हैं जो चुनाव के बाद सरकार चलाने के तौर-तरीकों पर लागू होती हैं। एक लोकतांत्रिक सरकार सिर्फ इस कारण से मनमानी नहीं कर सकती कि उसने चुनाव जीता है। उसे भी कुछ बुनियादी तौर-तरीकों का पालन करना होता है। खास तौर से उसे अल्पमत वाले समूहों को दी गई कुछ गारंटियों का आदर करना होता है। हर प्रमुख फ़ैसला लंबे विचार-विमर्श के बाद लेना होता है। हर पदाधिकारी को उस पद के साथ जुड़े अधिकार और जिम्मेदारियाँ संविधान द्वारा दी जाती हैं। ये सभी न सिर्फ़ जनता के प्रति उत्तरदायी हैं बल्कि अन्य स्वतंत्र अधिकारियों के प्रति भी उनकी जवाबदेही होती है। इसके बारे में हम ज़्यादा विस्तार से अध्याय 4 में पढ़ेंगे।

इस प्रकार हम लोकतंत्र की चौथी और अंतिम विशेषता को रेखांकित कर सकते हैं: **एक लोकतांत्रिक सरकार संवैधानिक कानूनों और नागरिक अधिकारों द्वारा खींची लक्ष्मण रेखाओं के भीतर ही काम करती है।**

परिभाषाओं का सारांश

आइए, अब तक हुई चर्चा को समेटें। हमने लोकतंत्र की इस सरल सी परिभाषा से बात शुरू की थी कि **लोकतंत्र सरकार का एक ऐसा रूप है जिसमें शासकों का चुनाव लोग करते हैं।** हमने पाया कि जब तक हम इसके कुछ प्रमुख शब्दों के बारे में और स्पष्ट न हो जाएँ, यह परिभाषा पर्याप्त नहीं है। अनेक उदाहरणों के जरिए हमने शासन के एक तरीके के रूप में लोकतंत्र की चार विशेषताओं को

रेखांकित किया। इनके अनुसार लोकतंत्र शासन का एक ऐसा रूप है जिसमें:

- लोगों द्वारा चुने गए शासक ही सारे प्रमुख फैसले करते हैं;
- चुनाव लोगों के लिए निष्पक्ष अवसर और इतने विकल्प उपलब्ध कराता है कि वे चाहें तो मौजूदा शासकों को बदल सकते हैं;
- यह विकल्प और अवसर सभी लोगों को समान रूप से उपलब्ध हों; और
- इस चुनाव से बनी सरकार संविधान द्वारा तय बुनियादी कानूनों और नागरिक अधिकारों के दायरे को मानते हुए काम करती है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

लोकतंत्र के कामकाज या उसकी अनुपस्थिति के इन पाँच उदाहरणों को पढ़िए। इनका मेल लोकतंत्र की उन प्रासंगिक विशेषताओं से कराएँ जिनकी चर्चा ऊपर की गई है।

उदाहरण	विशेषताएँ
भूटान नरेश ने घोषणा की है कि आगे से वे चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा दी गई सलाह पर काम करेंगे	कानून का शासन
भारत से गए अनेक तमिल मजूदरों को श्रीलंका में वोट डालने का अधिकार नहीं दिया गया	अधिकारों का सम्मान
नेपाल नरेश ने राजनैतिक जमावड़ों, प्रदर्शनों और रैलियों पर रोक लगा दी	एक व्यक्ति, एक वोट, एक मोल
भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने बिहार विधानसभा भंग करने को असंवैधानिक ठहराया	स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावी मुकाबला
बांग्लादेश की राजनैतिक पार्टियाँ इस बात पर सहमत हुईं कि चुनाव के समय किसी पार्टी की सरकार न रहे।	चुने हुए नेताओं द्वारा प्रमुख फ़ैसले करना

1.3 लोकतंत्र ही क्यों?

मैडम लिंगदोह की कक्षा में एक बहस शुरू हुई थी। उन्होंने इस अध्याय को यहाँ तक पढ़ाने के बाद छात्रों से पूछा कि क्या उन्हें लोकतंत्र ही शासन का सबसे अच्छा स्वरूप लगता है। इस सवाल पर सबने कोई न कोई टिप्पणी की।

लोकतंत्र के गुणों पर चर्चा

योलांदा: हम लोकतांत्रिक देश में रहते हैं। दुनिया भर में सभी जगह लोग लोकतंत्र चाहते हैं। जिन देशों में पहले लोकतांत्रिक शासन प्रणाली नहीं थी वहाँ भी अब इसे अपनाया जा रहा है। सभी महान लोगों ने लोकतंत्र के बारे में अच्छी-अच्छी बातें कही हैं। क्या इतने से ही यह स्पष्ट नहीं हो जाता कि लोकतंत्र सबसे अच्छा है? क्या अब भी इस पर बहस करने की ज़रूरत है?

तांगकिनी: लेकिन लिंगदोह मैडम ने तो कहा था कि हमें किसी चीज़ को सिर्फ़ इसलिए नहीं मान लेना चाहिए कि बाकी सभी ने उसे मान लिया है। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि बाकी सभी लोग गलत रास्ते पर जा रहे हों?

जेनी: हाँ, यह गलत रास्ता ही है। लोकतंत्र ने हमारे देश को क्या दे दिया है? आधी सदी से ज़्यादा समय से लोकतंत्र है और तब भी देश में इतनी अधिक गरीबी है।

रिबियांग: लेकिन लोकतंत्र इसमें क्या कर सकता है? क्या हमारे यहाँ लोकतंत्र के कारण गरीबी है या फिर लोकतंत्र होने के बावज़ूद भी गरीबी है?

जेनी: जो भी है, इससे क्या फर्क पड़ता है? मुद्दा यह है कि हम इसे शासन का सर्वश्रेष्ठ रूप नहीं मान सकते। लोकतंत्र का मतलब है अराजकता, अस्थिरता, भ्रष्टाचार और दिखावा। राजनेता आपस में ही लड़ते रहते हैं। देश की परवाह किसे है?

पाइमोन: तो फिर इसकी जगह कौन-सी प्रणाली होनी चाहिए? क्या अंग्रेज़ी हुकूमत वापस लाई जाए? बाहर से किसी राजा को देश पर शासन के लिए बुलाया जाए?

रोज़: पता नहीं। पर मुझे लगता है कि देश को एक मजबूत नेता की ज़रूरत है—ऐसे नेता की जिसे चुनाव की, संसद की परवाह न हो। एक ही नेता के पास सारे अधिकार हों। देश के हित में जो कुछ ज़रूरी हो वह सब करने में उसे सक्षम होना चाहिए। सिर्फ़ इसी से देश से गरीबी और भ्रष्टाचार खत्म होंगे।

कोई पीछे से चिल्लाया: इसी को तानाशाही कहते हैं।

दोई: अगर वह व्यक्ति सत्ता का उपयोग सिर्फ अपने लिए और अपने परिवार के लिए करने लगे तो क्या होगा? अगर वह खुद भ्रष्ट हो तब?

रोज़: मैं सिर्फ़ ईमानदार, संजीदा और मजबूत नेता की बात कर रही हूँ।

दोई: यह ठीक नहीं है। तुम वास्तविक लोकतंत्र की तुलना आदर्श तानाशाही के साथ कर रही हो। हमें आदर्श की तुलना आदर्श के साथ और वास्तविक की तुलना वास्तविक से करनी चाहिए। जरा तानाशाहों के वास्तविक जीवन के बारे में पढ़ो। वे सबसे ज़्यादा भ्रष्ट, स्वार्थी और क्रूर होते हैं। होता सिर्फ़ यह है कि हमें उनके बारे में जानकारियाँ उपलब्ध नहीं हो पातीं। और, सबसे बड़ी गड़बड़ तो यह है कि आप उन्हें सत्ता से हटा भी नहीं सकते।

मैं लिंगदोह मैडम की कक्षा में बैठना चाहती हूँ! यही सही अर्थों में लोकतांत्रिक कक्षा लगती है। ठीक है न?

मैडम लिंगदोह इस चर्चा को पूरी दिलचस्पी से सुन रही थीं। अब उन्होंने हस्तक्षेप किया: ''तुम सब लोग इतने मगन होकर इस बहस में लगे थे यह देखकर मुझे खुशी हुई। मुझे नहीं मालूम कौन सही है, कौन गलत है। यह तो आप लोग सुलझाएँ। पर मुझे लगा कि आप खुले दिमाग से बातें कर रहे थे। अगर किसी ने आपको रोकने की कोशिश की होती या आपको अपनी बात कहने के लिए सजा दी होती तो निश्चित रूप से आपको बहुत बुरा लगता। क्या आप ऐसा उस देश में कर सकते हैं जहाँ लोकतंत्र न हो? क्या यह लोकतंत्र के पक्ष में एक अच्छा तर्क है?''

लोकतंत्र के खिलाफ़ तर्क

इस चर्चा में लोकतंत्र के खिलाफ़ वे अधिकांश तर्क सामने आ गए हैं जिन्हें हम आम तौर पर सुनते हैं। ये तर्क कुछ इस प्रकार के होते हैं:

- लोकतंत्र में नेता बदलते रहते हैं। इससे अस्थिरता पैदा होती है।
- लोकतंत्र का मतलब सिर्फ राजनैतिक लड़ाई और सत्ता का खेल है। यहाँ नैतिकता की कोई जगह नहीं होती।
- लोकतांत्रिक व्यवस्था में इतने सारे लोगों से बहस और चर्चा करनी पड़ती है कि हर फ़ैसले में देरी होती है।
- चुने हुए नेताओं को लोगों के हितों का पता ही नहीं होता। इसके चलते खराब फ़ैसले होते हैं।
- लोकतंत्र में चुनावी लड़ाई महत्त्वपूर्ण और खर्चीली होती है, इसीलिए इसमें भ्रष्टाचार होता है।
- सामान्य लोगों को पता नहीं होता कि उनके लिए क्या चीज़ अच्छी है और क्या चीज़ बुरी; इसलिए उन्हें किसी चीज़ का फ़ैसला नहीं करना चाहिए।

क्या लोकतंत्र के खिलाफ़ कुछ और भी बातें हैं जो आपके मन में रह गई हैं? इनमें से कौन-सा तर्क मुख्य रूप से लोकतंत्र पर ही लागू होता है? इनमें से कौन-सा तर्क किसी भी तरह की सरकार द्वारा सत्ता का दुरुपयोग करने के मामले में लागू नहीं होगा? इनमें से किस तर्क से आप सहमत हैं?

निश्चित रूप से लोकतंत्र सभी समस्याओं को खत्म करने वाली जादू की छड़ी नहीं है। लोकतंत्र ने हमारे देश में या दुनिया के अन्य हिस्सों में भी गरीबी नहीं मिटाई है। सरकार के स्वरूप के तौर पर लोकतंत्र सिर्फ़ इसी बुनियादी चीज़ को देखता है कि लोग अपने बारे में खुद फ़ैसले करें। इससे इस बात की गारंटी नहीं हो जाती कि उनके सभी फ़ैसले अच्छे ही होंगे। लोग गलतियाँ भी कर सकते हैं। इन फ़ैसलों में लोगों को भागीदार बनाने से फ़ैसलों में देरी होती है। यह भी सही है कि लोकतंत्र में जल्दी-जल्दी नेतृत्व परिवर्तन होता है। कई बार बड़े फ़ैसलों और सरकार की कार्यकुशलता पर भी इसका बुरा असर होता है।

इन तर्कों से यह लगता है कि हम लोकतंत्र का जो रूप देखते हैं वह सरकार का आदर्श स्वरूप नहीं हो सकता है। पर वास्तविक जीवन में हमारे सामने यह सवाल नहीं होता। वहाँ सवाल यह होता है कि क्या हमारे पास सरकार के स्वरूपों के जो विकल्प उपलब्ध हैं उनमें लोकतंत्र किसी भी दूसरे से बेहतर है?

लोकतंत्र के पक्ष में तर्क

चीन में 1958-61 के दौरान पड़ा अकाल विश्व इतिहास का अब तक ज्ञात सबसे भयावह अकाल था। इसमें करीब तीन करोड़ लोग भूख से मरे। उन दिनों भारत की आर्थिक स्थिति चीन से कोई बहुत अच्छी नहीं थी। फिर भी भारत में चीन के समान अकाल और भुखमरी की स्थिति नहीं आई। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि ऐसा दोनों देशों की सरकारी नीतियों के अंतर के कारण हुआ। भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था होने से भारत सरकार ने खाद्य सुरक्षा के मामले में जिस तरह से काम किया है वैसा करने की ज़रूरत चीनी सरकार ने महसूस नहीं की। अर्थशास्त्रियों का यह भी कहना है कि किसी भी स्वतंत्र और लोकतांत्रिक देश में कभी भी बड़ा अकाल और बड़ी संख्या में भुखमरी नहीं हुई है। अगर चीन में भी बहुदलीय चुनावी व्यवस्था होती, विपक्षी दल होता और सरकार की आलोचना कर सकने वाली स्वतंत्र मीडिया होती तो इतने सारे लोग भूख से नहीं मर सकते थे।

यह उदाहरण लोकतंत्र को सर्वश्रेष्ठ शासन पद्धति बताने वाली विशेषताओं में से एक को बहुत स्पष्ट ढंग से सामने लाता है। लोगों की ज़रूरत के अनुरूप आचरण करने के मामले में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली किसी भी अन्य प्रणाली से बेहतर है। गैर-लोकतांत्रिक सरकार लोगों की ज़रूरतों पर ध्यान दे भी सकती है और नहीं भी, और यह सब सरकार चलाने

© उस्मानी सिमांका, ब्राजील, केगल कार्टून, 6 दिसंबर 2004

कार्टून बूझें

यह कार्टून ब्राजील का है जिसे तानाशाही के लंबे दौर का अनुभव है। इसका शीर्षक है 'तानाशाही का छुपा पक्ष'। इस कार्टून में किस छुपे पहलू को उजागर किया गया है? क्या हर तानाशाही का एक पक्ष छुपा रहे यह ज़रूरी है? अगर संभव हो तो, चिले के पिनोशे, पौलेंड के जारुज़ेल्स्की, नाइजीरिया के सनी अबाचा और फिलीपींस के फेर्डिनांड मार्कोस के बारे में भी ऐसी जानकारियाँ इकट्ठी करें।

वालों की मर्जी पर निर्भर करेगा। अगर शासकों को कुछ करने की ज़रूरत नहीं लगती तो उनको लोगों की इच्छा के अनुरूप काम करने की ज़रूरत नहीं है। पर लोकतंत्र में यह ज़रूरी है कि शासन करने वाले, आम लोगों की ज़रूरतों पर तत्काल ध्यान दें। **लोकतांत्रिक शासन पद्धति दूसरों से बेहतर है क्योंकि यह शासन का अधिक ज़वाबदेही वाला स्वरूप है।**

गैर-लोकतांत्रिक सरकारों की तुलना में लोकतांत्रिक सरकारों के बेहतर फ़ैसले करने का एक अन्य कारण भी है। लोकतंत्र का आधार व्यापक चर्चा और बहसें हैं। लोकतांत्रिक फ़ैसले में हरदम ज़्यादा लोग शामिल होते हैं, चर्चा करके फ़ैसले होते हैं, बैठकें होती हैं। अगर किसी एक मसले पर अनेक लोगों की सोच लगी हो तो उसमें गलतियों की गुंजाइश कम से कम हो जाती है। इसमें कुछ ज़्यादा समय ज़रूर लगता है लेकिन महत्त्वपूर्ण मसलों पर थोड़ा समय लेकर फ़ैसले करने के अपने लाभ भी हैं। इससे ज्यादा उग्र या गैर-जिम्मेवार फ़ैसले लेने की संभावना घटती है। **इस प्रकार लोकतंत्र बेहतर निर्णय लेने की संभावना बढ़ाता है।**

इसी से जुड़ा तीसरा तर्क भी है। **लोकतंत्र मतभेदों और टकरावों को संभालने का तरीका उपलब्ध कराता है।** किसी भी समाज में लोगों के हितों और विचारों में अंतर होगा ही। भारत की तरह भारी सामाजिक विविधता वाले देश में इस तरह का अंतर और भी ज़्यादा होता है। अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग समूहों के लोग रहते हैं, विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं, उनकी धार्मिक मान्यताएँ अलग-अलग हैं और जातियाँ भी जुदा-जुदा। दुनिया को ये सभी अलग-अलग दृष्टिकोण से देखते हैं और उनकी पसंद में भी अंतर है। एक समूह की पसंद और दूसरे समूह की पसंद में टकराव भी होता है। ऐसे टकराव को कैसे सुलझाएँगे? इसे ताकत के बल पर सुलझाया जा सकता है। जिस समूह के पास ज़्यादा ताकत होगी वह दूसरे को दबा देगा और कमज़ोर समूह को इसे मानना होगा। लेकिन इससे नाराज़गी और असंतोष पैदा होगा। ऐसी स्थिति में विभिन्न समूह ज़्यादा समय तक साथ नहीं रह सकते। लोकतंत्र इस समस्या का एकमात्र शांतिपूर्ण समाधान उपलब्ध कराता है। लोकतंत्र में कोई भी स्थायी विजेता नहीं होता और कोई स्थायी रूप से पराजित नहीं होता। सो विभिन्न समूह एक-दूसरे के साथ शांतिपूर्ण ढंग से रह सकते हैं। भारत की तरह विविधता वाले देश को लोकतंत्र ही एकजुट बनाए हुए है।

बेहतर सरकार और सामाजिक जीवन पर प्रभाव के हिसाब से ये तीन तर्क लोकतंत्र को काफी मज़बूत साबित करते हैं। लेकिन लोकतंत्र के पक्ष में सबसे मज़बूत तर्क उससे बनने वाली सरकार के कामकाज से जुड़ा नहीं है। यह तर्क लोकतंत्र और नागरिकों के रिश्ते का है-लोकतंत्र में नागरिकों की जो हैसियत होती है वह किसी और व्यवस्था में नहीं होती। अगर इस व्यवस्था में बेहतर फ़ैसले लेने और उत्तरदायी सरकार चलाने का काम न भी हो तब भी यह दूसरों से बेहतर है। **लोकतंत्र नागरिकों का सम्मान बढ़ाता है।** लोकतंत्र राजनीतिक समानता के सिद्धांत पर आधारित है, यहाँ सबसे गरीब और अनपढ़ को भी वही दर्जा प्राप्त है जो अमीर और पढ़े-लिखे लोगों को है। लोग किसी शासक

अगर भारत लोकतंत्र नहीं अपनाता तो क्या हुआ होता? क्या ऐसी स्थिति में हम एक राष्ट्र बने रह सकते थे?

की प्रजा न होकर खुद अपने शासक हैं। अगर वे गलतियाँ करते हैं तब भी वे खुद इसके लिए जवाबदेह होते हैं।

लोकतंत्र के पक्ष में आखिरी तर्क यह है कि **लोकतांत्रिक व्यवस्था दूसरों से बेहतर है क्योंकि इसमें हमें अपनी गलती ठीक करने का अवसर भी मिलता है।** जैसा कि हमने ऊपर देखा है, इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि लोकतंत्र में कोई गलती नहीं हो सकती। किसी भी किस्म की सरकार इस बात की गारंटी नहीं दे सकती। इस मामले में लोकतंत्र का लाभ यह है कि इसमें गलतियों को ज़्यादा देर तक छुपाए नहीं रखा जा सकता। इन गलतियों पर सार्वजनिक चर्चा की गुंजाइश लोकतंत्र में है। और फिर, इनमें सुधार करने की गुंजाइश भी है। इसका मतलब यह कि या तो शासक समूह अपना फ़ैसला बदले या शासक समूह को ही बदला जा सकता है। गैर-लोकतांत्रिक सरकारों में ऐसा नहीं किया जा सकता।

चलें, अब इस चर्चा को समेटें। लोकतंत्र हमें सब चीज़ नहीं दे सकता और ना ही यह सभी समस्याओं का समाधान है। लेकिन यह साफ़ तौर पर उन सभी दूसरी व्यवस्थाओं से बेहतर है जिन्हें हम जानते हैं और दुनिया के लोगों को जिनका अनुभव है। यह अच्छे फ़ैसलों के लिए बेहतर अवसर उपलब्ध कराता है, इसमें लोगों की इच्छाओं का सम्मान किए जाने की ज़्यादा संभावना है और इसमें अलग-अलग तरह के लोग ज़्यादा बेहतर ढंग से साथ-साथ रह सकते हैं। अगर यह इनमें से कुछ काम करने में असफल रहता है तब भी इसमें गलती सुधारने की संभावना है और इसमें सभी नागरिकों को ज़्यादा सम्मान मिलता है। इसी वजह से लोकतंत्र को सबसे अच्छी शासन व्यवस्था माना जाता है।

कार्टून बूझें

हम मतदाता बहुत नाराज़ हैं। हम अब और सहन नहीं करेंगे।

ये लिबरल बहुत घमण्डी हो गए हैं।

इन्होंने सरकार में हमारा विश्वास ही तोड़ दिया है।

हमारा धन हड़प लिया है।

२८ जून को होने वाले चुनाव में हम वही करने जा रहे हैं जो एक कनेडियन सबसे अच्छे ढंग से करता है।

यानि हम उनको फिर से जिता देंगे।

© कैम कार्डो, द ओटावा सिटिज़न, कनाडा, केगल कार्टूंस, 30 मई 2004

यह कार्टून कनाडा के 2004 संसदीय चुनावों के ठीक पहले प्रकाशित हुआ था। इस कार्टूनिस्ट समेत सभी लोगों का मानना था कि लिबरल पार्टी ही एक बार फिर चुनाव जीत जाएगी। पर जब नतीजे आए तो लिबरल पार्टी चुनाव हार गई। यह कार्टून लोकतंत्र के ख़िलाफ तर्क देता है या लोकतंत्र के पक्ष में?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

राजेश और मुज़फ़्फ़र ने एक लेख पढ़ा। इसमें बताया गया था कि किसी भी लोकतांत्रिक देश ने दूसरे लोकतांत्रिक देश के साथ कभी लड़ाई नहीं छेड़ी है। लड़ाई तभी होती है जब कम से कम एक देश में गैर-लोकतांत्रिक सरकार होती है। पर लेख पढ़ने के बाद राजेश ने कहा कि यह लोकतंत्र के पक्ष में कोई अच्छा तर्क नहीं है। ऐसा सिर्फ़ संयोग से हुआ होगा। यह संभव है कि भविष्य में लोकतांत्रिक देशों के बीच भी युद्ध हो। मुज़फ्फर का कहना था कि ऐसा सिर्फ़ संयोग नहीं हो सकता। लोकतंत्र में जिस तरह से फ़ैसले लिए जाते हैं उसमें युद्ध होने का अंदेशा काफ़ी कम हो जाता है।

इन दोनों विचारों में से आपकी सहमति किसकी तरफ़ है और क्यों?

1.4 लोकतंत्र का वृहतर अर्थ

इस अध्याय में हमने लोकतंत्र की एक सीमित और विवरणात्मक शैली में चर्चा की। हमने शासन के एक स्वरूप के तौर पर लोकतंत्र को समझा। लोकतंत्र की इस प्रकार की व्याख्या हमें उन न्यूनतम विशेषताओं या गुणों की पहचान कराती है जो लोकतंत्र की ज़रूरत है। हमारे समय में लोकतंत्र का सबसे आम रूप है प्रतिनिधित्व वाला लोकतंत्र। हम जिन देशों में लोकतंत्र होने की बात करते हैं वहाँ सभी लोग शासन नहीं चलाते। सभी लोगों की तरफ से बहुमत को फ़ैसले लेने का अधिकार होता है और यह बहुमत भी स्वयं शासन नहीं चलाता। बहुमत का शासन भी चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से होता है। यह ज़रूरी हो जाता है क्योंकि:

- आधुनिक लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में इतने अधिक लोग होते हैं कि हर बात के लिए सबको साथ बैठाकर सामूहिक फ़ैसला कर पाना संभव ही नहीं हो सकता।
- अगर यह संभव हो तब भी हर एक नागरिक के पास हर फ़ैसले में भाग लेने का समय, इच्छा या योग्यता और कौशल नहीं होता।

इसमें हमें लोकतंत्र की स्पष्ट लेकिन न्यूनतम ज़रूरी समझ मिलती है। इस स्पष्टता से हमें लोकतांत्रिक और अलोकतांत्रिक सरकारों में अंतर करने में मदद मिलती है। लेकिन इससे हमें एक सामान्य लोकतंत्र और एक अच्छे लोकतंत्र के बीच अंतर करने की क्षमता नहीं मिल जाती। इससे हम लोकतंत्र को सरकार से परे जाकर नहीं समझ पाते। इसके लिए हमें लोकतंत्र के वृहत्तर अर्थ को समझना होगा।

कार्टून बूझें

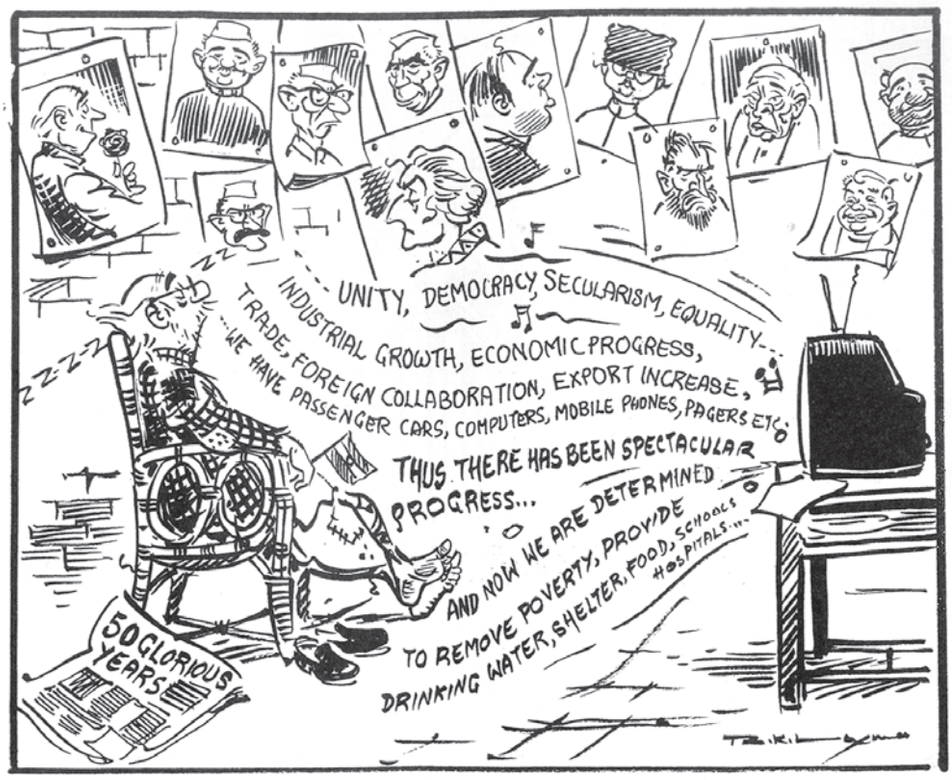

प्रसिद्ध कार्टूनिस्ट आर.के. लक्ष्मण का यह चर्चित कार्टून देश की आजादी की स्वर्ण जयंती पर टिप्पणी करता है। दीवार पर बने चित्रों में से आप किन-किन को पहचानते हैं? क्या देश के बहुत-से आम आदमी इस कार्टून के आम आदमी की तरह सोचते हैं?

कई बार हम लोकतंत्र का प्रयोग सरकार से अलग संगठनों के लिए करते हैं। ज़रा इन कथनों पर गौर कीजिए:

- *''हम लोगों का परिवार काफी लोकतांत्रिक है। जब भी फ़ैसला करना होता है तो हम सभी साथ बैठकर आपसी सहमति से फ़ैसले लेते हैं। फ़ैसले में मेरे विचारों का भी उतना ही महत्त्व होता है जितना मेरे पिताजी का।''*
- *''मुझे वे शिक्षक नापसंद हैं जो कक्षा में छात्रों को बोलने और सवाल पूछने की इज़ाजत नहीं देते। मैं तो ऐसा शिक्षक पसंद करूँगी जो लोकतांत्रिक मानसिकता का हो।''*
- *''एक नेता और उसके परिवार के लोग इस पार्टी के सारे फ़ैसले करते हैं। वे क्या लोकतंत्र की बात करेंगे?''*

लोकतंत्र शब्द का इस तरह का प्रयोग फ़ैसले लेने के उसके बुनियादी तरीके को उजागर करता है। लोकतांत्रिक फ़ैसले का मतलब होता है, उस फ़ैसले से प्रभावित होने वाले सभी लोगों के साथ विचार-विमर्श के बाद और उनकी स्वीकृति से फ़ैसले लेना यानि जो बहुत शक्तिशाली न हो उसका भी किसी फ़ैसले में उतना ही महत्त्व होना जितना किसी बहुत शक्तिशाली का। यह बात सरकार या परिवार पर भी लागू होती है और किसी अन्य संगठन पर भी। इस प्रकार लोकतंत्र एक ऐसा सिद्धांत है जिसका प्रयोग जीवन के किसी भी क्षेत्र में हो सकता है।

कई बार हम लोकतंत्र शब्द का प्रयोग किसी मौजूदा सरकार के लिए नहीं करके कुछ आदर्शों के लिए करते हैं। इन्हें पाने का प्रयास सभी लोकतांत्रिक शासनों को ज़रूर करना चाहिए:

- *''इस देश में वास्तविक लोकतंत्र तभी आएगा जब किसी को भी भूखे पेट सोने की ज़रूरत नहीं रहेगी।''*
- *''लोकतंत्र में प्रत्येक नागरिक को फ़ैसला लेने में समान भूमिका निभानी चाहिए। इसके लिए वोट के समान अधिकार भर की ज़रूरत नहीं है। हर नागरिक को इसके लिए सूचना की समान उपलब्धता, बुनियादी शिक्षा, बुनियादी संसाधन और पक्की निष्ठा होनी चाहिए।''*

अगर हम इन आदर्श पैमानों के आधार पर आज की शासन व्यवस्थाओं को परखें तो लगेगा कि दुनिया में कहीं भी लोकतंत्र नहीं है। फिर भी आदर्श के रूप में लोकतंत्र की हमारी समझदारी हमें बार-बार यह याद दिलाती है कि हम लोकतंत्र को इतना महत्त्व क्यों देते हैं। इससे हमें मौजूदा लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं को परखने और उनकी कमजोरियों की पहचान करने में मदद मिलती है। इससे हमें न्यूनतम या कामचलाऊ लोकतंत्र और अच्छे लोकतंत्र के बीच का अंतर समझने में मदद मिलती है।

इस किताब में हमने लोकतंत्र की व्यापक अवधारणा पर ज़्यादा बातें नहीं की हैं। हमने सिर्फ़ शासन के एक तरीके के रूप में लोकतंत्र के कुछ बुनियादी संस्थागत स्वरूपों की चर्चा की है। अगले साल आप लोकतांत्रिक समाज और अपने लोकतंत्र के मूल्यांकन के तरीकों के बारे में और ज़्यादा बातें जानेंगे। इस समय हमें सिर्फ़ इतना याद कर लेना ज़रूरी है कि लोकतंत्र जीवन के अनेक पहलुओं में प्रासंगिक है और लोकतंत्र कई रूप ग्रहण कर सकता है। समानता के आधार पर चर्चा और विचार-विमर्श के बुनियादी सिद्धांत को माना जाए तो लोकतांत्रिक ढंग का फ़ैसला भी कई तरह का हो सकता है। आज की दुनिया में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का सबसे आम रूप है लोगों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन चलाना। इसके बारे में हम अध्याय 4 में ज़्यादा विस्तार से पढ़ेंगे। लेकिन जब समुदाय छोटा हो तब लोकतांत्रिक फ़ैसले लेने के दूसरे तरीके भी अपनाए जा सकते हैं। फिर तो सभी लोग साथ बैठकर सीधे वहीं फ़ैसले कर सकते हैं। किसी गाँव की ग्रामसभा को इसी तरह काम करना चाहिए। क्या आप लोकतांत्रिक फ़ैसले लेने के कुछ और तरीकों की कल्पना कर सकते हैं?

मेरे गाँव में ग्राम सभा की बैठक कभी नहीं होती। यह कैसा लोकतंत्र है?

इसका यह भी मतलब हुआ कि किसी भी देश में आदर्श लोकतंत्र नहीं है। लोकतंत्र की जिन विशेषताओं की चर्चा हमने इस अध्याय में की वे लोकतंत्र की न्यूनतम शर्तें हैं। पर इनसे यह आदर्श लोकतंत्र नहीं बनता। एक आदर्श लोकतंत्र में निर्णय लेने की प्रक्रिया लोकतांत्रिक होनी चाहिए। हर लोकतंत्र को इस आदर्श को पाने का प्रयास करना चाहिए। यह स्थिति एक बार में और एक साथ सभी के लिए हासिल नहीं की जा सकती। इसके लिए लोकतांत्रिक फ़ैसले लेने की प्रक्रिया को बचाए रखने और मजबूत करते जाने की ज़रूरत होती है। नागरिक के तौर पर हम जो भी काम करते हैं वह भी हमारे देश के लोकतंत्र को अच्छा या खराब बनाने में मदद करता है। यही लोकतंत्र की ताकत है और यही कमज़ोरी भी। देश का भविष्य शासकों के कामकाज से भी ज़्यादा नागरिकों के कामकाज पर निर्भर करता है।

यही चीज लोकतंत्र को अन्य शासन व्यवस्थाओं से अलग करती है। राजशाही, तानाशाही या एक दल के शासन जैसी अन्य व्यवस्थाओं में सभी नागरिकों को राजनीति में हिस्सेदारी करने की ज़रूरत नहीं रहती। दरअसल, अधिकांश गैर-लोकतांत्रिक सरकारें चाहती ही नहीं कि लोग राजनीति में हिस्सा लें। लेकिन लोकतांत्रिक व्यवस्था सभी नागरिकों की सक्रिय भागीदारी पर ही निर्भर करती है। इसीलिए लोकतंत्र के बारे में पढ़ाई हो तो लोकतांत्रिक राजनीति पर ही ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

खुद करें, खुद सीखें

अपने विधानसभा और संसदीय क्षेत्र के सभी मतदाताओं की संख्या का पता लगाएँ। फिर यह पता करें कि आपके आसपास के सबसे बड़े स्टेडियम या हॉल में कितने लोग बैठ सकते हैं। फिर सोचें कि क्या एक विधानसभा या संसदीय क्षेत्र के मतदाताओं का एक साथ बैठना, सार्थक चर्चा करना और लोकतांत्रिक फ़ैसले करना संभव है?

प्रश्नावली

1. यहाँ चार देशों के बारे में कुछ सूचनाएँ हैं। इन सूचनाओं के आधार पर आप इन देशों का वर्गीकरण किस तरह करेंगे? इनके सामने 'लोकतांत्रिक', 'अलोकतांत्रिक' और 'पक्का नहीं' लिखें।

   क. देश क : जो लोग देश के आधिकारिक धर्म को नहीं मानते उन्हें वोट डालने का अधिकार नहीं है।
   ख. देश ख : एक ही पार्टी बीते बीस वर्षों से चुनाव जीतती आ रही है।
   ग. देश ग : पिछले तीन चुनावों में शासक दल को पराजय का मुँह देखना पड़ा।
   घ. देश घ : यहाँ स्वतंत्र चुनाव आयोग नहीं है।

2. यहाँ चार अन्य देशों के बारे में कुछ सूचनाएँ दी गई हैं, इन सूचनाओं के आधार पर इन देशों का वर्गीकरण आप किस तरह करेंगे। इनके आगे 'लोकतांत्रिक', 'अलोकतांत्रिक' और 'पक्का नहीं' लिखें।

   क. देश च : संसद सेना प्रमुख की मंजूरी के बिना सेना के बारे में कोई कानून नहीं बना सकती।
   ख. देश छ : संसद न्यायपालिका के अधिकारों में कटौती का कानून नहीं बना सकती।
   ग. देश ज : देश के नेता बिना पड़ोसी देश की अनुमति के किसी और देश से संधि नहीं कर सकते।
   घ. देश झ : देश के सारे आर्थिक फैसले केंद्रीय बैंक के अधिकारी करते हैं जिसे मंत्री भी नहीं बदल सकते।

3. इनमें से कौन-सा तर्क लोकतंत्र के पक्ष में अच्छा नहीं है और क्यों?

   क. लोकतंत्र में लोग खुद को स्वतंत्र और समान मानते हैं।
   ख. लोकतांत्रिक व्यवस्थाएँ दूसरों की तुलना में टकरावों को ज़्यादा अच्छी तरह सुलझाती हैं।
   ग. लोकतांत्रिक सरकारें लोगों के प्रति ज़्यादा उत्तरदायी होती हैं।
   घ. लोकतांत्रिक देश दूसरों की तुलना में ज़्यादा समृद्ध होते हैं।

प्रश्नावली

4. इन सभी कथनों में कुछ चीज़ें लोकतांत्रिक हैं तो कुछ अलोकतांत्रिक। हर कथन में इन चीज़ों को अलग-अलग करके लिखें।

   क. एक मंत्री ने कहा कि संसद को कुछ कानून पास करने होंगे जिससे विश्व व्यापार संगठन (WTO)द्वारा तय नियमों की पुष्टि हो सके।
   ख. चुनाव आयोग ने एक चुनाव क्षेत्र के सभी मतदान केंद्रों पर दोबारा मतदान का आदेश दिया जहाँ बड़े पैमाने पर मतदान में गड़बड़ की गई थी।
   ग. संसद में औरतों का प्रतिनिधित्व 10 प्रतिशत तक ही पहुँचा है। इसी के कारण महिला संगठनों ने संसद में एक-तिहाई आरक्षण की माँग की है।

5. लोकतंत्र में अकाल और भुखमरी की संभावना कम होती है। यह तर्क देने का इनमें से कौन-सा कारण सही **नहीं** है?

   क. विपक्षी दल भूख और भुखमरी की ओर सरकार का ध्यान दिला सकते हैं।
   ख. स्वतंत्र अखबार देश के विभिन्न हिस्सों में अकाल की स्थिति के बारे में खबरें दे सकते हैं।
   ग. सरकार को अगले चुनाव में अपनी पराजय का डर होता है।
   घ. लोगों को कोई भी तर्क मानने और उस पर आचरण करने की स्वतंत्रता है।

6. किसी जिले में 40 ऐसे गाँव हैं जहाँ सरकार ने पेयजल उपलब्ध कराने का कोई इंतजाम नहीं किया है। इन गाँवों के लोगों ने एक बैठक की और अपनी ज़रूरतों की ओर सरकार का ध्यान दिलाने के लिए कई तरीकों पर विचार किया। इनमें से कौन-सा तरीका लोकतांत्रिक **नहीं** है?

   क. अदालत में पानी को अपने जीवन के अधिकार का हिस्सा बताते हुए मुकदमा दायर करना।
   ख. अगले चुनाव का बहिष्कार करके सभी पार्टियों को संदेश देना।
   ग. सरकारी नीतियों के खिलाफ़ जन सभाएँ करना।
   घ. सरकारी अधिकारियों को पानी के लिए रिश्वत देना।

7. लोकतंत्र के खिलाफ़ दिए जाने वाले इन तर्कों का जवाब दीजिए:

   क. सेना देश का सबसे अनुशासित और भ्रष्टाचार मुक्त संगठन है। इसलिए सेना को देश का शासन करना चाहिए।
   ख. बहुमत के शासन का मतलब है मूर्खों और अशिक्षितों का राज। हमें तो होशियारों के शासन की ज़रूरत है, भले ही उनकी संख्या कम क्यों न हो।
   ग. अगर आध्यात्मिक मामलों में मार्गदर्शन के लिए हमें धर्म-गुरुओं की ज़रूरत होती है तो उन्हीं को राजनैतिक मामलों में मार्गदर्शन का काम क्यों नहीं सौंपा जाए। देश पर धर्म-गुरुओं का शासन होना चाहिए।

8. इनमें से किन कथनों को आप लोकतांत्रिक समझते हैं? क्यों?

   क. बेटी से बाप : मैं शादी के बारे में तुम्हारी राय सुनना नहीं चाहता। हमारे परिवार में बच्चे वहीं शादी करते हैं जहाँ माँ-बाप तय कर देते हैं।
   ख. छात्र से शिक्षक : कक्षा में सवाल पूछकर मेरा ध्यान मत बँटाओ।
   ग. अधिकारियों से कर्मचारी : हमारे काम करने के घंटे कानून के अनुसार कम किए जाने चाहिए।

9. एक देश के बारे में निम्नलिखित तथ्यों पर गौर करें और फ़ैसला करें कि आप इसे लोकतंत्र कहेंगे या नहीं। अपने फ़ैसले के पीछे के तर्क भी बताएँ।

क. देश के सभी नागरिकों को वोट देने का अधिकार है और चुनाव नियमित रूप से होते हैं।

ख. देश ने अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों से ऋण लिया। ऋण के साथ यह एक शर्त जुड़ी थी कि सरकार शिक्षा और स्वास्थ्य पर अपने खर्चों में कमी करेगी।

ग. लोग सात से ज़्यादा भाषाएँ बोलते हैं पर शिक्षा का माध्यम सिर्फ़ एक भाषा है, जिसे देश के 52 फीसदी लोग बोलते हैं।

घ. सरकारी नीतियों का विरोध करने के लिए अनेक संगठनों ने संयुक्त रूप से प्रदर्शन करने और देश भर में हड़ताल करने का आह्वान किया है। सरकार ने उनके नेताओं को गिरफ़्तार कर लिया है।

ङ देश के रेडियो और टेलीविजन चैनल सरकारी हैं। सरकारी नीतियों और विरोध के बारे में खबर छापने के लिए अखबारों को सरकार से अनुमति लेनी होती है।

10. अमेरिका के बारे में 2004 में आई एक रिपोर्ट के अनुसार वहाँ के समाज में असमानता बढ़ती जा रही है। आमदनी की असमानता लोकतांत्रिक प्रक्रिया में विभिन्न वर्गों की भागीदारी घटने-बढ़ने के रूप में भी सामने आई। इन समूहों की सरकार के फ़ैसलों पर असर डालने की क्षमता भी इससे प्रभावित हुई हैं। इस रिपोर्ट की मुख्य बातें थीं:

- सन् 2004 में एक औसत अश्वेत परिवार की आमदनी 100 डालर थी जबकि गोरे परिवार की आमदनी 162 डालर। औसत गोरे परिवार के पास अश्वेत परिवार से 12 गुना ज़्यादा संपत्ति थी।
- राष्ट्रपति चुनाव में 75,000 डालर से ज़्यादा आमदनी वाले परिवारों के प्रत्येक 10 में से 9 लोगों ने वोट डाले थे। यही लोग आमदनी के हिसाब से समाज के ऊपरी 20 फीसदी में आते हैं। दूसरी ओर 15,000 डालर से कम आमदनी वाले परिवारों के प्रत्येक 10 में से सिर्फ़ 5 लोगों ने ही वोट डाले। आमदनी के हिसाब से ये लोग सबसे निचले 20 फीसदी हिस्से में आते हैं।
- राजनैतिक दलों का करीब 95 फीसदी चंदा अमीर परिवारों से ही आता है। इससे उन्हें अपनी राय और चिंताओं से नेताओं को अवगत कराने का अवसर मिलता है। यह सुविधा देश के अधिकांश नागरिकों को उपलब्ध नहीं है।
- जब गरीब लोग राजनीति में कम भागीदारी करते हैं तो सरकार भी उनकी चिंताओं पर कम ध्यान देती है–गरीबी दूर करना, रोजगार देना, उनके लिए शिक्षा, स्वास्थ्य और आवास की व्यवस्था करने पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता जितना दिया जाना चाहिए। राजनेता अकसर अमीरों और व्यापारियों की चिंताओं पर ही नियमित रूप से गौर करते हैं।

इस रिपोर्ट की सूचनाओं को आधार बनाकर और भारत के उदाहरण देते हुए 'लोकतंत्र और गरीबी' पर एक लेख लिखें।

अधिकांश अखबारों में एक संपादकीय पृष्ठ होता है। इस पन्ने पर अखबार समकालीन घटनाओं पर अपनी राय प्रकाशित करता है। अखबार दूसरे बुद्धिजीवियों और लेखकों के लेख और विचारों को छापता है। इसी पन्ने पर पाठकों की राय और टिप्पणियाँ भी पत्रों के रूप में छपती हैं। किसी अखबार को एक महीने तक पढ़ें और उसके उन संपादकीय टिप्पणियों, लेखों और पाठकों के पत्रों को काटकर जमा करें जिनका रिश्ता लोकतंत्र से है। इनको निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटकर रखो।

- लोकतंत्र का संवैधानिक और कानूनी पहलू
- नागरिक अधिकार
- चुनावी और पार्टियों की राजनीति
- लोकतंत्र की आलोचना

0973CH02

अध्याय 2

संविधान निर्माण

परिचय

पिछले अध्याय में हमने देखा कि लोकतंत्र में शासक लोग मनमानी करने के लिए आज़ाद नहीं हैं। कुछ बुनियादी नियम है जिनका पालन नागरिकों और सरकार, दोनों को करना होता है। ऐसे सभी नियमों का सम्मिलित रूप संविधान कहलाता है। देश का सर्वोच्च कानून होने की हैसियत से संविधान नागरिकों के अधिकार, सरकार की शक्ति और उसके कामकाज के तौर-तरीकों का निर्धारण करता है।

इस अध्याय में हम लोकतंत्र के संवैधानिक स्वरूप पर कुछ बुनियादी सवाल उठाएँगे। हमें संविधान की ज़रूरत क्यों होती है? संविधान बनते कैसे हैं? उन्हें कौन बनाता है और किस तरीके से बनाता है? किसी लोकतांत्रिक देश के संविधान को आकार देने वाले मूल्य कौन-कौन से हैं? एक बार संविधान बन जाने के बाद क्या हम बाद में बदलती स्थितियों के अनुरूप उसमें बदलाव कर सकते हैं?

हाल के दिनों में संविधान बनाने का एक उदाहरण दक्षिण अफ्रीका का है। वहाँ क्या हुआ और दक्षिण अफ्रीकी लोगों ने किस तरह अपने संविधान निर्माण के काम को अंजाम दिया? हम इस अध्याय की शुरुआत में इसी अनुभव पर गौर करेंगे। इसके बाद हम भारतीय संविधान के निर्माण और इसके पीछे के मौलिक विचारों-मूल्यों की चर्चा करेंगे और देखेंगे कि यह किस तरह नागरिकों के जीवन और सरकार के अच्छे कामकाज के लिए बढ़िया ढाँचा उपलब्ध कराता है।

नेल्सन मंडेला

2.1 दक्षिण अफ़्रीका में लोकतांत्रिक संविधान

''मैंने गोरों के प्रभुत्व के खिलाफ़ संघर्ष किया है और मैंने ही अश्वेतों के प्रभुत्व का विरोध किया है। मैंने एक ऐसे लोकतांत्रिक और स्वतंत्र समाज की कामना की है जिसमें सभी लोग पूरे मेल-जोल के साथ रहें और सबको समान अवसर उपलब्ध हों। मैं इसी आदर्श के लिए जीवित रहना और इसे पाना चाहता हूँ और अगर ज़रूरत पड़ी तो इस आदर्श के लिए मैं जान देने को भी तैयार हूँ।''

यह नेल्सन मंडेला का कथन है जिन पर दक्षिण अफ़्रीका की गोरों की सरकार ने देशद्रोह का मुकदमा चलाया था। उन्हें और सात अन्य नेताओं को 1964 में देश में रंगभेद से चलने वाली शासन व्यवस्था का विरोध करने के लिए आजीवन कारावास की सजा दी गई थी। अगले 28 वर्षों तक उन्हें दक्षिण अफ़्रीका की सबसे भयावह जेल, रोब्बेन द्वीप में कैद रखा गया था।

साउथ अफ़्रीका हिस्ट्री ऑनलाइन

रंगभेद वाले दौर (1953) का एक साइन बोर्ड जिससे तब के तनावपूर्ण संबंधों का पता चलता है।

इस साइन बोर्ड पर लिखा है: *''खतरा! देशी अश्वेत, हिंदुस्तानी और रंगीन चमड़ी वालो। अगर तुम रात में इस परिसर में घुसे तो तुम्हें लापता घोषित कर दिया जाएगा। हथियारबंद सुरक्षा गार्ड्स देखते ही गोली मार देंगेऔर जंगली कुत्ते लाश को नोंच-नोंच कर खा जाएँगे। तुमको चेतावनी दे दी गई है।''*

रंगभेद के खिलाफ़ संघर्ष

रंगभेद नस्ली भेदभाव पर आधारित उस व्यवस्था का नाम है जो दक्षिण अफ़्रीका में विशिष्ट तौर पर चलाई गई। दक्षिण अफ़्रीका पर यह व्यवस्था यूरोप के गोरे लोगों ने लादी थी। 17वीं और 18वीं सदी में व्यापार करने आई यूरोप की कंपनियों ने दक्षिण अफ़्रीका को भी उसी तरह हथियारों और ज़ोर-ज़बर्दस्ती से गुलाम बनाया जैसे भारत को। पर भारत से उलट काफ़ी बड़ी संख्या में गोरे लोग दक्षिण अफ़्रीका में बस गए और उन्होंने स्थानीय शासन को अपने हाथों में ले लिया। रंगभेद की राजनीति ने लोगों को उनकी चमड़ी के रंग के आधार पर बाँट दिया। दक्षिण अफ़्रीका के स्थानीय लोगों की चमड़ी का रंग काला होता है। आबादी में उनका हिस्सा तीन-चौथाई है और उन्हें 'अश्वेत' कहा जाता था। श्वेत और अश्वेतों के अलावा वहाँ मिश्रित नस्लों जिन्हें 'रंगीन' चमड़ी वाला कहा जाता था और भारत से गए लोग भी थे। गोरे शासक, गोरों के अलावा शेष सब को छोटा और नीचा मानते थे। इन्हें वोट डालने का अधिकार भी नहीं था।

रंगभेद की शासकीय नीति अश्वेतों के लिए खास तौर से दमनकारी थी। उन्हें गोरों की बस्तियों में रहने-बसने की इजाज़त नहीं थी। परमिट होने पर ही वे वहाँ जाकर काम कर सकते थे। रेल गाड़ी, बस, टैक्सी, होटल, अस्पताल, स्कूल और कॉलेज, पुस्तकालय, सिनेमाघर, नाट्यगृह, समुद्र तट, तरणताल और सार्वजनिक शौचालयों तक में गोरों और कालों के लिए एकदम अलग-अलग इंतज़ाम थे। इसे पृथक्करण या अलग-अलग करने का इंतज़ाम कहा जाता था। काले लोग गोरों के लिए आरक्षित जगह तो क्या उनके गिरज़ाघर तक में नहीं जा सकते थे। अश्वेतों को संगठन बनाने और इस भेदभावपूर्ण व्यवहार का विरोध करने का भी अधिकार नहीं था।

1950 से ही अश्वेत, रंगीन चमड़ी वाले और भारतीय मूल के लोगों ने रंगभेद प्रणाली के खिलाफ़ संघर्ष किया। उन्होंने विरोध प्रदर्शन किए और हड़तालें आयोजित कीं। भेदभाव वाली इस शासन प्रणाली का विरोध करने वाले संगठन अफ़्रीकी नेशनल कांग्रेस के झंडे तले एकजुट

हुए। इनमें कई मज़दूर संगठन और कम्युनिस्ट पार्टी भी शामिल थी। अनेक समझदार और संवेदनशील गोरे लोग भी रंगभेद समाप्त करने के आंदोलन में अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस के साथ आए और उन्होंने इस संघर्ष में प्रमुख भूमिका निभाई। अनेक देशों ने रंगभेद की निंदा की और इस व्यवस्था के खिलाफ़ आवाज़ उठाई। लेकिन गोरी सरकार ने हजारों अश्वेत और रंगीन चमड़ी वाले लोगों की हत्या और दमन करते हुए अपना शासन जारी रखा।

खुद करें, खुद सीखें

- नेल्सन मंडेला के जीवन और संघर्षों पर एक पोस्टर बनाएँ।
- अगर उनकी आत्मकथा, 'द लॉंग वाक टू फ्रीडम' उपलब्ध हो तो कक्षा में उसके कुछ हिस्से पढ़कर आपस में चर्चा करें।

© जान मूलेन, विकीपीडिया, जीएनयू फ्री डाक्यूमेंटेशन लाइसेंस

डरबन समुद्र तट पर अंग्रेज़ी, अफ्रीकांस और जुलू भाषा में लिखा नोटिस बोर्ड। इस पर लिखा है– डरबन नगर, *डरबन समुद्र तट: कानून की धारा 37 के तहत इस तट पर नहाने का अधिकार सिर्फ श्वेत नस्ल के लोगों को ही है।*

एक नए संविधान की ओर

रंगभेद के खिलाफ़ जब संघर्ष और विरोध बढ़ता गया तो सरकार को यह एहसास हो गया कि अब वह ज़ोर-ज़बर्दस्ती से अश्वेतों पर अपना राज कायम नहीं रख सकती। इसलिए, गोरी सरकार ने अपनी नीतियों में बदलाव शुरू किया। भेदभाव वाले कानूनों को वापस ले लिया गया। राजनैतिक दलों पर लगा प्रतिबंध और मीडिया पर लगी पाबंदियाँ उठा ली गईं। 28 वर्ष तक जेल में कैद रखने के बाद नेल्सन मंडेला को आज़ाद कर दिया गया। आखिरकार 26 अप्रैल 1994 की मध्य रात्रि को दक्षिण अफ्रीका गणराज्य का नया झंडा लहराया और यह दुनिया का एक नया लोकतांत्रिक देश बन गया। रंगभेद वाली शासन व्यवस्था समाप्त हुई और सभी नस्ल के लोगों की मिलीजुली सरकार के गठन का रास्ता खुला।

यह सब कैसे हुआ? आइए इस असाधारण बदलाव के बाद नए दक्षिण अफ्रीका के पहले राष्ट्रपति नेल्सन मंडेला के मुँह से यह जानें:

''ऐतिहासिक रूप से एक-दूसरे के दुश्मन रहे दो समूह रंगभेद वाली शासन व्यवस्था की जगह शांतिपूर्ण ढंग से लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनाने पर सहमत हो गए क्योंकि दोनों को एक-दूसरे की भलमनसाहत पर भरोसा था और वे इसे मानने को तैयार थे। मेरी कामना है कि दक्षिण अफ्रीकी लोग कभी भी अच्छाई पर विश्वास करना न छोड़ें और इस बात में आस्था रखें कि मनुष्य जाति पर विश्वास करना ही हमारे लोकतंत्र का आधार है।''

नए लोकतांत्रिक दक्षिण अफ्रीका के उदय के साथ ही अश्वेत नेताओं ने अश्वेत समाज से आग्रह किया कि सत्ता में रहते हुए गोरे लोगों ने जो जुल्म किए थे उन्हें वे भूल जाएँ और गोरों को माफ़ कर दें। उन्होंने कहा कि आइए, अब सभी नस्लों तथा स्त्री-पुरुष की समानता, लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों पर आधारित नए दक्षिण अफ्रीका का निर्माण करें। एक पार्टी ने दमन और नृशंस हत्याओं के ज़ोर पर शासन किया था और दूसरी पार्टी ने आज़ादी की लड़ाई की अगुवाई की थी। नए संविधान के निर्माण के लिए दोनों ही साथ-साथ बैठीं।

अगर दक्षिण के बहुसंख्यक काले लोगों ने गोरों से अपने दमन और शोषण का बदला लेने का निश्चय किया होता तो क्या होता?

आज का दक्षिण अफ़्रीका: यह तस्वीर आज के दक्षिण अफ़्रीका की सोच को उजागर करती है। आज का दक्षिण अफ़्रीका खुद को 'इंद्रधनुषी देश' कहता है। क्या आप बता सकते हैं क्यों?

© विकीपीडिया, जीएनयू फ्री डाक्यूमेंटेशन लाइसेंस

दो वर्षों की चर्चा और बहस के बाद उन्होंने जो संविधान बनाया वैसा अच्छा संविधान दुनिया में कभी नहीं बना था। इस संविधान में नागरिकों को जितने व्यापक अधिकार दिए गए हैं उतने दुनिया के किसी संविधान ने नहीं दिए हैं। साथ ही उन्होंने यह फ़ैसला भी किया कि मुश्किल मामलों के समाधान की कोशिशों में किसी को भी अलग नहीं किया जाएगा और न ही किसी को बुरा या दुष्ट मानकर बर्ताव किया जाएगा। इस बात पर भी सहमति बनी कि पहले जिसने चाहे जो कुछ किया हो लेकिन अब से हर समस्या के समाधान में सबकी भागीदारी होगी। दक्षिण अफ़्रीकी संविधान की प्रस्तावना ही इस भावना को बहुत खूबसूरत ढंग से व्यक्त करती है (पृष्ठ 30 देखें)।

दक्षिण अफ़्रीकी संविधान से दुनिया भर के लोकतांत्रिक लोग प्रेरणा लेते हैं। 1994 तक जिस देश की दुनिया भर में अलोकतांत्रिक तौर-तरीकों के लिए निंदा की जाती थी, आज उसे लोकतंत्र के मॉडल के रूप में देखा जाता है। यह काम दक्षिण अफ़्रीकी लोगों द्वारा साथ रहने, साथ काम करने के दृढ़ निश्चय और पुराने कड़वे अनुभवों को आगे के इंद्रधनुषी समाज बनाने में एक सबक के रूप में प्रयोग करने की समझदारी दिखाने के कारण संभव हुआ। एक बार फिर मंडेला के शब्दों में ही ये बातें समझें:

''दक्षिण अफ़्रीका का संविधान इतिहास और भविष्य, दोनों की बातें करता है। एक तरफ़ तो यह एक पवित्र समझौता है कि दक्षिण अफ़्रीकी के रूप में हम, एक-दूसरे से यह वायदा करते हैं कि हम अपने रंगभेदी, क्रूर और दमनकारी इतिहास को फिर से दोहराने की अनुमति नहीं देंगे। पर बात इतनी ही नहीं है। यह अपने देश को इसके सभी लोगों द्वारा वास्तविक अर्थों में साझा करने का घोषणापत्र भी है-श्वेत और अश्वेत, स्त्री और पुरुष, यह देश पूर्ण रूप से हम सभी का है।''

दक्षिण अफ़्रीका के बारे में अधिक जानकारी के लिए, देखें https://www.gov.za

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

क्या दक्षिण अफ़्रीका के स्वतंत्रता संग्राम से आपको भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की याद आई? इन बिंदुओं के आधार पर दोनों संघर्षों में समानताएँ और असमानताएँ बताएँ:

- विभिन्न समुदायों के बीच संबंध
- नेतृत्व: गांधी/मंडेला
- संघर्ष का नेतृत्व करने वाली पार्टी: अफ़्रीकी नेशनल कांग्रेस/भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस
- संघर्ष का तरीका
- उपनिवेशवाद का चरित्र

2.2 हमें संविधान की ज़रूरत क्यों है ?

हमें एक संविधान की ज़रूरत क्यों है और संविधान क्या करता है, इस बात को हम दक्षिण अफ्रीका के उदाहरण से समझ सकते हैं। इस नए लोकतंत्र में दमन करने वाले और दमन सहने वाले, दोनों ही साथ-साथ समान हैसियत से रहने की योजना बना रहे थे। दोनों के लिए ही एक-दूसरे पर भरोसा कर पाना आसान नहीं था। उनके अंदर अपने-अपने किस्म के डर थे। वे अपने हितों की रखवाली भी चाहते थे। बहुसंख्यक अश्वेत इस बात पर चौकस थे कि लोकतंत्र में बहुमत के शासन वाले मूल सिद्धांत से कोई समझौता न हो। उन्हें बहुत सारे सामाजिक और आर्थिक अधिकार चाहिए थे। अल्पसंख्यक गोरों को अपनी संपत्ति और अपने विशेषाधिकारों की चिंता थी।

लंबे समय तक चली बातचीत के बाद दोनों पक्ष समझौते का रास्ता अपनाने को तैयार हुए। गोरे लोग बहुमत के शासन का सिद्धांत और एक व्यक्ति एक वोट को मान गए। वे गरीब लोगों और मज़दूरों के कुछ बुनियादी अधिकारों पर भी सहमत हुए। अश्वेत लोग भी इस बात पर सहमत हुए कि सिर्फ़ बहुमत के आधार पर सारे फ़ैसले नहीं होंगे। वे इस बात पर सहमत हुए कि बहुमत के ज़रिए अश्वेत लोग अल्पसंख्यक गोरों की ज़मीन-जायदाद पर कब्ज़ा नहीं करेंगे। यह समझौता आसान नहीं था। इस समझौते को लागू करना और भी कठिन था। इसे लागू करने के लिए पहली ज़रूरत थी कि वे एक-दूसरे पर भरोसा करें और अगर वे एक-दूसरे पर भरोसा कर भी लें तो क्या गारंटी है कि भविष्य में इसे तोड़ा नहीं जाएगा?

ऐसी स्थिति में भरोसा बनाने और बरकरार रखने का एक ही तरीका है कि जो बातें तय हुई हैं उन्हें लिखत-पढ़त में ले लिया जाए जिससे सभी लोगों पर उन्हें मानने की बाध्यता रहे। भविष्य में शासकों का चुनाव कैसे होगा, इसके बारे में नियम तय होकर लिखित रूप में आ जाते हैं। चुनी हुई सरकार क्या-क्या कर सकती है और क्या-क्या नहीं कर सकती यह भी लिखित रूप में मौजूद होता है। इन्हीं लिखित नियमों में नागरिकों के अधिकार भी होते हैं। पर ये नियम तभी काम करेंगे जब जीतकर आने वाले लोग इन्हें आसानी से और मनमाने ढंग से नहीं बदलें। दक्षिण अफ्रीकी लोगों ने इन्हीं चीज़ों का इंतज़ाम किया। वे कुछ बुनियादी नियमों पर सहमत हुए। वे इस बात पर भी सहमत हुए कि ये नियम सबसे ऊपर होंगे और कोई भी सरकार इनकी उपेक्षा नहीं कर सकती। इन्हीं बुनियादी नियमों के लिखित रूप को संविधान कहते हैं।

संविधान रचना सिर्फ दक्षिण अफ्रीका की ही खासियत नहीं है। हर देश में अलग-अलग समूहों के लोग रहते हैं। संभव है कि उनके रिश्ते दक्षिण अफ्रीका के गोरे और कालों जितने कटुतापूर्ण नहीं हों। पर दुनिया भर में लोगों के बीच विचारों और हितों में फ़र्क रहता है। लोकतांत्रिक शासन प्रणाली हो या न हो पर दुनिया के सभी देशों को ऐसे बुनियादी नियमों की ज़रूरत होती है। यह बात सिर्फ़ सरकारों पर ही लागू नहीं होती। हर संगठन के कायदे-कानून होते हैं, संविधान होता है। इस तरह आपके इलाके का कोई क्लब हो या सहकारी संगठन या फिर राजनैतिक दल, सभी को एक संविधान की ज़रूरत होती है।

खुद करें, खुद सीखें

- अपने इलाके के किसी क्लब, सहकारी संगठन अथवा मज़दूर संघ या राजनैतिक दल के दफ़्तर में जाएँ और उनसे उनके संविधान या संगठन के नियमों की पुस्तिका माँगें तथा उसका अध्ययन करें।
- क्या उसके नियम लोकतांत्रिक नियमों के अनुकूल हैं? क्या वे बिना भेदभाव के सभी को सदस्यता देते हैं?

यह तो गड़बड़ हो गई। अगर सभी बुनियादी बातों पर पहले ही फ़ैसला हो गया था तो संविधान सभा बनाने का क्या औचित्य था?

संविधान लिखित नियमों की ऐसी किताब है जिसे किसी देश में रहने वाले सभी लोग सामूहिक रूप से मानते हैं। संविधान सर्वोच्च कानून है जिससे किसी क्षेत्र में रहने वाले लोगों (जिन्हें नागरिक कहा जाता है) के बीच के आपसी संबंध तय होने के साथ-साथ लोगों और सरकार के बीच के संबंध भी तय होते हैं। संविधान अनेक काम करता है जिनमें ये प्रमुख हैं:

- 'पहला' यह साथ रह रहे विभिन्न तरह के लोगों के बीच ज़रूरी भरोसा और सहयोग विकसित करता है।
- 'दूसरा' यह स्पष्ट करता है कि सरकार का गठन कैसे होगा और किसे फ़ैसले लेने का अधिकार होगा।
- 'तीसरा' यह सरकार के अधिकारों की सीमा तय करता है और हमें बताता है कि नागरिकों के क्या अधिकार हैं, और
- चौथा, यह अच्छे समाज के गठन के लिए लोगों की आकांक्षाओं को व्यक्त करता है।

जिन देशों में संविधान है, वे सभी लोकतांत्रिक शासन वाले हों यह ज़रूरी नहीं है। लेकिन जिन देशों में लोकतांत्रिक शासन है वहाँ संविधान का होना ज़रूरी है। ब्रिटेन के खिलाफ़ आज़ादी की लड़ाई के बाद अमेरिकी लोगों ने अपने लिए संविधान का निर्माण किया। फ्रांसीसी क्रांति के बाद फ्रांसीसी लोगों ने एक लोकतांत्रिक संविधान को मान्यता दी। इसके बाद से यह चलन हो गया कि हर लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में एक लिखित संविधान हो।

वल्लभभाई झावरभाई पटेल
(1875-1950),
जन्मः गुजरात। अंतरिम सरकार में गृह, सूचना एवं प्रसारण मंत्री। वकील और बारदोली किसान सत्याग्रह के नेता। भारतीय रियासतों के विलय में निर्णायक भूमिका। बाद में: उप प्रधानमंत्री।

सरोजिनी नायडू
(1879-1949)
जन्मः आंध्र प्रदेश। कवयित्री, लेखिका और राजनैतिक कार्यकर्ता। कांग्रेस की अग्रणी महिला नेता। बाद में: उत्तर प्रदेश की राज्यपाल

2.3 भारतीय संविधान का निर्माण

दक्षिण अफ्रीका की ही तरह भारत का संविधान भी बहुत कठिन परिस्थितियों के बीच बना। भारत जैसे विशाल और विविधता भरे देश के लिए संविधान बनाना आसान काम नहीं था। भारत के लोग तब गुलाम की हैसियत से निकलकर नागरिक की हैसियत पाने जा रहे थे। देश ने धर्म के आधार पर हुए बँटवारे की विभीषिका झेली थी। भारत और पाकिस्तान के लोगों के लिए बँटवारा भारी बर्बादी और दहलाने वाला अनुभव था।

विभाजन से जुड़ी हिंसा में सीमा के दोनों तरफ कम-से-कम दस लाख लोग मारे जा चुके थे। एक बड़ी समस्या और भी थी। अंग्रेजों ने देसी रियासतों के शासकों को यह आज़ादी दे दी थी कि वे भारत या पाकिस्तान जिसमें इच्छा हो अपनी रियासत का विलय कर दें या स्वतंत्र रहें। इन रियासतों का विलय मुश्किल और अनिश्चय भरा काम था। जब संविधान लिखा जा रहा था तब देश का भविष्य इतना सुरक्षित और चैन भरा नहीं लगता था जितना आज है। संविधान निर्माताओं को देश के वर्तमान और भविष्य की चिंता थी।

खुद करें, खुद सीखें

अपने दादा-दादी, नाना-नानी या इलाके के किसी बुज़ुर्ग से बात कीजिए। उनसे पूछिए कि क्या उनको आज़ादी या बँटवारे या संविधान निर्माण के बारे में कुछ बातें याद हैं। उस समय लोगों को किन बातों की उम्मीद थी और क्या-क्या अंदेशे थे? अपनी कक्षा में इन बातों की चर्चा कीजिए।

संविधान निर्माण का रास्ता

सारी मुश्किलों के बावजूद भारतीय संविधान निर्माताओं को एक बड़ा लाभ था। दक्षिण अफ्रीका में जिस तरह संविधान निर्माण के दौर में ही सारी बातों पर सहमति बनानी पड़ी वैसी स्थिति उस समय के भारत में नहीं थी। भारत में

आज़ादी की लड़ाई के दौरान ही लोकतंत्र समेत अधिकांश बुनियादी बातों पर राष्ट्रीय सहमति बनाने का काम हो चुका था। हमारा राष्ट्रीय आंदोलन सिर्फ़ एक विदेशी सत्ता के खिलाफ़ संघर्ष भर नहीं था। यह न केवल अपने समाज को फिर से जगाने का वरन् अपने समाज और राजनीति को बदलने और नए सिरे से गढ़ने का आंदोलन भी था। आज़ादी के बाद भारत को किस रास्ते पर चलना चाहिए इसे लेकर आज़ादी के संघर्ष के दौरान भी तीखे मतभेद थे। ऐसे कुछ मतभेद अब तक भी बने हुए हैं। पर कुछ बुनियादी विचारों पर लगभग सभी लोगों की सहमति कायम हो चुकी थी।

1928 में ही मोतीलाल नेहरू और कांग्रेस के आठ अन्य नेताओं ने भारत का एक संविधान लिखा था। 1931 में कराची में हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में एक प्रस्ताव में यह रूपरेखा रखी गई थी कि आज़ाद भारत का संविधान कैसा होगा। इन दोनों ही दस्तावेज़ों में स्वतंत्र भारत के संविधान में सार्वभौम वयस्क मताधिकार, स्वतंत्रता और समानता का अधिकार और अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा की बात कही गई थी। इस प्रकार संविधान की रचना करने के लिए बैठने से पहले ही कुछ बुनियादी मूल्यों पर सभी नेताओं की सहमति बन चुकी थी।

औपनिवेशिक शासन की राजनैतिक संस्थाओं और व्यवस्थाओं को जानने-समझने से भी नई राजनैतिक संस्थाओं का स्वरूप तय करने में मदद मिली। अंग्रेज़ी हुकूमत ने बहुत कम लोगों को वोट का अधिकार दिया था। इसके आधार पर अंग्रेज़ों ने जिस विधायिका का गठन किया था वह बहुत कमज़ोर थी। 1937 के बाद पूरे ब्रिटिश शासन वाले भारत में प्रादेशिक असेंबलियों के लिए चुनाव कराए गए थे। इनमें बनी सरकारें पूरी तरह लोकतांत्रिक नहीं थीं। पर विधानसभाओं में जाने और काम करने का अनुभव तब बहुत लाभदायक हुआ क्योंकि इन्हीं भारतीय लोगों को अपनी संस्थाएँ और व्यवस्थाएँ बनानी थीं और चलाना था। इसी कारण भारतीय संविधान में कई संस्थाओं और व्यवस्थाओं को पुरानी व्यवस्था से लगभग जस का तस अपना लिया गया जैसे कि 1935 का भारत सरकार कानून।

आज़ादी के बाद भारत के स्वरूप को लेकर वर्षों पहले से चले चिंतन और बहसों ने भी काफी लाभ पहुँचाया। हमारे नेताओं में इतना आत्मविश्वास आ गया था कि उन्हें बाहर के विचार और अनुभवों को अपनी ज़रूरत के अनुसार अपनाने में कोई हिचक नहीं हुई। हमारे अनेक नेता फ्रांसीसी क्रांति के आदर्शों, ब्रिटेन के संसदीय लोकतंत्र के कामकाज और अमेरिका के अधिकारों की सूची से काफ़ी प्रभावित थे। रूस में हुई समाजवादी क्रांति ने भी अनेक भारतीयों को प्रभावित किया और वे सामाजिक और आर्थिक समता पर आधारित व्यवस्था बनाने की कल्पना करने लगे थे। लेकिन वे दूसरों की सिर्फ नकल नहीं कर रहे थे। हर कदम पर वे यह सवाल ज़रूर पूछते थे कि क्या ये चीज़ें भारत के लिए उपयुक्त होंगी। इन सभी चीज़ों ने हमारे संविधान के निर्माण में मदद की।

संविधान सभा

फिर, भारत के संविधान के निर्माता कौन थे? यहाँ आपको संविधान बनाने में प्रमुख भूमिका निभाने वाले कुछ नेताओं के बारे में बहुत संक्षेप में कुछ-कुछ जानकारियाँ मिलेंगी।

चुने गए जनप्रतिनिधियों की जो सभा संविधान नामक विशाल दस्तावेज़ को लिखने का काम करती है उसे संविधान सभा कहते हैं। भारतीय संविधान सभा के लिए जुलाई 1946 में चुनाव हुए थे। संविधान सभा की पहली बैठक दिसंबर 1946 को हुई थी। इसके तत्काल बाद देश दो हिस्सों-भारत और पाकिस्तान-में बँट गया। संविधान सभा भी दो हिस्सों में बँट गई-भारत की संविधान सभा और पाकिस्तान की

अबुल कलाम आज़ाद
(1888-1958), जन्मः सऊदी अरब। शिक्षाविद्, लेखक और धर्मशास्त्रों के ज्ञाता; अरबी के विद्वान। कांग्रेसी नेता, राष्ट्रीय आंदोलन में अग्रणी भूमिका। मुस्लिम अलगाववादी राजनीति के विरोधी। बाद में: पहले केंद्रीय मंत्रिमंडल में शिक्षा मंत्री।

टी.टी. कृष्णामचारी
(1899-1974)
जन्मः तमिलनाडु। प्रारूप कमेटी के सदस्य। उद्यमी और कांग्रेसी नेता। बाद में: केंद्रीय मंत्रिमंडल में वित्त मंत्री।

राजेंद्र प्रसाद
(1884-1963), जन्मः बिहार। संविधान सभा के अध्यक्ष। वकील और चंपारण सत्याग्रह के प्रमुख भागीदार। तीन बार कांग्रेस अध्यक्ष। बाद में: भारत के प्रथम राष्ट्रपति।

जयपाल सिंह
(1903-1970), जन्मः झारखंड। खिलाड़ी और शिक्षाविद्। भारतीय हॉकी टीम के पहले कप्तान। आदिवासी महासभा के संस्थापक अध्यक्ष। बाद में: झारखंड पार्टी के संस्थापक।

एच.सी. मुखर्जी
(1887-1956), जन्मः बंगाल। संविधान सभा के उपाध्यक्ष। प्रसिद्ध लेखक और शिक्षाविद्। कांग्रेसी नेता। ऑल इंडिया क्रिश्चियन कौंसिल और बंगाल विधानसभा के सदस्य। बाद में: बंगाल के राज्यपाल।

जी. दुर्गाबाई देशमुख
(1909-1981), जन्मः आंध्र प्रदेश। वकील और महिला मुक्ति कार्यकर्ता। आंध्र महिला सभा की संस्थापक। कांग्रेस की सक्रिय नेता। बाद में: केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड की संस्थापक अध्यक्ष।

खुद करें, खुद सीखें

अपने राज्य या इलाके से संविधान सभा में गए ऐसे सदस्य का नाम पता करें जिनका ज़िक्र यहाँ नहीं किया गया है। उस नेता की तस्वीर जुटाएँ या उनका स्केच बनाएँ। हमने जिस तरह संक्षेप में कुछ नेताओं के बारे में सूचना दी है उसी तरह उनके बारे में भी ब्यौरा दें। यानि नाम (जन्म वर्ष-मृत्यु वर्ष), जन्म स्थान (वर्तमान राजनैतिक सीमाओं के आधार पर), राजनैतिक गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण, संविधान सभा के बाद की भूमिका।

संविधान सभा। भारतीय संविधान लिखने वाली सभा में 299 सदस्य थे। इसने 26 नवंबर 1949 को अपना काम पूरा कर लिया। संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। इसी दिन की याद में हम हर साल 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस मनाते हैं।

इस सभा द्वारा पचास साल से भी पहले बनाए संविधान को हम क्यों मानते हैं? हमने पहले ही एक कारण का ज़िक्र किया है। संविधान सिर्फ़ संविधान सभा के सदस्यों के विचारों को ही व्यक्त नहीं करता है। यह अपने समय की व्यापक सहमतियों को व्यक्त करता है। दुनिया के कई देशों में संविधान को फिर से लिखना पड़ा क्योंकि संविधान में दर्ज़ बुनियादी बातों पर ही वहाँ के सभी सामाजिक समूहों या राजनैतिक दलों की सहमति नहीं थी। कई देशों में संविधान है पर वह कागज़ का टुकड़ा या किसी भी अन्य किताब की तरह का दस्तावेज़ भर है। कोई भी उस पर आचरण नहीं करता। पर हमारे संविधान का अनुभव एकदम अलग है। पिछली आधी सदी से ज़्यादा की अवधि में अनेक सामाजिक समूहों ने संविधान के कुछ प्रावधानों पर सवाल उठाए। पर किसी भी बड़े सामाजिक समूह या राजनैतिक दल ने खुद संविधान की वैधता पर सवाल नहीं उठाया। यह हमारे संविधान की एक असाधारण उपलब्धि है।

संविधान को मानने का दूसरा कारण यह है कि संविधान सभा भी भारत के लोगों का ही प्रतिनिधित्व कर रही थी। उस समय सार्वभौम वयस्क मताधिकार नहीं था। इसलिए संविधान सभा का चुनाव देश के लोग प्रत्यक्ष ढंग से नहीं कर सकते थे। इसका चुनाव मुख्य रूप से उन प्रांतीय असेंबलियों के सदस्यों ने ही किया था जिनका ज़िक्र हम पहले कर चुके हैं। इसके कारण देश के सभी भौगोलिक क्षेत्रों का इसमें उचित प्रतिनिधित्व हो गया था। इस सभा में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्यों का प्रभुत्व था जिसने राष्ट्रीय आंदोलन की अगुवाई की थी। पर स्वयं कांग्रेस के अंदर कई राजनैतिक समूह और विचारों के लोग थे। सभा में कई सदस्य ऐसे थे जो कांग्रेस के विचारों से सहमत नहीं थे। सामाजिक रूप से इस सभा में सभी समूह, जाति, वर्ग, धर्म और पेशों के लोग थे। अगर संविधान सभा का गठन सार्वभौम वयस्क मताधिकार के ज़रिए हुआ होता तब भी इसका स्वरूप काफी कुछ इसी तरह का होता।

और अंततः जिस तरह संविधान सभा ने काम किया, वह संविधान को एक तरह की पवित्रता और वैधता देता है। संविधान सभा का काम काफी व्यवस्थित, खुला और सर्वसम्मति बनाने के प्रयास पर आधारित था। सबसे पहले कुछ बुनियादी सिद्धांत तय किए गए और उन पर सबकी सहमति बनाई गई। फिर प्रारूप कमेटी के प्रमुख डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने चर्चा के लिए एक प्रारूप संविधान बनाया। संविधान के प्रारूप की प्रत्येक धारा पर कई-कई दौर में चर्चा हुई। दो हज़ार से ज़्यादा संशोधनों पर विचार हुआ।

तीन वर्षों में कुल 114 दिनों की गंभीर चर्चा हुई। सभा में पेश हर प्रस्ताव, हर शब्द और वहाँ कही गई हर बात को रिकॉर्ड किया गया और संभाला गया। इन्हें *कांस्टीट्यूएंट असेम्बली डिबेट्स* नाम से 12 मोटे-मोटे खंडों में प्रकाशित किया गया। इन्हीं बहसों से हर प्रावधान के पीछे की सोच और तर्क को समझा जा सकता है। संविधान की व्याख्या के लिए भी इस बहस के दस्तावेज़ों का उपयोग होता है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

भारतीय संविधान निर्माताओं के बारे में यहाँ दी गई सभी जानकारियों को पढ़ें। आपको यह जानकारी कंठस्थ करने की ज़रूरत नहीं है। इस आधार पर निम्नलिखित कथनों के पक्ष में उदाहरण प्रस्तुत करें:

1. संविधान सभा में ऐसे अनेक सदस्य थे जो कांग्रेसी नहीं थे।
2. सभा में समाज के अलग-अलग समूहों का प्रतिनिधित्व था।
3. सभा के सदस्यों की विचारधारा भी अलग-अलग थी।

बलदेव सिंह
(1901-1961), जन्म: हरियाणा। सफल उद्यमी और पंजाब विधानसभा में पंथक अकाली पार्टी के नेता। संविधान सभा में कांग्रेस द्वारा मनोनीत। बाद में: केंद्रीय मंत्रिमंडल में रक्षा मंत्री।

2.4 भारतीय संविधान के बुनियादी मूल्य

इस किताब में हम विभिन्न विषयों पर संविधान के प्रावधानों का अध्ययन करेंगे। अभी हम यही जानने की कोशिश करें कि हमारे संविधान के पीछे का दर्शन क्या है। यह काम हम दो तरीकों से कर सकते हैं। अपने नेताओं के संविधान संबंधी विचार पढ़कर हम इस बात को समझ सकते हैं। परंतु, हमारा संविधान स्वयं अपने दर्शन के बारे में जो कहता है उसे पढ़ना भी उतना ही ज़रूरी है। संविधान की प्रस्तावना यही काम करती है। आइए इस पर बारी-बारी से गौर करें।

सपने और वायदे

आपमें से कुछ को भारतीय संविधान निर्माताओं की सूची में एक बड़ा नाम न होने पर हैरानी हुई होगी यानि महात्मा गांधी का नाम। वे संविधान सभा के सदस्य नहीं थे। पर संविधान सभा के अनेक सदस्य उनके विचारों के अनुयायी थे। 1931 में अपनी पत्रिका 'यंग इंडिया' में उन्होंने संविधान से अपनी अपेक्षा के बारे में लिखा था:

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी
(1887-1971), जन्म: गुजरात। वकील, इतिहासकार और भाषाविद्। कांग्रेसी नेता और गांधीवादी। बाद में: केंद्रीय मंत्रिमंडल में मंत्री। स्वतंत्र पार्टी के संस्थापक।

मैं भारत के लिए ऐसा संविधान चाहता हूँ जो उसे गुलामी और अधीनता से मुक्त करे... मैं ऐसे भारत के लिए प्रयास करूँगा जिसे सबसे गरीब व्यक्ति भी अपना माने और उसे लगे कि देश को बनाने में उसकी भी भागीदारी है, ऐसा भारत जिसमें लोगों का उच्च वर्ग और निम्न वर्ग न रहे, ऐसा भारत जिसमें सभी समुदाय के लोग पूरे मेल-जोल से रहें। ऐसे भारत में छुआछूत या शराब और नशीली चीज़ों के लिए कोई जगह न हो। औरतों को भी मर्दों जैसे अधिकार हों...मैं इससे कम पर संतुष्ट नहीं होऊँगा।

भेदभाव और गैर-बराबरी मुक्त भारत का सपना डॉ. अंबेडकर के मन में भी था जिन्होंने संविधान निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। असमानता कैसे दूर की जा सकती है इस बारे में उनके विचार दूसरों से अलग थे। उन्होंने अक्सर गांधी और उनके नज़रिए की कटु आलोचना की। संविधान सभा में दिए गए अपने अंतिम भाषण में उन्होंने अपनी चिंताओं को बहुत स्पष्ट ढंग से रखा था:

श्यामा प्रसाद मुखर्जी
(1901-1953), जन्म: पश्चिम बंगाल। अंतरिम सरकार में उद्योग एवं आपूर्ति मंत्री। शिक्षाविद् और वकील। हिंदू महासभा में सक्रिय। बाद में: भारतीय जनसंघ के संस्थापक।

भीमराव रामजी अंबेडकर
(1891-1956), जन्मः मध्य प्रदेश। प्रारूप कमेटी के अध्यक्ष। सामाजिक क्रांतिकारी चिंतक, जातिगत बँटवारे और भेदभाव के ख़िलाफ़ अग्रणी आंदोलनकारी। बाद में: स्वतंत्र भारत की पहली सरकार में कानून मंत्री। रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के संस्थापक।

"26 जनवरी 1950 को हम विरोधाभासों से भरे जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। राजनीति के मामले में हमारे यहाँ समानता होगी पर आर्थिक और सामाजिक जीवन असमानताओं से भरा होगा। राजनीति में हम एक व्यक्ति–एक वोट और 'हर वोट का समान महत्व' के सिद्धांत को मानेंगे। अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में हम अपने सामाजिक और आर्थिक ढाँचे के कारण ही, 'एक व्यक्ति–एक वोट' के सिद्धांत को नकारना जारी रखेंगे। हम इस विरोधाभासपूर्ण जीवन को कितने लंबे समय तक जीते रहेंगे? हम अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में कब तक समानता को नकारते रहेंगे? अगर यह नकारना ज़्यादा लंबे समय तक चला तो हम अपने राजनैतिक लोकतंत्र को ही संकट में डालेंगे।"

आखिर में आइए हम 15 अगस्त 1947 की मध्य रात्रि के समय संविधान सभा में दिए जवाहर लाल नेहरू के प्रसिद्ध भाषण को याद करें:

जवाहर लाल नेहरू
(1889-1964), जन्मः उत्तर प्रदेश। अंतरिम सरकार के प्रधानमंत्री। वकील और कांग्रेस नेता। समाजवाद, लोकतंत्र और साम्राज्यवाद-विरोध के पक्षधर। बाद में: भारत के प्रथम प्रधानमंत्री।

"वर्षों पहले हमने अपनी नियति के साथ साक्षात्कार किया था, और अब वक्त आ गया है कि हम अपने वायदों पर अमल करें–पूरी तरह या हर तरह से नहीं तो काफ़ी हद तक। घड़ियाँ जब ठीक मध्य रात्रि का घंटा बजाएँगी, जब सारी दुनिया सोती होगी, तब भारत नए जीवन की शुरुआत करेगा, आज़ाद होगा। इतिहास में कभी-कभार ही सही पर एक ऐसा क्षण ज़रूर आता है, जब हम पुराने को छोड़कर नए में प्रवेश करते हैं, जब एक युग का अंत होता है और जब लंबे समय से किसी राष्ट्र की दबी हुई आत्मा प्रस्फुटित होती है, आवाज़ पाती है। ऐसे पवित्र क्षण में हम अपने आपको, भारत और उसके लोगों तथा उससे भी अधिक मानवता की सेवा में समर्पित करें, यही हमारे लिए उचित है। आज़ादी और सत्ता ज़िम्मेवारियाँ लाती है। भारत के संप्रभु लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाली इस संप्रभुता संपन्न सभा के ऊपर अब ज़िम्मेवारी है। आज़ादी के जन्म से पूर्व हमने पूरी प्रसव पीड़ा झेली है और इस क्रम में हुए दुखों से हमारा दिल भारी है। इसमें कुछ दर्द अभी भी बने हुए हैं। फिर भी, इतिहास अब बीत चुका है और अब भविष्य हमें सुनहरे संकेत दे रहा है।
यह भविष्य बहुत आराम करने या सुस्ताने का नहीं बल्कि उन वायदों को पूरा करने के लिए निरंतर प्रयास करने का है जिन्हें हमने अकसर किया है और एक शपथ हम आज भी लेंगे। भारत की सेवा करने का अर्थ है, दुख और परेशानियों में पड़े लाखों-करोड़ों लोगों की सेवा करना। इसका अर्थ है दरिद्रता का, अज्ञान और बीमारियों का, अवसर की असमानता का अंत। हमारे युग के महानतम आदमी की कामना हर आँख से आँसू पोंछने की है। संभव है यह काम हमारे भर से पूरा न हो पर जब तक लोगों की आँखों में आँसू हैं, कष्ट है तब तक हमारा काम ख़त्म नहीं होगा।"

सोमनाथ लाहिड़ी
(1901-1984), जन्मः पश्चिम बंगाल। लेखक और संपादक। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेता। बाद में: पश्चिम बंगाल विधानसभा में सदस्य।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

पहले दिए तीनों उद्धरणों को गौर से पढ़ें।

- पहचानिए कि कौन-सा एक विचार इन तीनों उद्धरणों में उपस्थित है।
- इन तीनों उद्धरणों में इस साझे विचार को व्यक्त करने का तरीका किस तरह एक-दूसरे से भिन्न है?

संविधान का दर्शन

जिन मूल्यों ने स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा दी और उसे दिशा-निर्देश दिए तथा जो इस क्रम में जाँच-परख लिए गए वे ही भारतीय लोकतंत्र का आधार बने। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में इन्हें शामिल किया गया। भारतीय संविधान की सारी धाराएँ इन्हीं के अनुरूप बनी हैं। संविधान की शुरुआत बुनियादी मूल्यों की एक छोटी-सी उद्देश्यिका के साथ होती है। इसे संविधान की प्रस्तावना या उद्देशिका कहते हैं। अमेरिकी संविधान की प्रस्तावना से प्रेरणा लेकर समकालीन दुनिया के अधिकांश देश अपने

संयुक्त राज्य के हम सभी लोग

अधिक अच्छा संघ बनाने, न्याय की स्थापना करने, घरेलू शांति बनाने, साझा सुरक्षा व्यवस्था बनाने, जन कल्याण को बढ़ावा देने तथा अपने और अपनी समृद्धि में स्वतंत्रता का लाभ लेने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका के इस संविधान को स्थापित करते हैं और इसका अभिषेक करते हैं।''

हम दक्षिण अफ्रीका के लोग

अपने इतिहास में हुए अन्याय को स्वीकार करते हैं; अपनी भूमि पर आज़ादी और न्याय के लिए संघर्ष करने में कष्ट उठाने वालों को सलाम करते हैं; अपने देश को बनाने और विकसित करने में मदद करने वालों का आदर करते हैं; और मानते हैं कि दक्षिण अफ्रीका उन सभी का है जो यहाँ रहते हैं, यहाँ की विविधता से जुड़े हैं; इसलिए स्वतंत्र रूप से चुने अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से अपने गणतंत्र के सर्वोच्च कानून के तौर पर इस संविधान को स्वीकार करते हैं जिससे पहले के विभाजन मिटें और लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और मौलिक मानवाधिकारों पर आधारित एक समाज बन सके; एक ऐसे लोकतांत्रिक और मुक्त समाज की स्थापना हो जिसमें सरकार लोगों की इच्छा के अनुसार बने और चले तथा हर नागरिक को कानून से समान संरक्षण मिले; सभी नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो और हर एक व्यक्ति की संभावनाओं को फलने-फूलने की स्वतंत्रता हो और एक संयुक्त और लोकतांत्रिक दक्षिण अफ्रीका का निर्माण हो जो राष्ट्रों के समूह में एक संप्रभु देश के तौर पर अपना उचित स्थान प्राप्त कर सके। ईश्वर, हमारे लोगों की रक्षा करे।

संविधान की शुरुआत एक प्रस्तावना के साथ करते हैं।

आइए हम अपने संविधान की प्रस्तावना को बहुत सावधानी से पढ़ें और उसमें आए प्रत्येक महत्वपूर्ण शब्द के मतलब को समझें:

संविधान की प्रस्तावना लोकतंत्र पर एक खूबसूरत कविता-सी लगती है। इसमें वह दर्शन शामिल है जिस पर पूरे संविधान का निर्माण हुआ है। यह दर्शन सरकार के किसी भी कानून और फ़ैसले के मूल्यांकन और परीक्षण का मानक तय करता है-इसके सहारे परखा जा सकता है कि कौन कानून, कौन फ़ैसला अच्छा या बुरा है। इसमें भारतीय संविधान की आत्मा बसती है।

हम भारत के लोग, भारत को...

भारत के संविधान का निर्माण और अधिनियमन भारत के लोगों ने अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से किया है न कि इसे किसी राजा या बाहरी आदमी ने उन्हें दिया है।

समाजवादी

समाज में संपदा सामूहिक रूप से पैदा होती है और समाज में उसका बँटवारा समानता के साथ होना चाहिए। सरकार ज़मीन और उद्योग-धंधों की हकदारी से जुड़े कायदे-कानून इस तरह बनाए कि सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ कम हों।

प्रभुत्व-संपन्न

लोगों को अपने से जुड़े हर मामले में फ़ैसला करने का सर्वोच्च अधिकार है। कोई भी बाहरी शक्ति भारत की सरकार को आदेश नहीं दे सकती।

पंथ-निरपेक्ष

नागरिकों को किसी भी धर्म को मानने की पूरी स्वतंत्रता है। लेकिन कोई धर्म आधिकारिक नहीं है। सरकार सभी धार्मिक मान्यताओं और आचरणों को समान सम्मान देती है।

गणराज्य

शासन का प्रमुख लोगों द्वारा चुना हुआ व्यक्ति होगा न कि किसी वंश या राज-खानदान का।

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण **प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथ-निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य** बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को: सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,** विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की **स्वतंत्रता,** प्रतिष्ठा और अवसर की **समता,** प्राप्त कराने के लिए, तथा उन **सब में** व्यक्ति की गरिमा और **राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित** करने वाली **बंधुता** बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हजार छह विक्रमी) को एतद्द्वारा इस **संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

लोकतंत्रात्मक

सरकार का एक ऐसा स्वरूप जिसमें लोगों को समान राजनैतिक अधिकार प्राप्त रहते हैं, लोग अपने शासन का चुनाव करते हैं और उसे जवाबदेह बनाते हैं। यह सरकार कुछ बुनियादी नियमों के अनुरूप चलती है।

न्याय

नागरिकों के साथ उनकी जाति, धर्म और लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता।

स्वतंत्रता

नागरिक कैसे सोचें, किस तरह अपने विचारों को अभिव्यक्त करें और अपने विचारों पर किस तरह अमल करें, इस पर कोई अनुचित पाबंदी नहीं है।

समता

कानून के समक्ष सभी लोग समान हैं। पहले से चली आ रही सामाजिक असमानताओं को समाप्त होना होगा। सरकार हर नागरिक को समान अवसर उपलब्ध कराने की व्यवस्था करे।

बंधुता

हम सभी ऐसा आचरण करें जैसे कि हम एक परिवार के सदस्य हों। कोई भी नागरिक किसी दूसरे नागरिक को अपने से कमतर न माने

संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत और दक्षिण अफ्रीका के संविधानों की प्रस्तावना की तुलना कीजिए।

- इन सभी में जो विचार साझा हैं, उनकी सूची बनाएँ।
- इन सभी में कम-से-कम एक बड़े अंतर को रेखांकित करें।
- तीनो में से कौन-सी प्रस्तावना अतीत की ओर संकेत करती है?
- इन प्रस्तावनाओं में से से कौन-सी ईश्वर का आह्वान नहीं करती?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

संस्थाओं का स्वरूप

संविधान सिर्फ मूल्यों और दर्शन का बयान भर नहीं है। जैसा कि हमने पहले ज़िक्र किया है, संविधान इन मूल्यों को संस्थागत रूप देने की कोशिश है। जिसे हम भारत का संविधान कहते हैं उसका अधिकांश हिस्सा इन्हीं व्यवस्थाओं को तय करने वाला है। यह एक बहुत ही लंबा और विस्तृत दस्तावेज़ है इसलिए समय-समय पर इसे नया रूप देने के लिए इसमें बदलाव की ज़रूरत पड़ती है। भारतीय संविधान के निर्माताओं को लगा कि इसे लोगों की भावनाओं के अनुरूप चलना चाहिए और समाज में हो रहे बदलावों से दूर नहीं रहना चाहिए। उन्होंने इसे पवित्र, स्थायी और न बदले जा सकने वाले कानून के रूप में नहीं देखा था। इसलिए उन्होंने बदलावों को समय-समय पर शामिल करने का प्रावधान भी रखा। इन बदलावों को संविधान संशोधन कहते हैं।

संविधान ने संस्थागत व्यवस्थाओं को बड़ी कानूनी भाषा में दर्ज़ किया है। अगर आप संविधान को पहली बार पढ़ें तो इसे समझना मुश्किल लगेगा। फिर भी संस्थाओं के बुनियादी स्वरूप को समझना बहुत मुश्किल नहीं है। किसी भी संविधान की तरह भारतीय संविधान भी वे नियम बताता है जिनके अनुसार शासकों का चुनाव किया जाएगा। इसमें स्पष्ट लिखा है कि किसके पास कितनी शक्ति होगी और कौन किस बारे में फ़ैसले लेगा। साथ ही संविधान नागरिकों को कुछ स्पष्ट अधिकार देकर सरकार के लिए लक्ष्मण रेखा तय कर देता है कि सरकार इससे आगे नहीं बढ़ सकती। पुस्तक के शेष तीन अध्याय भारतीय संविधान के इन्हीं तीन पक्षों के बारे में हैं। प्रत्येक अध्याय में हम कुछ प्रमुख संवैधानिक प्रावधानों पर नज़र डालेंगे और यह समझने की कोशिश करेंगे कि लोकतांत्रिक राजनीति में ये किस तरह काम करते हैं। लेकिन यह किताब भारतीय संविधान के द्वारा स्थापित सारी प्रमुख संस्थाओं और व्यवस्थाओं को नहीं समेटती। इसके कुछ पहलुओं पर आपके अगले वर्ष की किताब में चर्चा होगी।

रंगभेद: दक्षिण अफ्रीका की सरकार की 1948 से 1989 के बीच काले लोगों के साथ नस्ली-अलगाव और खराब व्यवहार करने वाली शासन व्यवस्था।

धारा: किसी दस्तावेज़ का खास हिस्सा, अनुच्छेद।

संविधान: देश का सर्वोच्च कानून। इसमें किसी देश की राजनीति और समाज को चलाने वाले मौलिक कानून होते हैं।

संविधान संशोधन: देश की सर्वोच्च विधायी संस्था द्वारा उस देश के संविधान में किया जाने वाला बदलाव।

संविधान सभा: जनप्रतिनिधियों की वह सभा जो संविधान लिखने का काम करती है।

प्रारूप: किसी कानूनी दस्तावेज़ का प्रारंभिक रूप।

दर्शन: किसी सोच और काम को दिशा देने वाले सबसे बुनियादी विचार।

प्रस्तावना: संविधान का वह पहला कथन जिसमें कोई देश अपने संविधान के बुनियादी मूल्यों और अवधारणाओं को स्पष्ट ढंग से कहता है।

देशद्रोह: देश की सरकार को उखाड़ फेंकने की कोशिश करने का अपराध।

प्रश्नावली

1. नीचे कुछ गलत वाक्य दिए गए हैं। हर एक में की गई गलती पहचानें और इस अध्याय के आधार पर उसको ठीक करके लिखें।

क. स्वतंत्रता के बाद देश लोकतांत्रिक हो या नहीं, इस विषय पर स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं ने अपना दिमाग खुला रखा था।
ख. भारतीय संविधान सभा के सभी सदस्य संविधान में कही गई हरेक बात पर सहमत थे।
ग. जिन देशों में संविधान है वहाँ लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था ही होगी।
घ. संविधान देश का सर्वोच्च कानून होता है इसलिए इसमें बदलाव नहीं किया जा सकता।

2. दक्षिण अफ्रीका का लोकतांत्रिक संविधान बनाने में, इनमें से कौन-सा टकराव सबसे महत्वपूर्ण था:
क. दक्षिण अफ्रीका और उसके पड़ोसी देशों का
ख. स्त्रियों और पुरुषों का
ग. गोरे अल्पसंख्यक और अश्वेत बहुसंख्यकों का
घ. रंगीन चमड़ी वाले बहुसंख्यकों और अश्वेत अल्पसंख्यकों का

3. लोकतांत्रिक संविधान में इनमें से कौन-सा प्रावधान नहीं रहता?
क. शासन प्रमुख के अधिकार
ख. शासन प्रमुख का नाम
ग. विधायिका के अधिकार
घ. देश का नाम

4. संविधान निर्माण में इन नेताओं और उनकी भूमिका में मेल बैठाएँ:

क. मोतीलाल नेहरू	1. संविधान सभा के अध्यक्ष
ख. बी.आर. अंबेडकर	2. संविधान सभा की सदस्य
ग. राजेंद्र प्रसाद	3. प्रारूप कमेटी के अध्यक्ष
घ. सरोजिनी नायडू	4. 1928 में भारत का संविधान बनाया

5. जवाहर लाल नेहरू के नियति के साथ साक्षात्कार वाले भाषण के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों का जवाब दें :

क. नेहरू ने क्यों कहा कि भारत का भविष्य सुस्ताने और आराम करने का नहीं है?
ख. नए भारत के सपने किस तरह विश्व से जुड़े हैं?
ग. वे संविधान निर्माताओं से क्या शपथ चाहते थे?
घ. ''हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की कामना हर आँख से आँसू पोंछने की है।'' वे इस कथन में किसका ज़िक्र कर रहे थे?

6. हमारे संविधान को दिशा देने वाले ये कुछ मूल्य और उनके अर्थ हैं। इन्हें आपस में मिलाकर दोबारा लिखिए।

क. संप्रभु	1. सरकार किसी धर्म के निर्देशों के अनुसार काम नहीं करेगी।
ख. गणतंत्र	2. फ़ैसले लेने का सर्वोच्च अधिकार लोगों के पास है।
ग. बंधुत्व	3. शासन प्रमुख एक चुना हुआ व्यक्ति है।
घ. धर्मनिरपेक्ष	4. लोगों को आपस में परिवार की तरह रहना चाहिए।

प्रश्नावली

7. कुछ दिन पहले नेपाल से आपके एक मित्र ने वहाँ की राजनैतिक स्थिति के बारे में आपको पत्र लिखा था। वहाँ अनेक राजनैतिक पार्टियाँ राजा के शासन का विरोध कर रही थीं। उनमें से कुछ का कहना था कि राजा द्वारा दिए गए मौजूदा संविधान में ही संशोधन करके चुने हुए प्रतिनिधियों को ज़्यादा अधिकार दिए जा सकते हैं। अन्य पार्टियाँ नया गणतांत्रिक संविधान बनाने के लिए नई संविधान सभा गठित करने की मांग कर रही थीं। इस विषय में अपनी राय बताते हुए अपने मित्र को पत्र लिखें।

8. भारत के लोकतंत्र के स्वरूप में विकास के प्रमुख कारणों के बारे में कुछ अलग-अलग विचार इस प्रकार हैं। आप इनमें से हर कथन को भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए कितना महत्त्वपूर्ण कारण मानते हैं?
   क. अंग्रेज़ शासकों ने भारत को उपहार के रूप में लोकतांत्रिक व्यवस्था दी। हमने ब्रिटिश हुकूमत के समय बनी प्रांतीय असेंबलियों के ज़रिए लोकतांत्रिक व्यवस्था में काम करने का प्रशिक्षण पाया।
   ख. हमारे स्वतंत्रता संग्राम ने औपनिवेशिक शोषण और भारतीय लोगों को तरह-तरह की आज़ादी न दिए जाने का विरोध किया। ऐसे में स्वतंत्र भारत को लोकतांत्रिक होना ही था।
   ग. हमारे राष्ट्रवादी नेताओं की आस्था लोकतंत्र में थी। अनेक नव स्वतंत्र राष्ट्रों में लोकतंत्र का न आना हमारे नेताओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करता है।

9. 1912 में प्रकाशित 'विवाहित महिलाओं के लिए आचरण' पुस्तक के निम्नलिखित अंश को पढ़ें:

   ''ईश्वर ने औरत जाति को शारीरिक और भावनात्मक, दोनों ही तरह से ज्यादा नाज़ुक बनाया है। उन्हें आत्म रक्षा के भी योग्य नहीं बनाया है। इसलिए ईश्वर ने ही उन्हें जीवन भर पुरुषों के संरक्षण में रहने का भाग्य दिया है–कभी पिता के, कभी पति के और कभी पुत्र के। इसलिए महिलाओं को निराश होने की जगह इस बात से अनुगृहीत होना चाहिए कि वे अपने आपको पुरुषों की सेवा में समर्पित कर सकती हैं।'' क्या इस अनुच्छेद में व्यक्त मूल्य संविधान के दर्शन से मेल खाते हैं या वे संवैधानिक मूल्यों के खिलाफ़ हैं?

1`. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए। क्या आप उनसे सहमत हैं? अपने कारण भी बताइए।
   क. संविधान के नियमों की हैसियत किसी भी अन्य कानून के बराबर है।
   ख. संविधान बताता है कि शासन व्यवस्था के विविध अंगों का गठन किस तरह होगा।
   ग. नागरिकों के अधिकार और सरकार की सत्ता की सीमाओं का उल्लेख भी संविधान में स्पष्ट रूप में है।
   घ. संविधान संस्थाओं की चर्चा करता है, उसका मूल्यों से कुछ लेना-देना नहीं है।

संविधान संशोधन के किसी प्रस्ताव या किसी संशोधन की माँग से संबंधित अखबारी खबरों को ध्यान से पढ़िए। आप किसी एक विषय पर, जैसे संसद/विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण विषय पर छपी खबरों पर गौर कर सकते हैं। क्या इस सवाल पर कोई सार्वजनिक चर्चा हुई थी?

संशोधन के पक्ष में क्या-क्या तर्क दिए गए हैं? संविधान संशोधन पर विभिन्न दलों की क्या प्रतिक्रिया थी? क्या यह संशोधन हो गया है?

नेहरू मेमोरियल म्यूज़ियम एवं लाइब्रेरी, नई दिल्ली

0973CH03

अध्याय 3

चुनावी राजनीति

परिचय

अध्याय 1 में हमने देखा कि लोकतंत्र के लिए यह न तो संभव है ना ही ज़रूरी कि लोग सीधे शासन करें। हमारे समय में लोकतंत्र का सबसे आम स्वरूप लोगों द्वारा अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन चलाने का है। इस अध्याय में हम देखेंगे कि किसी लोकतंत्र में प्रतिनिधियों का चुनाव कैसे होता है। हम शुरुआत यह समझने से करेंगे कि लोकतंत्र में चुनाव क्यों ज़रूरी और उपयोगी हैं। हम यह भी समझने की कोशिश करेंगे कि विभिन्न दलों की चुनावी प्रतिद्वंद्विता किस तरह लोगों को लाभ पहुँचाती है। फिर हम यह सवाल उठाएँगे कि किन-किन चीज़ों के कारण कोई चुनाव लोकतांत्रिक होता है। इसी के सहारे हम लोकतांत्रिक और गैर-लोकतांत्रिक चुनाव का अंतर समझ पाएँगे।

अध्याय के बाकी हिस्से में हम इन्हीं पैमानों के आधार पर भारत में हुए चुनावों का मूल्यांकन करेंगे। इस क्रम में हम चुनाव के प्रत्येक चरण यानी विभिन्न चुनाव क्षेत्रों के सीमा-निर्धारण से लेकर चुनाव परिणामों की घोषणा तक पर नज़र डालेंगे। हर चरण में हम यह सवाल पूछेंगे कि क्या होना चाहिए और प्रत्यक्ष चुनाव में क्या होता है। अध्याय के आखिर में हम इस सवाल पर विचार करेंगे कि भारत में हुए चुनाव निष्पक्ष और स्वतंत्र ढंग से हुए हैं या नहीं। यहाँ हम निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव कराने में चुनाव आयोग की भूमिका पर भी विचार करेंगे।

3.1 चुनाव क्यों?

हरियाणा के विधानसभा चुनाव

आधी रात के बाद का समय। उत्सुक भीड़ शहर के चौराहे के पास पिछले पाँच घंटों से अपने नेता के आने का इंतज़ार कर रही है। आयोजक भीड़ को बार-बार भरोसा दिला रहे हैं कि नेता बस अब आने ही वाले हैं। जब भी कोई गाड़ी पास से गुजरती तो लोग अपने नेता को देखने की उम्मीद में उठ खड़े होते। उन्हें लगता है कि हमारे नेता आ गए हैं।

यह नेता हैं श्री देवीलाल, हरियाणा संघर्ष समिति के प्रमुख, जो गुरुवार की उस रात करनाल में भाषण देने आने वाले हैं। 76 वर्ष के इस नेता को आजकल ज़रा भी फुरसत नहीं है। उनका राजनैतिक कार्यक्रम सुबह आठ बजे से शुरू होकर रात 11 बजे तक चलता है...आज सुबह से उन्होंने नौ चुनावी सभाओं में भाषण दिया है...पिछले 23 महीनों से वे लगातार जनसभाएँ कर रहे हैं और चुनाव की तैयारियाँ कर रहे हैं।

यह हरियाणा में 1987 में हुए राज्य विधानसभा चुनावों से जुड़ी एक अखबार की खबर है। राज्य में 1982 से कांग्रेस पार्टी की अगुवाई वाली सरकार थी। तब विपक्ष के एक नेता चौधरी देवीलाल ने 'न्याय युद्ध' नामक आंदोलन का नेतृत्व किया और लोकदल नामक अपनी नई पार्टी का गठन किया। उनकी पार्टी ने चुनाव में कांग्रेस के खिलाफ़ अन्य विपक्षी दलों को मिलाकर एक मोर्चा बनाया। अपने चुनाव प्रचार में देवीलाल ने कहा कि अगर उनकी पार्टी चुनाव जीती तो वे किसानों और छोटे व्यापारियों के कर्ज़ माफ़ कर देंगे। उन्होंने वायदा किया कि यही उनकी सरकार का पहला काम होगा।

क्या अधिकांश नेता अपने चुनावी वायदे पूरा करते हैं?

लोग तब की सरकार से नाखुश थे। वे देवीलाल के वायदे की तरफ आकर्षित हुए। इसलिए, जब चुनाव हुए तो उन्होंने लोकदल और उसके सहयोगी दलों के पक्ष में जमकर वोट दिए। लोकदल और उसकी सहयोगी पार्टियों को राज्य विधानसभा की 90 सीटों में से 76 पर जीत मिली। लोकदल को अकेले ही 60 सीटें मिलीं और उसे स्पष्ट बहुमत मिला। कांग्रेस के हाथ तब सिर्फ़ 5 सीटें लगीं।

चुनावी नतीजों की घोषणा के बाद तत्कालीन सरकार के मुख्यमंत्री ने पद छोड़ दिया। लोकदल के नवनिर्वाचित विधायकों ने देवीलाल को अपना नेता चुना। राज्यपाल ने देवीलाल को नए मुख्यमंत्री के रूप में काम संभालने का निमंत्रण दिया। चुनावी नतीजों की घोषणा के तीन दिन के अंदर वे मुख्यमंत्री बन गए। मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने के तत्काल बाद उनकी सरकार ने एक आदेश जारी करके छोटे किसान, खेतिहर मज़दूर और छोटे व्यापारियों के बकाया ऋण को माफ़ कर दिया। उनकी पार्टी ने राज्य में चार वर्षों तक शासन किया। अगले चुनाव 1991 में हुए। इस बार उनकी पार्टी को लोगों का समर्थन नहीं मिला। कांग्रेस पार्टी ने चुनाव जीता और सरकार बनाई।

खुद करें, खुद सीखें

क्या आपको मालूम है आपके राज्य में विधानसभा के पिछले चुनाव कब हुए? आपके इलाके में पिछले पाँच वर्षों में और कौन-से चुनाव हुए हैं? इन चुनावों के स्तर (राष्ट्रीय, विधानसभा, पंचायत वगैरह), उनके होने का समय और उसमें आपके क्षेत्र से चुने गए व्यक्ति के पद (सांसद, विधायक, पार्षद वगैरह) को भी दर्ज़ करें।

जगदीप और नवप्रीत ने इस कथा को पढ़ा और निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले। क्या आप बता सकते हैं कि इनमें कौन-से निष्कर्ष सही हैं और कौन-से गलत। (या फिर इस कथा में दी गई सूचनाओं के आधार पर सही-गलत का फ़ैसला नहीं हो सकता):

- चुनाव से सरकारी नीतियों में बदलाव हो सकता है।
- राज्यपाल ने देवीलाल के भाषणों से प्रभावित होकर उन्हें मुख्यमंत्री बनने का न्यौता दिया।
- लोग हर शासक दल से नाराज़ रहते हैं और हर अगले चुनाव में उसके खिलाफ वोट देते हैं।
- चुनाव जीतने वाली पार्टी सरकार बनाती है।
- इस चुनाव से हरियाणा के आर्थिक विकास में काफी मदद मिली।
- अपनी पार्टी के चुनाव हारने के बाद कांग्रेसी मुख्यमंत्री को इस्तीफा देने की ज़रूरत नहीं थी।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

चुनावों की ज़रूरत क्यों है?

किसी भी लोकतंत्र में नियमित अंतराल पर चुनाव होते हैं। दुनिया के सौ से अधिक देश ऐसे हैं जहाँ जनप्रतिनिधियों को चुनने के लिए चुनाव होते हैं। हम यह भी जानते हैं कि अनेक ऐसे देश जो लोकतांत्रिक नहीं हैं, वहाँ भी चुनाव होते हैं।

पर हमें चुनावों की ज़रूरत क्यों होती है? आइए बिना चुनाव वाले लोकतंत्र की कल्पना करें। अगर सारे लोग रोज़ साथ बैठें और सारे फ़ैसले मिल-जुलकर लें तब बिना चुनावों के लोगों का शासन संभव है। लेकिन जैसा हमने अध्याय 1 में देखा कि किसी भी बड़े समुदाय के लिए ऐसा करना संभव नहीं है। ना ही यह संभव है कि हर किसी के पास हर मामले पर फ़ैसला करने का समय और ज्ञान हो। इसलिए अधिकांश लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में लोग अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करते हैं।

क्या चुनाव के बिना भी लोकतांत्रिक ढंग से प्रतिनिधियों का चुनाव किया जा सकता है? आइए एक ऐसी जगह के बारे में कल्पना करें जहाँ प्रतिनिधियों का चुनाव उम्र और अनुभव के आधार पर किया जाता है। या, ऐसी जगह की कल्पना करें जहाँ प्रतिनिधियों का चुनाव शिक्षा या ज्ञान के आधार पर होता हो। किसे ज़्यादा अनुभव या ज़्यादा ज्ञान है यह तय करने में थोड़ी परेशानी आ सकती है। पर यह मान लें कि लोग मिल-जुलकर इन परेशानियों को दूर कर लेंगे। स्पष्ट है कि फिर ऐसी जगह पर चुनाव की ज़रूरत नहीं रह जाएगी।

लेकिन क्या फिर हम इस व्यवस्था को लोकतंत्र कह सकते हैं? हम यह कैसे पता करेंगे कि लोगों को उनका प्रतिनिधि पसंद है या नहीं? हम यह व्यवस्था कैसे करेंगे कि प्रतिनिधि, लोगों की इच्छा के अनुरूप ही शासन करे? हम इस चीज़ की व्यवस्था कैसे करेंगे कि जो प्रतिनिधि लोगों को पसंद न हों वे अपने पद पर न बने रहें। इसके लिए ऐसी व्यवस्था करने की ज़रूरत है जिससे लोग नियमित अंतराल पर अपने प्रतिनिधियों को चुन सकें और अगर इच्छा हो तो उन्हें बदल भी दें। इस व्यवस्था का नाम चुनाव है। इसलिए हमारे समय में प्रतिनिधित्व वाले लोकतंत्र में चुनाव को ज़रूरी माना जाता है।

चुनाव में मतदाता कई तरह से चुनाव करते हैं:

- वे अपने लिए कानून बनाने वाले का चुनाव कर सकते हैं।
- वे सरकार बनाने और बड़े फ़ैसले करने वाले का चुनाव कर सकते हैं।
- वे सरकार और उसके द्वारा बनने वाले कानूनों का दिशा-निर्देश करने वाली पार्टी का चुनाव कर सकते हैं।

हमने देखा कि लोकतंत्र के लिए चुनाव क्यों ज़रूरी है, पर गैर-लोकतांत्रिक देशों के शासकों को भी चुनाव कराने की ज़रूरत क्यों पड़ती है?

चुनाव को लोकतांत्रिक मानने के आधार क्या हैं ?

चुनाव कई तरह से हो सकते हैं। लोकतांत्रिक देशों में तो चुनाव होते ही हैं। यहाँ तक कि अधिकांश गैर-लोकतांत्रिक देशों में भी किसी-न-किसी तरह के चुनाव होते हैं। सो चुनाव लोकतांत्रिक हुए हैं इसे जाँचने के हमारे लिए क्या पैमाने हैं? हमने अध्याय 1 में इस सवाल पर हल्की-सी चर्चा की थी। हमने वहाँ अनेक देशों के चुनाव के उदाहरण दिए थे जिन्हें हम लोकतांत्रिक चुनाव नहीं मान सकते। आइए वहाँ सीखे सबक को याद करें और लोकतांत्रिक चुनावों के लिए ज़रूरी न्यूनतम शर्तों के साथ अपनी बात की शुरुआत करें:

- पहला, हर किसी को चुनाव करने की सुविधा हो। यानि हर किसी को मताधिकार हो और हर किसी के मत का समान मोल हो।
- दूसरा, चुनाव में विकल्प उपलब्ध हों। पार्टियों और उम्मीदवारों को चुनाव में उतरने की आज़ादी हो और वे मतदाताओं के लिए विकल्प पेश करें।
- तीसरा, चुनाव का अवसर नियमित अंतराल पर मिलता रहे। नए चुनाव कुछ वर्षों में ज़रूर कराए जाने चाहिए।
- चौथा, लोग जिसे चाहें वास्तव में चुनाव उसी का होना चाहिए।
- पाँचवा, चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष ढंग से कराए जाने चाहिए जिससे लोग सचमुच अपनी इच्छा से व्यक्ति का चुनाव कर सकें।

ये शर्तें बहुत आसान और सरल लग सकती हैं। लेकिन अनेक देश ऐसे हैं जहाँ के चुनावों में इन शर्तों को भी पूरा नहीं किया जाता। इस अध्याय में हम अपने देश में हुए चुनावों पर भी ये शर्तें लागू करके यह जानने का प्रयास करेंगे कि हमारे यहाँ के चुनावों को लोकतांत्रिक कहा जा सकता है या नहीं।

क्या राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता अच्छी चीज़ है ?

इस प्रकार हम पाते हैं कि चुनाव का मतलब राजनैतिक प्रतियोगिता या प्रतिद्वंद्विता है। यह प्रतियोगिता कई तरह का रूप ले सकती है। सबसे स्पष्ट रूप है राजनैतिक पार्टियों के बीच प्रतिद्वंद्विता। निर्वाचन क्षेत्रों में इसका स्वरूप उम्मीदवारों के बीच प्रतिद्वंद्विता का हो जाता है। अगर प्रतिद्वंद्विता नहीं रहे तो चुनाव बेमानी हो जाएँगे।

लेकिन क्या राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता का होना अच्छी चीज़ है? चुनावी प्रतिद्वंद्विता में कुछ स्पष्ट नुकसान दिखते हैं। इससे हर बस्ती, हर घर में बँटवारे जैसी स्थिति हो जाती है। आपने भी अपने इलाके में सुना होगा कि लोग 'पार्टी-पॉलिटिक्स' के फैलने की शिकायत कर रहे हैं। विभिन्न दलों के लोग और नेता अक्सर एक-दूसरे के खिलाफ़ आरोप लगाते हैं। पार्टियाँ और उम्मीदवार चुनाव जीतने के लिए तरह-तरह के हथकंडे अपनाते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि चुनावी दौड़ जीतने का यह दबाव सही किस्म की दीर्घकालिक राजनीति को पनपने नहीं देता। समाज और देश की सेवा करने की चाह रखने वाले कई अच्छे लोग भी इन्हीं कारणों से चुनावी मुकाबले में नहीं उतरते। उन्हें इस मुश्किल और बेढंगी लड़ाई में उतरना अच्छा नहीं लगता।

हमारे संविधान निर्माता इन समस्याओं के प्रति सचेत थे। फिर भी उन्होंने भविष्य के नेताओं के चुनाव के लिए मुक्त चुनावी मुकाबले का ही चयन किया। उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि दीर्घकालिक रूप से यही व्यवस्था बेहतर काम करती है। एक आदर्श दुनिया में ही सभी राजनैतिक नेताओं

को मालूम होता है कि लोगों का हित किन चीज़ों में है तथा ये सभी नेता लोगों की सेवा की प्रेरणा से ही राजनीति में आते हैं। पर असल जीवन में ऐसा नहीं होता। दुनिया भर के सभी नेताओं को अन्य पेशों के लोगों के समान आगे बढ़ने की, अपना कॅरियर बनाने की चिंता होती है। वे सत्ता में बने रहना चाहते हैं या अपने लिए बड़ी-से-बड़ी कुर्सी और ज़्यादा-से-ज़्यादा अधिकार पाना चाहते हैं। संभव है कि उनके अंदर लोगों की सेवा करने की भावना भी हो पर सिर्फ़ इस भावना के भरोसे चीज़ों को छोड़ना जोखिम का काम है। यह भी संभव है कि उनके अंदर लोगों की मदद करने की भावना हो पर उन्हें यह मालूम न हो कि यह काम कैसे किया जा सकता है। या फिर यह भी हो सकता है कि उनके मन में जो विचार हों उनका लोगों की ज़रूरत या स्थानीय स्थितियों से मेल ही न बैठे।

ऐसे में हम इन वास्तविकताओं का सामना कैसे कर सकते हैं? एक तरीका तो राजनेताओं के ज्ञान और चरित्र में बदलाव और सुधार लाने का है। दूसरा और ज़्यादा व्यावहारिक तरीका यह है कि हम ऐसी व्यवस्था बनाएँ जिसमें लोगों की सेवा करने वाले राजनेताओं को पुरस्कार मिले और ऐसा न करने वालों को दंड मिले। इस पुरस्कार या दंड का फ़ैसला कौन करता है? इसका सीधा-सा ज़वाब है कि लोग करते हैं। चुनावी प्रतिद्वंद्विता का यही अर्थ है। नियमित चुनावी मुकाबले का लाभ राजनैतिक दलों और नेताओं को मिलता है। वे जानते हैं कि अगर उन्होंने लोगों की इच्छा के अनुसार मुद्दों को उठाया तो उनकी लोकप्रियता बढ़ेगी और अगले चुनाव में उनकी जीत की संभावना भी बढ़ेगी। लेकिन यदि वे अपने कामकाज से मतदाताओं को संतुष्ट करने में असफल रहते हैं तो वे अगला चुनाव नहीं जीत सकते।

इस तरह यदि कोई राजनीतिक पार्टी सिर्फ़ सत्ता में आने की इच्छा से ही आगे आई है तो भी उसे मज़बूरन जनता की सेवा करनी होगी। कुछ-कुछ इसी ढंग से बाज़ार काम करता है भले ही कोई दुकानदार सिर्फ़ अपने फ़ायदे की सोचता हो उसे मज़बूरन ग्राहक को अच्छा सौदा देना ही पड़ता है। अगर वह ऐसा नहीं करता तो ग्राहक दूसरी दुकान देखेगा। ठीक इसी तरह राजनीतिक मुकाबले से संभव है कुछ भेदभाव पनपें और लोगों में आपसी मन-मुटाव पैदा हों लेकिन आखिरकार इससे राजनैतिक दल और इसके नेता, लोगों की सेवा के लिए बाध्य होते हैं।

इरफ़ान ख़ान

कार्टून बूझें

यहाँ दिए दोनों कार्टूनों को ध्यान से देखें। प्रत्येक कार्टून क्या संदेश देता है, इसे अपने शब्दों में लिखें। अपनी कक्षा में चर्चा करें कि इनमें से कौन-सा कार्टून आपके अपने इलाके की असलियत के करीब है। मतदाता और उम्मीदवार के संबंधों पर चुनाव का असर बताने वाला एक कार्टून खुद बनाएँ।

3.2 चुनाव की हमारी प्रणाली क्या है ?

क्या हमारे देश में होने वाले चुनाव लोकतांत्रिक हैं? इस सवाल का जवाब देने के लिए आइए देखें कि भारत में चुनाव किस तरह होते हैं। हमारे यहाँ लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव हर पाँच साल बाद होते हैं। पाँच साल के बाद सभी चुने हुए प्रतिनिधियों का कार्यकाल समाप्त हो जाता है। लोकसभा और विधानसभाएँ 'भंग' हो जाती हैं। फिर सभी चुनाव क्षेत्रों में एक ही दिन या एक छोटे अंतराल में अलग-अलग दिन चुनाव होते हैं। इसे आम चुनाव कहते हैं। कई बार सिर्फ़ एक क्षेत्र में चुनाव होता है जो किसी सदस्य की मृत्यु या इस्तीफे से खाली हुआ होता है। इसे उपचुनाव कहते हैं। इस अध्याय में हम आम चुनाव पर ही ध्यान केंद्रित करेंगे।

चुनाव क्षेत्र

आपने पढ़ा है कि हरियाणा के लोगों ने 90 विधायकों का चुनाव किया। संभव है आपने सोचा हो कि उन्होंने ऐसा कैसे किया होगा। क्या हरियाणा का हर व्यक्ति सभी 90 विधायकों के लिए वोट देता है? शायद आपको भी मालूम

गुलबर्गा संसदीय क्षेत्र

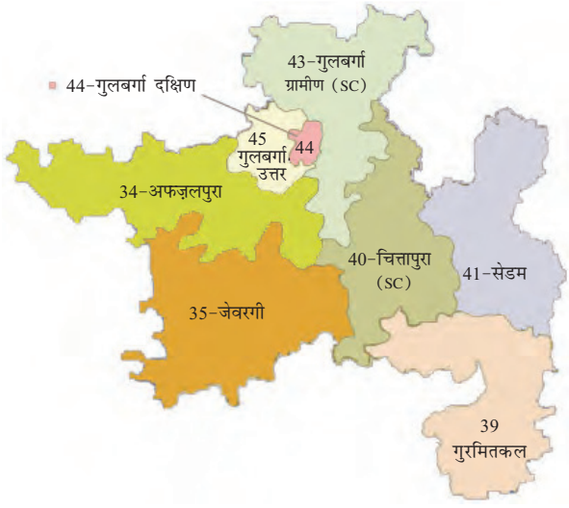

कर्नाटक का गुलबर्गा (कलाबुरगी) ज़िला

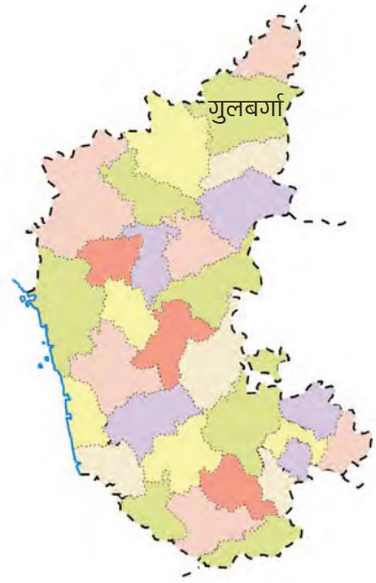

- गुलबर्गा लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र की सीमा और गुलबर्गा (कलाबुरगी) ज़िले की सीमा में अंतर क्यों है? अपने लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र का ऐसा ही नक्शा बनाइए।
- गुलबर्गा लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र में विधानसभा के कितने क्षेत्र हैं? क्या आपके लोकसभा क्षेत्र में भी विधानसभा की इतनी ही सीटें हैं?

होगा कि ऐसा नहीं होता। अपने देश में हम क्षेत्र विशेष पर आधारित प्रतिनिधित्व की प्रणाली से काम करते हैं। चुनाव के उद्देश्य से देश को अनेक क्षेत्रों में बाँट लिया गया है। इन्हें निर्वाचन क्षेत्र कहते हैं। एक क्षेत्र में रहने वाले मतदाता अपने एक प्रतिनिधि का चुनाव करते हैं। लोकसभा चुनाव के लिए देश को 543 निर्वाचन क्षेत्रों में बाँटा गया है। हर क्षेत्र से चुने गए प्रतिनिधियों को संसद सदस्य कहते हैं। लोकतांत्रिक चुनाव की एक विशेषता है हर वोट का बराबर मूल्य। इसीलिए हमारे संविधान में यह व्यवस्था है कि हर चुनाव क्षेत्र में मतदाताओं की संख्या काफ़ी हद तक एक समान हो।

इसी प्रकार, प्रत्येक राज्य को उसकी विधानसभा की सीटों के हिसाब से बाँटा गया है। इन सीटों से निर्वाचित प्रतिनिधियों को विधायक कहते हैं। प्रत्येक संसदीय निर्वाचन क्षेत्र में विधानसभा के कई-कई निर्वाचन क्षेत्र आते हैं। पंचायतों और नगरपालिका के चुनावों में भी यही तरीका अपनाया जाता है। प्रत्येक पंचायत को कई 'वार्डों' में बाँटा जाता है जो छोटे-छोटे निर्वाचन क्षेत्र हैं। प्रत्येक वार्ड से पंचायत या नगरपालिका के लिए एक सदस्य का चुनाव होता है। कई बार निर्वाचन क्षेत्रों को 'सीट' भी कहा जाता है क्योंकि हर क्षेत्र संसद या विधानसभा की एक सीट का प्रतिनिधित्व करता है। इसलिए, हम जब कहते हैं कि लोकदल ने हरियाणा की 60 सीटें जीतीं तो इसका मतलब है कि विधानसभा के 60 निर्वाचन क्षेत्रों से लोकदल के 60 लोग जीतकर राज्य विधानसभा में पहुँचे।

आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र

हमारा संविधान प्रत्येक नागरिक को अपना प्रतिनिधि चुनने और जनप्रतिनिधि के तौर पर चुने जाने का अधिकार देता है। लेकिन हमारे संविधान निर्माताओं को चिंता थी कि संभव है खुले चुनावी मुकाबले में कुछ कमज़ोर समूहों के लोग लोकसभा और विधानसभाओं में पहुँच नहीं पाएँ। संभव है कि चुनाव लड़ने और जीतने लायक ज़रूरी संसाधन, शिक्षा और संपर्क उनके पास हों ही नहीं। संसाधनों वाले प्रभावशाली लोग उनको चुनाव जीतने से रोक भी सकते हैं। अगर ऐसा होता है तो संसद और विधानसभाओं में हमारी आबादी के एक बड़े हिस्से की आवाज़ ही नहीं पहुँच पाएगी। इससे हमारे लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व का चरित्र कमज़ोर होगा और यह व्यवस्था कम लोकतांत्रिक होगी।

इसलिए हमारे संविधान निर्माताओं ने कमज़ोर वर्गों के लिए आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र की विशेष व्यवस्था सोची। इसी कारण कुछ चुनाव क्षेत्र अनुसूचित जातियों के लोगों के लिए आरक्षित हैं तो कुछ क्षेत्र अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिए। अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित सीट पर केवल अनुसूचित जाति का ही व्यक्ति चुनाव लड़ सकता है। इसी तरह सिर्फ़ अनुसूचित जनजाति के ही व्यक्ति अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित चुनाव क्षेत्र से चुनाव लड़ सकते हैं। अभी लोकसभा की 84 सीटें अनुसूचित जातियों के लिए और 47 सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हैं (26 जनवरी 2019 की स्थिति)। ये सीटें पूरी आबादी में इन समूहों के हिस्से के अनुपात में हैं। इस प्रकार अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षित सीटें किसी अन्य समूह के उचित हिस्से में से कुछ नहीं लेतीं।

कमज़ोर समूहों के लिए आरक्षण की यह व्यवस्था बाद में जिला और स्थानीय स्तर पर भी लागू की गई। अनेक राज्यों में अब ग्रामीण (पंचायतों) और शहरी (नगरपालिका और नगर निगमों) स्थानीय निकायों में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए भी आरक्षण लागू हो गया है। पर हर राज्य में आरक्षित सीटों का अनुपात अलग-अलग है। इसी प्रकार ग्रामीण और शहरी स्थानीय

पंचायतों की तरह क्या हम संसद और विधानसभाओं की एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित नहीं कर सकते?

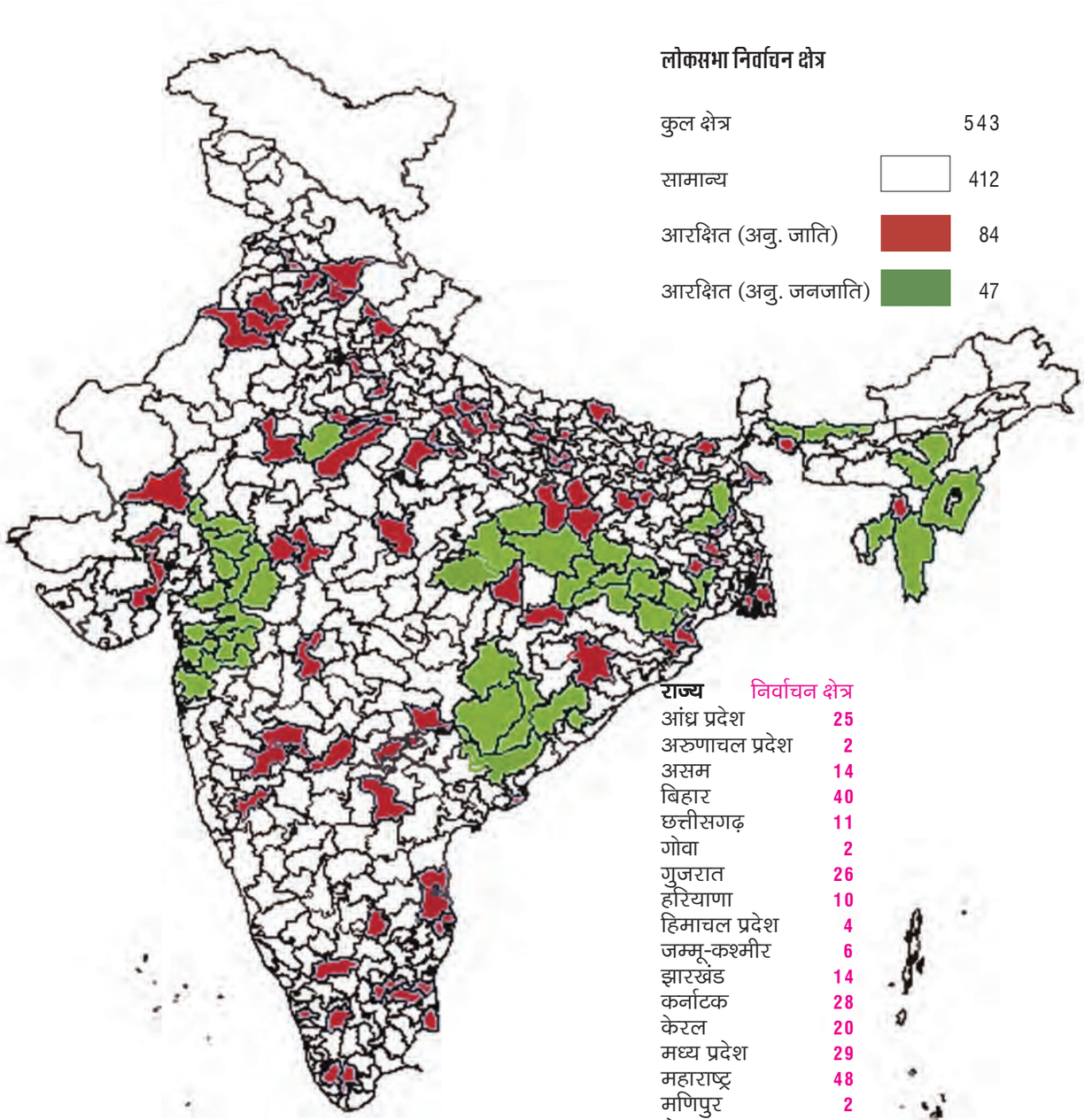

लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र

कुल क्षेत्र	543
सामान्य	412
आरक्षित (अनु. जाति)	84
आरक्षित (अनु. जनजाति)	47

राज्य	निर्वाचन क्षेत्र
आंध्र प्रदेश	25
अरुणाचल प्रदेश	2
असम	14
बिहार	40
छत्तीसगढ़	11
गोवा	2
गुजरात	26
हरियाणा	10
हिमाचल प्रदेश	4
जम्मू-कश्मीर	6
झारखंड	14
कर्नाटक	28
केरल	20
मध्य प्रदेश	29
महाराष्ट्र	48
मणिपुर	2
मेघालय	2
मिजोरम	1
नगालैंड	1
ओडिशा	21
पंजाब	13
राजस्थान	25
सिक्किम	1
तमिलनाडु	39
तेलंगाणा	17
त्रिपुरा	2
उत्तर प्रदेश	80
उत्तराखंड	5
पश्चिम बंगाल	42

केंद्रशासित प्रदेश	
अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह	1
चंडीगढ़	1
दादरा एवं नगर हवेली	1
दमन और दीव	1
दिल्ली	7
लक्षद्वीप	1
पुदुच्चेरी	1

भारत का चुनाव आयोग

ऊपर दिए नक्शे को देखिए और निम्नलिखित सवालों का जवाब दीजिए।

- आपके राज्य और इसके दो पड़ोसी राज्यों में लोकसभा निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या कितनी है?
- किन-किन राज्यों में लोकसभा के 30 से ज्यादा निर्वाचन क्षेत्र हैं?
- कुछ राज्यों में निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या ज्यादा क्यों है?
- कुछ निर्वाचन क्षेत्र इलाके के हिसाब से छोटे और कुछ बहुत बड़े क्यों हैं?
- अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र पूरे देश में बिखरे हैं या कुछ इलाकों में इनकी संख्या ज्यादा है?

निकायों में एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की गई हैं।

मतदाता सूची

एक बार जब निर्वाचन क्षेत्र का फ़ैसला हो जाता है तब यह तय किया जाता है कि कौन वोट दे सकता है, कौन नहीं। इस फ़ैसले को अंतिम दिन तक के लिए किसी के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। लोकतांत्रिक चुनाव में मतदान की योग्यता रखने वालों की सूची चुनाव से काफ़ी पहले तैयार कर ली जाती है और हर किसी को दे दी जाती है। इस सूची को आधिकारिक रूप से मतदाता सूची कहते हैं। आम बोलचाल में इसे वोटर लिस्ट भी कहते हैं।

यह एक महत्त्वपूर्ण कदम है क्योंकि इसका सीधा संबंध लोकतांत्रिक चुनाव की पहली शर्त-अपना प्रतिनिधि चुनने के लिए हर किसी को समान अवसर मिलने से है। पहले हमने सार्वभौम वयस्क मताधिकार के बारे में पढ़ा था। व्यवहार में इसका मतलब है कि हर किसी को मत देने का अधिकार होना चाहिए और हर एक का मत समान मोल का होना चाहिए। जब तक ठोस कारण न हों किसी को मताधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। अलग-अलग नागरिक अनेक मामलों में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं: कोई अमीर है, कोई गरीब; कोई बहुत पढ़ा-लिखा है तो कोई कम या एकदम अशिक्षित; कोई बहुत दयालु है तो कोई नहीं। पर हर कोई इंसान तो है! और, अपनी ज़रूरतों और विचारों के अनुरूप समाज में योगदान करता है। इसलिए सभी को प्रभावित करने वाले निर्णयों में सबकी भागीदारी होनी चाहिए।

हमारे देश में 18 वर्ष और उससे ऊपर की उम्र के सभी नागरिक चुनाव में वोट डाल सकते हैं। नागरिक की जाति, धर्म, लिंग चाहे जो हो उसे मत देने का अधिकार है। अपराधियों और दिमागी असंतुलन वाले कुछ लोगों को वोट देने के अधिकार से वंचित किया जा सकता है लेकिन ऐसा सिर्फ़ बेहद खास स्थितियों में ही होता है। सभी सक्षम मतदाताओं का नाम मतदाता सूची में हो यह व्यवस्था करना सरकार की ज़िम्मेदारी है। चूंकि हर अगले चुनाव में नए लोग मतदाता बनने की उम्र तक आ जाते हैं इसलिए हर चुनाव से पूर्व मतदाता सूची को सुधारा जाता है। जो लोग उस इलाके से बाहर चले जाते हैं या जिनकी मौत हो जाती है उनके नाम इस सूची से काट दिए जाते हैं। हर पाँच वर्ष में मतदाता सूची का पूर्ण नवीनीकरण किया जाता है। ऐसा मतदाता सूची को एकदम ताज़ा रखने के लिए किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों से चुनावों में फोटो पहचान-पत्र की नई व्यवस्था लागू की गई है। सरकार ने मतदाता सूची में दर्ज़ सभी लोगों को यह कार्ड देने की कोशिश की है। वोट देने जाते समय मतदाता को यह पहचान-पत्र साथ रखना होता है जिससे किसी एक का वोट कोई दूसरा न डाल दे। पर मतदान के लिए यह कार्ड अभी तक अनिवार्य नहीं हुआ है। वोट देने के लिए मतदाता राशन कार्ड या ड्राइविंग लाइसेंस जैसे पहचान पत्र भी दिखा सकते हैं।

उम्मीदवारों का नामांकन

हमने ऊपर देखा कि लोकतांत्रिक चुनावों में लोगों के पास वास्तविक विकल्प होना चाहिए। यह तभी होगा जब किसी के भी चुनाव लड़ने पर लगभग किसी किस्म की बंदिश न हो। हमारी चुनाव प्रणाली ऐसा ही करती है। जो कोई व्यक्ति मतदाता है वह उम्मीदवार भी हो सकता है। सिर्फ़ एक फ़र्क यह है कि कोई भी व्यक्ति 18 वर्ष की उम्र में ही वोट डालने का अधिकारी हो जाता है जबकि उम्मीदवार बनने की न्यूनतम आयु 25 वर्ष है। उम्मीदवार बनने में भी

निर्वाचक नामावली, 2019 (S04) बिहार

विधान सभा क्षेत्र की संख्या , नाम व आरक्षण स्थिति :	19 -मोतिहारी - सामान्य	भाग संख्या : 1
लोक सभा क्षेत्र की संख्या, नाम व आरक्षण स्थिति :	3 -पूर्वी चम्पारण-सामान्य	

1.पुनरीक्षण का विवरण :

पुनरीक्षण का वर्ष	: 2019
अर्हता की तिथि	: 01.01.2019
पुनरीक्षण का स्वरुप	: विशेष संक्षिप्त पुनरीक्षण, 2019
प्रकाशन की तिथि	: 01.09.2018

निर्वाचक नामावली की पहचान :
विशेष संक्षिप्त पुनरीक्षण, 2019 के अन्तर्गत दिनांक 01.09.2018 को प्रारुप के रुप में प्रकाशित समेकित एवं एकीकृत निर्वाचक सूची

2.भाग व मतदान क्षेत्र का विवरण :

भाग में आनेवाले प्रभागों की संख्या व नाम :
(1) झिटकहियां
(2) झीटकहिया
(3) झिटकहीया

मुख्य ग्राम	:	झिटकहिया टोला बहुअरी
डाकघर	:	झिटकाही
थाना	:	लखौरा
राजस्व हलका	:	001
पंचायत	:	झिटकहिया
अंचल	:	मोतिहारी
प्रखंड	:	मोतिहारी
अनुमंडल	:	मोतिहारी सदर
जिला	:	पूर्वी चम्पारण
पिन कोड	:	845427

3.मतदान केन्द्र का विवरण :

मतदान केन्द्र की संख्या व नाम :	1, उत्क्रमित मध्य विद्यालय सेमरा झिटकहिया उत्तरी भाग	मतदान केन्द्र की विशेष हैसियत :	सामान्य
मतदान केन्द्र का भवन व पता	उत्क्रमित मध्य विद्यालय सेमरा झिटकहिया	इस मतदान क्षेत्र के सहायक (ऑक्जिलियरी) मतदान केन्द्रो की संख्या :	0

4.मतदाताओं की संख्या :

आरम्भिक क्रम संख्या	अंतिम क्रम संख्या	मतदाताओं की संख्या			
		पुरूष	महिला	तृतीय लिंग	कुल
1	1303	693	610	0	1303

19 मोतिहारी — सामान्य विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र, बिहार की निर्वाचक नामावली - 2019 — भाग संख्या 1

प्रभाग 1 झिटकहियां — प्रखण्ड - मोतिहारी — थाना - लखौरा — डाकघर - झिटकाही — पिन : 845427 प्रारम्भ पृष्ठ

1 UZP2473056 निर्वाचक का नाम : सुनील कुमार पिता का नाम : रामलगन प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 19 लिंग : पुरूष	2 UZP2482263 निर्वाचक का नाम : शशिकान्त कुमार पिता का नाम : रामजीत प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 20 लिंग : पुरूष	3 UZP2482461 निर्वाचक का नाम : नजरन खातून पति का नाम : मजहर आलम गृह संख्या : 2 उम्र : 27 लिंग : महिला
4 UZP2473031 निर्वाचक का नाम : सवरुण नेथा पति का नाम : मंजूर मियां गृह संख्या : 3 उम्र : 33 लिंग : महिला	5 UZP2482586 निर्वाचक का नाम : लतिफ़ मियाँ पिता का नाम : मंजूर मियाँ गृह संख्या : 3 उम्र : 29 लिंग : पुरूष	6 UZP2482743 निर्वाचक का नाम : वज़ीर मियाँ पिता का नाम : नसीर मियाँ गृह संख्या : 3 उम्र : 29 लिंग : पुरूष
7 UZP2492387 निर्वाचक का नाम : मंजूर मियां पिता का नाम : सुखारी मियां गृह संख्या : 3 उम्र : 36 लिंग : पुरूष	8 UZP2488278 निर्वाचक का नाम : आयशा खातून पति का नाम : इर्शाद आलम गृह संख्या : 4 उम्र : 22 लिंग : महिला	9 UZP2493336 निर्वाचक का नाम : ईमबानी खातून पति का नाम : लड्डू मियाँ गृह संख्या : 4 उम्र : 43 लिंग : महिला

अपराधियों वगैरह पर रोक है लेकिन यह पाबंदी भी बहुत ही कम मामलों में लागू होती है। राजनैतिक दल अपने उम्मीदवार मनोनीत करते हैं जिन्हें पार्टी का चुनाव चिह्न और समर्थन मिलता है। पार्टी के मनोनयन को बोलचाल की भाषा में 'टिकट' कहते हैं।

चुनाव लड़ने के इच्छुक हर एक उम्मीदवार को एक 'नामांकन पत्र' भरना पड़ता है और कुछ रकम जमानत के रूप में जमा करानी पड़ती है। हाल में सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश पर उम्मीदवारों से एक घोषणा-पत्र भरवाने की नई प्रणाली भी शुरू हुई है। अब हर उम्मीदवार को अपने बारे में कुछ ब्यौरे देते हुए वैधानिक घोषणा करनी होती है। प्रत्येक उम्मीदवार को इन मामलों के सारे विवरण देने होते हैं:

- उम्मीदवार के खिलाफ़ चल रहे गंभीर आपराधिक मामले।
- उम्मीदवार और उसके परिवार के सदस्यों की संपत्ति और देनदारियों का ब्यौरा।
- उम्मीदवार की शैक्षिक योग्यता।

इन सूचनाओं को सार्वजनिक किया जाना चाहिए। इससे मतदाताओं को उम्मीदवारों द्वारा खुद के बारे में सूचना के आधार पर अपने फ़ैसले करने का मौका मिलता है।

उम्मीदवारों की शैक्षिक योग्यता

जब देश की सभी नौकरियों के लिए किसी-न-किसी किस्म की शैक्षिक योग्यता ज़रूरी है तो विधायक या सांसद महत्त्वपूर्ण पदों के चुनाव के लिए किसी किस्म की शैक्षिक योग्यता की ज़रूरत क्यों नहीं है:

- सभी तरह के काम सिर्फ शैक्षिक योग्यता के आधार पर नहीं होते। जैसे भारतीय क्रिकेट टीम में चुनाव के लिए डिग्री की नहीं अच्छा क्रिकेट खेलने की योग्यता ज़रूरी है। इसी प्रकार विधायक या सांसद की सबसे बड़ी योग्यता यह है कि वह अपने क्षेत्र के लोगों की समस्याओं को समझे, उनकी चिंताओं को समझे और उनके हितों का प्रतिनिधित्व करे। वे यह काम कर रहे हैं या नहीं इसकी परीक्षा उनके लाखों वोटर पाँच साल तक रोज़ लेते हैं।
- अगर शिक्षा या डिग्री की प्रासंगिकता हो भी तो यह जिम्मा लोगों पर छोड़ देना चाहिए कि वे शैक्षिक योग्यता को कितना महत्त्व देते हैं।
- हमारे देश में शैक्षिक योग्यता की शर्त लगाना एक अन्य कारण से भी लोकतंत्र की मूल भावना के खिलाफ़ होगा। इसका मतलब होगा देश के अधिकांश लोगों को चुनाव लड़ने के मौलिक अधिकार से वंचित करना। जैसे यदि उम्मीदवारों के लिए बी.ए., बी.कॉम. या बी.एससी. की स्नातक डिग्री को भी अनिवार्य किया गया तो 90 फीसदी से ज़्यादा नागरिक चुनाव लड़ने के अयोग्य हो जाएँगे।

उम्मीदवारों को अपनी संपत्ति का ब्यौरा देने की ज़रूरत क्यों होती है?

भारत की चुनाव प्रणाली की कुछ विशेषताएँ और कुछ सिद्धांत दिए गए हैं। इनके सही जोड़े बनाएँ।

सिद्धांत	चुनाव प्रणाली की विशेषता
सार्वभौम वयस्क मताधिकार	हर चुनाव क्षेत्र में लगभग बराबर मतदाता
कमजोर वर्गों को प्रतिनिधित्व	18 वर्ष और उससे ऊपर के सभी को मताधिकार
खुली राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता	सभी को पार्टी बनाने या चुनाव लड़ने की आज़ादी
एक मत, एक मोल	अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

चुनाव अभियान

चुनावों का मुख्य उद्देश्य लोगों को अपनी पसंद के प्रतिनिधियों, सरकार और नीतियों का चुनाव करने का अवसर देना है। इसलिए, कौन प्रतिनिधि बेहतर है, कौन पार्टी अच्छी सरकार देगी या अच्छी नीति कौन-सी है, इस बारे में स्वतंत्र और खुली चर्चा भी बहुत ज़रूरी है। चुनाव अभियान के दौरान यही होता है।

हमारे देश में उम्मीदवारों की अंतिम सूची की घोषणा होने और मतदान की तारीख के बीच आम तौर पर दो सप्ताह का समय चुनाव प्रचार के लिए दिया जाता है। इस अवधि में उम्मीदवार मतदाताओं से संपर्क करते हैं, राजनेता चुनावी सभाओं में भाषण देते हैं और राजनैतिक पार्टियाँ अपने समर्थकों को सक्रिय करती हैं। इसी अवधि में अखबार और टीवी चैनलों पर चुनाव से जुड़ी खबरें और बहसें भी होती हैं। पर असल में चुनाव अभियान सिर्फ़ दो हफ़्ते नहीं चलता। राजनैतिक दल चुनाव होने के महीनों पहले से इसकी तैयारियाँ शुरू कर देते हैं।

चुनाव अभियान के दौरान राजनैतिक पार्टियाँ लोगों का ध्यान कुछ बड़े मुद्दों पर केंद्रित कराना चाहती हैं। वे लोगों को इन मुद्दों पर आकर्षित करती हैं और अपनी पार्टी के पक्ष में वोट देने को कहती हैं। आइए, विभिन्न चुनावों में विभिन्न दलों द्वारा उठाए गए कुछ सफल नारों पर गौर करें।

- इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस पार्टी ने 1971 के लोकसभा चुनावों में **गरीबी हटाओ** का नारा दिया था। पार्टी ने वायदा किया कि वह सरकार की सारी नीतियों में बदलाव करके सबसे पहले देश से गरीबी हटाएगी।
- 1977 में हुए लोकसभा चुनावों में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में जनता पार्टी ने नारा दिया **लोकतंत्र बचाओ**। पार्टी ने आपात्काल के दौरान हुई ज़्यादतियों को समाप्त करने और नागरिक आज़ादी को बहाल करने का वायदा किया।
- वामपंथी दलों ने 1977 में हुए पश्चिम बंगाल विधानसभा चुनाव में **ज़मीन-जोतने वाले को** का नारा दिया था।
- 1983 के आंध्र प्रदेश के विधानसभा चुनावों में तेलुगु देशम पार्टी के नेता एन.टी. रामाराव ने **तेलुगु स्वाभिमान** का नारा दिया था।

चुनावों में राजनैतिक दलों और उम्मीदवारों के निर्देश के लिए आदर्श आचार संहिता पर यहाँ एक कार्टून बनाएँ।

लोकतंत्र में राजनैतिक दलों और उम्मीदवारों को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक चुनाव प्रचार करने के लिए आज़ाद छोड़ देना ही सबसे अच्छा होता है। पर सभी दलों को उचित और समान अवसर मिले इसके लिए कई बार कुछ दखल देना ज़रूरी होता है। चुनाव के कानूनों के अनुसार कोई भी

खुद करें, खुद सीखें

पिछले लोकसभा चुनाव में आपके चुनाव क्षेत्र में चुनाव अभियान कैसा चला था? उम्मीदवारों और पार्टियों ने क्या-क्या कहा और क्या-क्या किया, इसकी सूची तैयार कीजिए।

उम्मीदवार या पार्टी ये सब काम नहीं कर सकतीं:

- मतदाता को प्रलोभन देना, घूस देना या धमकी देना।
- उनसे जाति या धर्म के नाम पर वोट माँगना।
- चुनाव अभियान में सरकारी संसाधनों का इस्तेमाल करना।
- लोकसभा चुनाव में एक निर्वाचन क्षेत्र में 25 लाख या विधानसभा चुनाव में 10 लाख रुपए से ज़्यादा खर्च करना।

अगर वे इनमें से किसी भी मामले में दोषी पाए गए तो चुने जाने के बावजूद उनका चुनाव रद्द घोषित हो सकता है। इन कानूनों के अलावा हमारे देश की सभी राजनैतिक पार्टियों ने चुनाव प्रचार की आदर्श आचार संहिता को भी स्वीकार किया है। इसमें उम्मीदवारों और पार्टियों को यह सब करने की मनाही है:

- चुनाव प्रचार के लिए किसी धर्मस्थल का उपयोग।
- सरकारी वाहन, विमान या अधिकारियों का चुनाव में उपयोग।
- चुनाव की अधिघोषणा हो जाने के बाद मंत्री किसी बड़ी योजना का शिलान्यास, बड़े नीतिगत फ़ैसले या लोगों को सुविधाएँ देने वाले वायदे नहीं कर सकते।

मतदान और मतगणना

चुनाव का आखिरी चरण है मतदाताओं द्वारा वोट देना। इस दिन को आम तौर पर चुनाव का दिन कहते हैं। मतदाता सूची में नाम वाला हर व्यक्ति अपने इलाके में स्थित मतदान केंद्र पर जाता है। यह अस्थायी तौर पर स्थानीय स्कूल या किसी सरकारी इमारत में बना होता है। जब मतदाता मतदान केंद्र में जाता है तो चुनाव अधिकारी उसे पहचानकर उसकी अँगुली पर एक काला निशान लगा देते हैं और उसे वोट डालने की अनुमति देते हैं। सभी उम्मीदवारों के एजेंटों को मतदान केंद्र के अंदर बैठने की इजाज़त होती है जिससे कि वे देख सकें कि चुनाव ठीक ढंग से हो रहा है।

पहले मतदाता एक मतपत्र पर अलग-अलग छपे उम्मीदवारों के नाम और चुनाव चिह्न में से अपनी पसंद के उम्मीदवार के चुनाव चिह्न पर मोहर लगाकर अपनी पसंद जाहिर करते थे। अब मतदान के लिए इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों का इस्तेमाल होने लगा है। मशीन के ऊपर उम्मीदवारों

क्या हमारे देश में चुनाव बहुत महँगे हैं?

भारत में चुनाव करवाने पर बहुत ज़्यादा रकम खर्च होती है। जैसे 2014 में लोकसभा चुनावों पर ही सरकार ने करीब ₹ 3,500 करोड़ खर्च किए। हिसाब लगाएँ तो मतदाता सूची में दर्ज़ हर नाम पर ₹ 40 के करीब खर्च हुआ। पार्टियों और उम्मीदवारों ने चुनाव में सरकार से भी ज़्यादा खर्च किया। मोटे अनुमान के अनुसार सरकार, पार्टियों और उम्मीदवारों का कुल खर्च करीब ₹ 30,000 करोड़ हुआ होगा अर्थात् प्रति मतदाता करीब ₹ 500।

कुछ लोग कहते हैं कि चुनाव हमारी जनता पर, खासकर गरीब लोगों पर एक बोझ है और मुल्क हर पाँच साल पर चुनाव कराने का बोझ नहीं उठा सकता। आइए, इस खर्च की तुलना कुछ अन्य खर्चों से करें:

- सन् 2005 में सरकार ने फ्रांस से छह परमाणु पनडुब्बियाँ खरीदने का फ़ैसला किया। प्रत्येक पनडुब्बी की कीमत करीब ₹ 3000 करोड़ है।
- दिल्ली में सन् 2010 में राष्ट्रमंडल खेलों का आयोजन हुआ। अनुमानतः इस पर ₹20,000 करोड़ से भी ज़्यादा खर्च हुए।

तो क्या चुनावों को महँगा माना जा सकता है? इस विषय पर अपनी राय बनाएँ और कक्षा में चर्चा करें।

गुलबर्गा के चुनाव परिणाम

आइए, एक बार फिर गुलबर्गा के उदाहरण पर गौर करें। सन् 2014 में यहाँ कुल 8 उम्मीदवारों ने चुनाव लड़ा था। यहाँ के मतदाताओं की संख्या 17.21 लाख थीं। इनमे से 9.98 लाख लोगों ने अपने मताधिकार का प्रयोग किया। कांग्रेस पार्टी के उम्मीदवार मल्लिकार्जुन खड़गे को 5.07 लाख वोट मिले। यह कुल पड़े मतों का 50.82 फीसदी था। लेकिन बाकी किसी भी उम्मीदवार से ज़्यादा वोट पाने के कारण उन्हें गुलबर्गा संसदीय क्षेत्र से सांसद निर्वाचित घोषित किया गया।

गुलबर्गा लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र 2014 का चुनाव परिणाम

उम्मीदवार	पार्टी	मिले वोट	वोटों का प्रतिशत
डी. जी. सागर	जनता दल (सेक्यूलर)	15690	1.57
मल्लिकार्जुन खड़गे	इंडियन नेशनल काँग्रेस	507193	50.82
दन्नि महादेव बी.	बहुजन समाज पार्टी	11428	1.14
रेवूनायक बेलमगि	भारतीय जनता पार्टी	432460	43.33
बी.टी. ललिता नायक	आम आदमी पार्टी	9074	0.91
एस. एम. शर्मा	एसयूसीआई	4943	0.50
शंकर जाधव	बीएचपीपी	2877	0.29
रामु	निर्दलीय	4085	0.41
नोटा (नन ऑफ द एबव)	—	9888	0.99

- **अपना मत डालने वाले मतदाताओं का प्रतिशत कितना था?**
- **क्या चुनाव जीतने के लिए यह ज़रूरी है कि किसी व्यक्ति को डाले गए मतों में से आधे से अधिक मत मिलें?**

मतदान केंद्रों और मतगणना केंद्रों पर पार्टी या उम्मीदवार के एजेंट क्यों मौजूद होते हैं?

के नाम और उनके चुनाव चिह्न बने होते हैं। निर्दलीय उम्मीदवारों को भी चुनाव अधिकारी चुनाव चिह्न देते हैं। मतदाता को जिस उम्मीदवार को वोट देना होता है उसके चुनाव चिह्न के आगे बने बटन को एक बार दबा भर देना होता है।

मतदान हो जाने के बाद सभी वोटिंग मशीनों को सील बंद करके एक सुरक्षित जगह पर पहुँचा दिया जाता है। फिर एक तय तारीख पर एक चुनाव क्षेत्र की सभी मशीनों को एक साथ खोला जाता है और मतों की गिनती की जाती है। वहाँ सभी दलों के एजेंट रहते हैं जिससे मतगणना का काम निष्पक्ष ढंग से हो सके। किसी चुनाव क्षेत्र में सबसे ज़्यादा मत पाने वाले उम्मीदवार को विजयी घोषित किया जाता है। आम चुनाव में अमूमन सभी निर्वाचन क्षेत्रों में मतगणना एक ही तारीख पर होती है। टीवी चैनल, रेडियो और अखबारों के लिए यह बहुत बड़ा अवसर होता है और वे इसकी खबरें पूरे विस्तार से देते हैं। कुछ घंटों की गिनती में ही सारे परिणाम मालूम हो जाते हैं और यह स्पष्ट हो जाता है कि कौन अगली सरकार बनाने जा रहा है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इनमें कौन-सा काम आदर्श चुनाव संहिता का उल्लंघन है, कौन-सा नहीं?

- मतदान की तारीख से पहले मंत्री द्वारा अपने निर्वाचन क्षेत्र के लिए नई रेलगाड़ी को हरी झंडी दिखाकर रवाना करना।
- एक उम्मीदवार ने वायदा किया कि चुने जाने पर वह अपने निर्वाचन क्षेत्र में नई रेलगाड़ी चलवाएगा।
- एक उम्मीदवार के समर्थकों द्वारा मतदाताओं को एक मंदिर में ले जाकर उनसे उसी उम्मीदवार को वोट देने की शपथ दिलाना।
- किसी उम्मीदवार के समर्थकों द्वारा झुग्गी बस्ती में वोट के वायदे लेकर कंबल बाँटना।

3.3 भारत में चुनाव क्यों लोकतांत्रिक है ?

हम चुनाव में गड़बड़ियों और धाँधलियों के बारे में पढ़ते रहते हैं। अखबार और टीवी चैनलों की खबरों में अकसर ऐसी गड़बड़ियों की चर्चा रहती है और आरोप लगाए जाते हैं। अधिकांश खबरों में कुछ इस तरह की गड़बड़ियों की सूचना होती हैं:

- मतदाता सूची में फर्जी नाम डालने और असली नामों को गायब करने की।
- शासक दल द्वारा सरकारी सुविधाओं और अधिकारियों के दुरुपयोग की।
- अमीर उम्मीदवारों और बड़ी पार्टियों द्वारा बड़े पैमाने पर धन खर्च करने की।
- मतदान के दिन चुनावी धांधली। मतदाताओं को डराना और फ़र्जी मतदान करना।

इनमें से अनेक खबरें सही होती हैं। ऐसी खबरों को पढ़ने या टीवी पर देखते हुए हमें दुख होता है। पर सौभाग्य से ये गड़बड़ियाँ इतने बड़े पैमाने पर नहीं होतीं कि चुनाव के उद्देश्य को ही नकार दें। इस परिप्रेक्ष्य में अगर एक-एक करके सवाल उठाएँ तो यह बात ज़्यादा स्पष्ट हो जाती है। क्या कोई पार्टी बिना जनसमर्थन के सिर्फ़ चुनावी धाँधलियों के सहारे चुनाव जीतकर सत्ता में आ सकती है? यह एक महत्त्वपूर्ण सवाल है। आइए, इस सवाल के विभिन्न पहलुओं पर सावधानी से गौर करें।

स्वतंत्र चुनाव आयोग

चुनाव निष्पक्ष हुए हैं या नहीं इसे जाँचने का एक सरल तरीका है यह देखना कि उनका संचालन कौन करता है। क्या चुनाव कराने वाले लोग सरकार से स्वतंत्र हैं? या फिर सरकार या शासक पार्टी उन पर दबाव और प्रभाव बनाती है? क्या उनके पास स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने की शक्ति है? क्या वे इन शक्तियों का वास्तव में प्रयोग करते हैं?

हमारे देश के लिए इन सवालों का जवाब काफी हद तक सकारात्मक है। हमारे देश में चुनाव एक स्वतंत्र और बहुत ताकतवर चुनाव आयोग द्वारा करवाए जाते हैं। इसे न्यायपालिका के समान ही आज़ादी प्राप्त है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति करते हैं। एक बार नियुक्ति हो जाने के बाद निर्वाचन आयुक्त राष्ट्रपति या सरकार के प्रति जवाबदेह नहीं रहता। अगर शासक पार्टी या सरकार को चुनाव आयोग पसंद न हो तब भी मुख्य निर्वाचन आयुक्त को हटा पाना लगभग असंभव है।

भारत निर्वाचन आयोग के बारे में अधिक जानकारी के लिए देखें https://eci.gov.in

दुनिया के शायद ही किसी चुनाव आयोग को भारत निर्वाचन आयोग जितने अधिकार प्राप्त होंगे।

- निर्वाचन आयोग चुनाव की अधिसूचना जारी करने से लेकर चुनावी नतीजों की घोषणा तक, पूरी चुनाव प्रक्रिया के संचालन के हर पहलू पर निर्णय लेता है।
- यह आदर्श चुनाव संहिता लागू कराता है और इसका उल्लंघन करने वाले उम्मीदवारों और पार्टियों को सज़ा देता है।
- चुनाव के दौरान निर्वाचन आयोग सरकार को दिशा-निर्देश मानने का आदेश दे सकता है। इसमें सरकार द्वारा चुनाव जीतने के लिए चुनाव में सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग रोकना या अधिकारियों का तबादला करना भी शामिल है।
- चुनाव ड्यूटी पर तैनात अधिकारी सरकार के नियंत्रण में न होकर निर्वाचन आयोग के अधीन काम करते हैं।

चुनाव आयोग के पास इतनी शक्ति क्यों है? क्या यह लोकतंत्र के लिए अच्छा है?

पिछले करीब पच्चीस वर्षों के दौरान निर्वाचन आयोग ने अपनी सारी शक्तियों का उपयोग

शुरू किया है। साथ ही उसने अपनी शक्तियों में विस्तार भी किया है। अब यह आम बात हो गयी है कि निर्वाचन आयोग सरकार और प्रशासन को उनकी गलतियों के लिए फटकार लगाए। अगर चुनाव अधिकारियों को लगता है कि कुछ मतदान केंद्रों पर या पूरे चुनाव क्षेत्र में मतदान ठीक ढंग से नहीं हुआ है तो वे वहाँ फिर से मतदान का आदेश देते हैं। अक्सर शासक दलों को निर्वाचन आयोग के कामकाज से परेशानी होती है लेकिन उन्हें निर्वाचन आयोग के आदेश मानने होते हैं। अगर निर्वाचन आयोग स्वतंत्र और शक्तिशाली नहीं होता तो यह संभव न था।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

चुनाव आयोग ने 14वीं लोकसभा के गठन की अधिसूचना जारी की ।

उच्च न्यायालय ने चुनाव आयोग से अपराधी नेताओं पर रोक लगाने को कहा।

बिहार के चुनाव में मतदान के लिए फोटो पहचान पत्र अनिवार्य।

चुनाव आयोग को हरियाणा के नए पुलिस प्रमुख की नियुक्ति स्वीकार।

चुनाव आयोग ने चुनाव खर्च पर नकेल कसी।

चुनाव आयोग ने 398 मतदान केंद्रों पर फिर से वोट डालने के आदेश दिए।

चुनाव आयोग का एक और गुजरात दौरा, चुनावी तैयारियों का जायजा लिया।

राजनैतिक विज्ञापनों पर सेंसर का अधिकार हो: चुनाव आयोग

चुनाव आयोग ने गृह मंत्रालय के चुनाव सुधार संबंधी सुझाव नकारे।

'एक्ज़िट पोल' पर प्रतिबंध लगाने की फिलहाल कोई योजना नही–चुनाव आयोग।

चुनाव के गुप्त खर्च पर चुनाव आयोग की नजर।

इन सुर्खियों को ध्यान से पढ़िए और पहचानिए कि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के लिए चुनाव आयोग किन शक्तियों का प्रयोग कर रहा है।

चुनाव में लोगों की भागीदारी

चुनावी प्रक्रिया की गुणवत्ता को जाँचने का एक और तरीका यह देखना है कि इसमें लोग उत्साह से भागीदारी करते हैं या नहीं। अगर चुनाव प्रक्रिया स्वतंत्र और निष्पक्ष नहीं होगी तो लोग इसमें भागीदारी करना ज़ारी नहीं रखेंगे। अब इन लेखाचित्रों को पढ़िए और भारतीय चुनाव में लोगों की भागीदारी के बारे में कुछ निष्कर्ष निकालिए।

1 चुनाव में लोगों की भागीदारी का पैमाना आम तौर पर मतदान करने वाले लोगों के आँकड़े को बनाया जाता है। मतदान की योग्यता रखने वाले कितने प्रतिशत लोगों ने असल में मतदान किया यह हिसाब लगाना मुश्किल नहीं है। पिछले पचास वर्षों में यूरोप और उत्तरी अमेरिका के लोकतांत्रिक देशों में मतदान का प्रतिशत गिरा है। भारत में यह या तो स्थिर रहा है या ऊपर गया है।

1 भारत और ब्रिटेन में मतदान का प्रतिशत

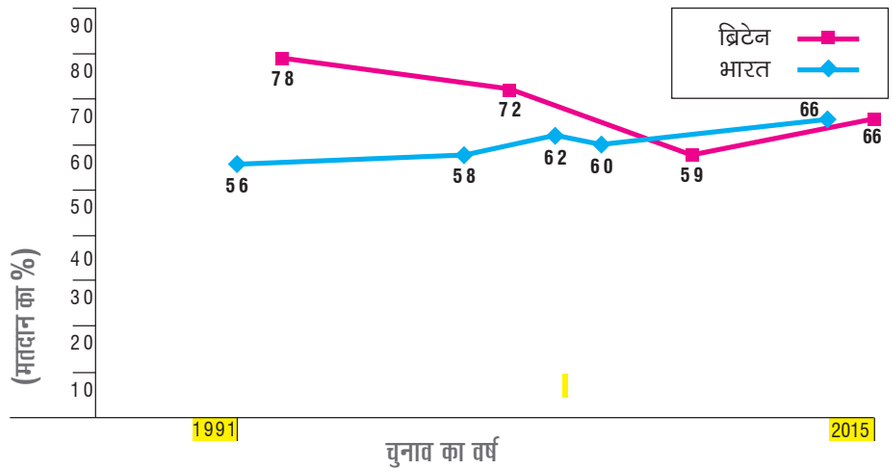

2 भारत में अमीर और बड़े लोगों की तुलना में गरीब, निरक्षर और कमज़ोर लोग ज्यादा संख्या में मतदान करते हैं। पश्चिम के लोकतंत्रों में स्थिति इससे उलट है। अमेरिका में गरीब लोग, अफ्रीकी मूल के लोग और हिस्पैनिक लोग अमीर और श्वेत लोगों की तुलना में काफी कम मतदान करते हैं।

2 भारत और अमेरिका में विभिन्न सामाजिक समूहों में मतदान प्रतिशत की तुलना

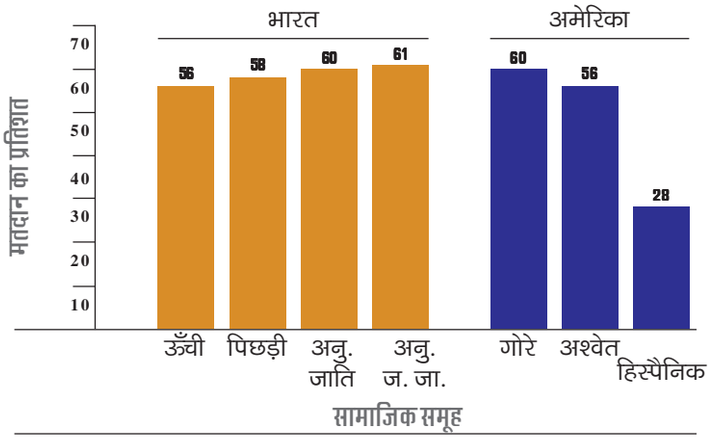

स्रोतः भारत के आँकड़े–राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन 2004 और सीएसडीएस। अमेरिकी आँकड़े-नेशनल इलेक्शन स्टडी 2004, यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन।

3 भारत में आम लोग चुनावों को बहुत महत्त्व देते हैं। उन्हें लगता है कि चुनाव के ज़रिए वे राजनैतिक दलों पर अपने अनुकूल नीति और कार्यक्रमों के लिए दबाव डाल सकते हैं। उन्हें लगता है कि देश के शासन-संचालन के तरीके में उनके वोट का महत्त्व है।

3 क्या आपको लगता है कि आपके वोट से फ़र्क पड़ता है?

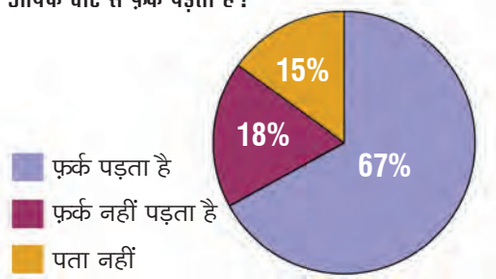

स्रोतः राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन 2004, सीएसडीएस

4 साल-दर-साल चुनाव से संबंधित गतिविधियों में लोगों की सक्रियता बढ़ती जा रही है। 2004 के चुनाव में एक-तिहाई से ज़्यादा मतदाताओं ने चुनाव अभियान वाली गतिविधियों में किसी-न-किसी तरह की भागीदारी की। आधे से ज़्यादा लोगों ने खुद को किसी-न-किसी दल के नज़दीक बताया। प्रत्येक सात मतदाताओं में से एक व्यक्ति किसी-न-किसी राजनैतिक दल का सदस्य था।

4 भारत में चुनाव से संबंधित किसी भी गतिविधि में भाग लेने वालों का प्रतिशत

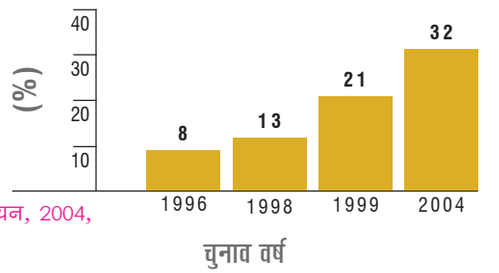

स्रोतः राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन, 2004, सीएसडीएस

खुद करें, खुद सीखें

अपने परिवार के जो सदस्य मतदाता हैं उनसे पूछें कि उन्होंने पिछले लोकसभा या विधानसभा चुनाव में वोट दिया था या नहीं? अगर उन्होंने वोट नहीं दिया हो तो उनसे इसका कारण पूछिए। अगर उन्होंने मतदान किया हो तो उनसे पूछिए कि उन्होंने किस पार्टी और किस उम्मीदवार को वोट दिया और क्यों दिया। उनसे यह भी पूछिए कि क्या चुनावी सभा या रैली में शामिल होने जैसी किसी चुनावी गतिविधि में भी उन्होंने हिस्सा लिया था।

चुनावी नतीजों को स्वीकार करना

चुनाव के स्वतंत्र और निष्पक्ष होने का आखिरी पैमाना उसके नतीजे ही हैं। अगर चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष ढंग से न हों तो नतीजे हरदम ताकतवर जमात के पक्ष में ही जाते हैं। ऐसी स्थिति में शासक पार्टी चुनाव हारती ही नहीं है। आम तौर पर हारने वाली पार्टी गड़बड़ ढंग से कराए गए चुनाव के नतीजों को स्वीकार नहीं करती।

भारत में चुनावी नतीजे खुद ही काफ़ी कुछ कह देते हैं।

- भारत में शासक दल राष्ट्रीय और प्रांतीय स्तर पर अकसर चुनाव हारते रहे हैं। बल्कि पिछले पंद्रह वर्षों में भारत में जितने चुनाव हुए हैं उनमें से प्रत्येक तीन में से दो में शासक पार्टियाँ हारी ही हैं।
- अमेरिका में मौजूदा चुना हुआ प्रतिनिधि शायद ही कभी चुनाव हारता है। भारत में निवर्तमान सांसदों और विधायकों में से आधे चुनाव हार जाते हैं।
- 'वोट खरीदने' में सक्षम पैसे वाले उम्मीदवार हों या आपराधिक पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवार, उनका भी चुनाव हारना बहुत आम है।
- कुछेक अपवादों को छोड़ दें तो अकसर हारी हुई पार्टी भी चुनाव के नतीजों को जनादेश मानकर स्वीकार कर लेती है।

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव की चुनौतियाँ

इन बातों से हम इस सरल से निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत में चुनाव बुनियादी रूप से स्वतंत्र और निष्पक्ष हैं। जो पार्टी चुनाव जीतकर सरकार बनाती है उसे लोगों का समर्थन प्राप्त होता ही है। संभव है कि हर निर्वाचन क्षेत्र पर यह बात लागू न होती हो। कुछ उम्मीदवार पैसों के ज़ोर पर या गलत तरीकों से जीते हो सकते हैं पर चुनाव का कुल नतीज़ा अभी भी लोगों की इच्छा को ही बताता है। पिछले पचास वर्षों में हमारे देश में इस सामान्य नियम के थोड़े-बहुत अपवाद हैं। और यही चीज़ भारतीय चुनाव प्रणाली को लोकतांत्रिक बनाती है।

पर जब आप थोड़े ज़्यादा गंभीर मसलों पर गौर करके कुछ सवाल उठाएँगे तो तस्वीर थोड़ी अलग लगेगी। क्या लोग पूरी समझदारी और सारी चीज़ें जानकर फ़ैसले करते हैं? क्या मतदाताओं के पास सचमुच स्वस्थ विकल्प उपलब्ध होते हैं? क्या चुनाव मैदान सबको बराबरी का अवसर देता है? क्या कोई सामान्य नागरिक चुनाव जीतने की कल्पना भी कर सकता है? इस तरह के सवाल भारतीय चुनाव व्यवस्था की सीमाओं और चुनौतियों की ओर हमारा ध्यान दिलाते हैं। ये कुछ ऐसे ही मुद्दे हैं:

- ज़्यादा रुपये-पैसे वाले उम्मीदवार और पार्टियाँ गलत तरीके से चुनाव जीत ही जाएँगे यह कहना मुश्किल है पर उनकी स्थिति दूसरों से ज़्यादा मज़बूत रहती है।

इस कार्टून में एक नेताजी को संवाददाता सम्मेलन से बाहर आते हुए दिखाया गया है और वे भाई-भतीजावाद के पक्ष में बोल रहे हैं। क्या भाई-भतीजावाद कुछ राज्यों और पार्टियों तक ही सीमित है?

कार्टून बूझें

© नर्लिकॉन, एल इकानोमिस्ता, केगल कार्टून्स इंक

चुनावी अभियान शीर्षक वाला यह कार्टून लातिनी अमेरिका के संदर्भ में बना था। क्या यह भारत और अन्य लोकतांत्रिक देशों पर भी लागू होता है?

कार्टून बूझें

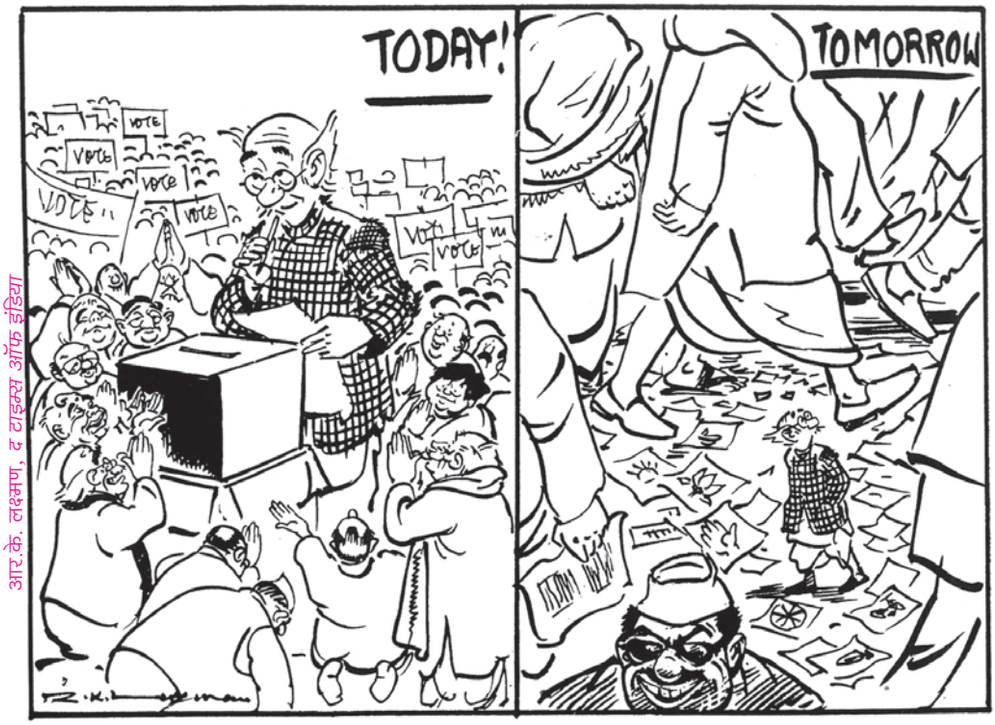

आर.के. लक्ष्मण, द टाइम्स ऑफ इंडिया

क्या यह कार्टून वोट के पहले और बाद में मतदाता की सही स्थिति को दिखाता है? क्या किसी लोकतंत्र में ऐसा हमेशा ही होगा? क्या आप कुछ ऐसे उदाहरण सोच सकते हैं जब ऐसा नहीं हुआ हो?

- देश के कुछ इलाकों में आपराधिक पृष्ठभूमि और संबंधों वाले उम्मीदवार दूसरों को चुनाव मैदान से बाहर करने और बड़ी पार्टियों के टिकट पाने में सफल होने लगे हैं।
- अलग-अलग पार्टियों में कुछेक परिवारों का ज़ोर है और उनके रिश्तेदार आसानी से टिकट पा जाते हैं।
- अकसर आम आदमी के लिए चुनाव में कोई ढंग का विकल्प नहीं होता क्योंकि दोनों प्रमुख पार्टियों की नीतियाँ और व्यवहार कमोबेश एक-से होते हैं।
- बड़ी पार्टियों की तुलना में छोटे दलों और निर्दलीय उम्मीदवारों को कई तरह की परेशानियाँ उठानी पड़ती हैं।

ये चुनौतियाँ भारत की ही नहीं हैं। कई स्थापित लोकतंत्रों की भी यही स्थिति है। लोकतंत्र में जो लोग आस्था रखते हैं उनके लिए ये चीज़ें गहरी चिंता का विषय हैं। इनमें से कुछ समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए चुनाव प्रणाली में ज़रूरी बदलावों की माँग नागरिकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और संगठनों की तरफ़ से होती रही है। क्या आप कुछ चुनाव सुधार सुझा सकते हैं? इन चुनौतियों का सामना करने के लिए एक आम नागरिक क्या कर सकता है?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

ये भारतीय चुनावों के बारे में कुछ तथ्य हैं। इनमें से प्रत्येक पर टिप्पणी करके यह बताइए कि ये चीज़ें हमारी चुनाव प्रणाली की शक्ति को बढ़ाती हैं या कमज़ोरी को।

- सोलहवीं लोकसभा में महिला सदस्यों की संख्या 12 फ़ीसदी ही है।
- चुनाव कब हों इस बारे में अकसर चुनाव आयोग सरकार की नहीं सुनता।
- सोलहवीं लोकसभा के 440 से अधिक सदस्यों की संपत्ति एक करोड़ से भी अधिक है।
- चुनाव हारने के बाद एक मुख्यमंत्री ने कहा, 'मुझे जनादेश मंजूर है।'

चुनावी धांधली: चुनाव में अपने वोट बढ़ाने के लिए उम्मीदवारों और पार्टियों द्वारा की जाने वाली गड़बड़ या फ़रेब। इसमें कुछ ही लोगों द्वारा काफ़ी सारे लोगों के वोट डाल देना; एक ही व्यक्ति द्वारा अलग-अलग लोगों के नाम पर वोट डालना और मतदान-अधिकारियों को डरा-धमकाकर या रिश्वत देकर अपने उम्मीदवार के पक्ष में काम करवाना जैसी बातें शामिल हैं।

निर्वाचन क्षेत्र: एक खास भौगोलिक क्षेत्र के मतदाता जो एक प्रतिनिधि का चुनाव करते हैं।

आचार-संहिता: चुनाव के समय पार्टियों और उम्मीदवारों द्वारा माने जाने वाले कायदे-कानून और दिशा-निर्देश।

प्रश्नावली

1. चुनाव क्यों होते हैं, इस बारे में इनमें से कौन-सा वाक्य ठीक नहीं है?

   क. चुनाव लोगों को सरकार के कामकाज का फ़ैसला करने का अवसर देते हैं।
   ख. लोग चुनाव में अपनी पसंद के उम्मीदवार का चुनाव करते हैं।
   ग. चुनाव लोगों को न्यायपालिका के कामकाज का मूल्यांकन करने का अवसर देते हैं।
   घ. लोग चुनाव से अपनी पसंद की नीतियाँ बना सकते हैं।

2. भारत के चुनाव लोकतांत्रिक हैं, यह बताने के लिए इनमें कौन-सा वाक्य सही कारण नहीं देता?

   क. भारत में दुनिया के सबसे ज़्यादा मतदाता हैं।
   ख. भारत में चुनाव आयोग काफ़ी शक्तिशाली है।
   ग. भारत में 18 वर्ष से अधिक उम्र का हर व्यक्ति मतदाता है।
   घ. भारत में चुनाव हारने वाली पार्टियाँ जनादेश स्वीकार कर लेती हैं।

3. निम्नलिखित में मेल ढूँढ़ें

क. समय-समय पर मतदाता सूची का नवीनीकरण आवश्यक है ताकि	1. समाज के हर तबके का समुचित प्रतिनिधित्व हो सके।
ख. कुछ निर्वाचन-क्षेत्र अनु.जाति और अनु. जनजाति के लिए आरक्षित हैं ताकि	2. हर एक को अपना प्रतिनिधि चुनने का समान अवसर मिले।
ग. प्रत्येक को सिर्फ़ एक वोट डालने का हक है ताकि	3. हर उम्मीदवार को चुनावों में लड़ने का समान अवसर मिले।
घ. सत्ताधारी दल को सरकारी वाहन के इस्तेमाल की अनुमति नहीं क्योंकि	4. संभव है कुछ लोग उस जगह से अलग चले गए हों जहाँ उन्होंने पिछले चुनाव में मतदान किया था।

प्रश्नावली

4. इस अध्याय में वर्णित चुनाव संबंधी सभी गतिविधियों की सूची बनाएँ और इन्हें चुनाव में सबसे पहले किए जाने वाले काम से लेकर आखिर तक के क्रम में सजाएँ। इनमें से कुछ मामले हैं:

   चुनाव घोषणा पत्र जारी करना, वोटों की गिनती, मतदाता सूची बनाना, चुनाव अभियान, चुनाव नतीजों की घोषणा, मतदान, पुनर्मतदान के आदेश, चुनाव प्रक्रिया की घोषणा, नामांकन दाखिल करना।

5. सुरेखा एक राज्य विधानसभा क्षेत्र में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने वाली अधिकारी है। चुनाव के इन चरणों में उसे किन-किन बातों पर ध्यान देना चाहिए?

   क. चुनाव प्रचार
   ख. मतदान के दिन
   ग. मतगणना के दिन

6. नीचे दी गई तालिका बताती है कि अमेरिकी कांग्रेस के चुनावों के विजयी उम्मीदवारों में अमेरिकी समाज के विभिन्न समुदाय के सदस्यों का क्या अनुपात था। ये किस अनुपात में जीते इसकी तुलना अमेरिकी समाज में इन समुदायों की आबादी के अनुपात से कीजिए। इसके आधार पर क्या आप अमेरिकी संसद के चुनाव में भी आरक्षण का सुझाव देंगे? अगर हाँ तो क्यों और किस समुदाय के लिए? अगर नहीं, तो क्यों?

   समुदाय का प्रतिनिधित्व (प्रतिशत में)

	अमेरिकी प्रतिनिधि सभा में	अमेरिकी समाज में
अश्वेत	8	13
हिस्पैनिक	5	13
श्वेत	86	7`

7. क्या हम इस अध्याय में दी गई सूचनाओं के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाल सकते हैं? इनमें से सभी पर अपनी राय के पक्ष में दो तथ्य प्रस्तुत कीजिए।

   क. भारत के चुनाव आयोग को देश में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव करा सकने लायक पर्याप्त अधिकार नहीं हैं।
   ख. हमारे देश के चुनाव में लोगों की जबर्दस्त भागीदारी होती है।
   ग. सत्ताधारी पार्टी के लिए चुनाव जीतना बहुत आसान होता है।
   घ. अपने चुनावों को पूरी तरह से निष्पक्ष और स्वतंत्र बनाने के लिए कई कदम उठाने ज़रूरी हैं।

8. चिनप्पा को दहेज के लिए अपनी पत्नी को परेशान करने के जुर्म में सज़ा मिली थी। सतबीर को छुआछूत मानने का दोषी माना गया था। दोनों को अदालत ने चुनाव लड़ने की इजाज़त नहीं दी। क्या यह फ़ैसला लोकतांत्रिक चुनावों के बुनियादी सिद्धांतों के खिलाफ़ जाता है? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

9. यहाँ दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में चुनावी गड़बड़ियों की कुछ रिपोर्टें दी गई हैं। क्या ये देश अपने यहाँ के चुनावों में सुधार के लिए भारत से कुछ बातें सीख सकते हैं? प्रत्येक मामले में आप क्या सुझाव देंगे?

   क. नाइजीरिया के एक चुनाव में मतगणना अधिकारी ने जान-बूझकर एक उम्मीदवार को मिले वोटों की संख्या बढ़ा दी और उसे जीता हुआ घोषित कर दिया। बाद में अदालत ने पाया कि दूसरे उम्मीदवार को मिले पाँच लाख वोटों को उस उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज कर लिया गया था।

ख. फिजी में चुनाव से ठीक पहले एक परचा बाँटा गया जिसमें धमकी दी गई थी कि अगर पूर्व प्रधानमंत्री महेंद्र चौधरी के पक्ष में वोट दिया गया तो खून-खराबा हो जाएगा। यह धमकी भारतीय मूल के मतदाताओं को दी गई थी।

ग. अमेरिका के हर प्रांत में मतदान, मतगणना और चुनाव संचालन की अपनी-अपनी प्रणालियाँ हैं। सन् 2000 के चुनाव में फ्लोरिडा प्रांत के अधिकारियों ने जॉर्ज बुश के पक्ष में अनेक विवादास्पद फ़ैसले लिए पर उनके फ़ैसले को कोई भी नहीं बदल सका।

10. भारत में चुनावी गड़बड़ियों से संबधित कुछ रिपोर्टें यहाँ दी गई हैं। प्रत्येक मामले में समस्या क ी पहचान कीजिए। इन्हें दूर करने के लिए क्या किया जा सकता है?

क. चुनाव की घोषणा होते ही मंत्री महोदय ने बंद पड़ी चीनी मिल को दोबारा खोलने के लिए वित्तीय सहायता देने की घोषणा की।

ख. विपक्षी दलों का आरोप था कि दूरदर्शन और आकाशवाणी पर उनके बयानों और चुनाव अभियान को उचित जगह नहीं मिली।

ग. चुनाव आयोग की जाँच से एक राज्य की मतदाता सूची में 20 लाख फर्ज़ी मतदाताओं के नाम मिले।

घ. एक राजनैतिक दल के गुंडे बंदूकों के साथ घूम रहे थे, दूसरी पार्टियों के लोगों को मतदान में भाग लेने से रोक रहे थे और दूसरी पार्टी की चुनावी सभाओं पर हमले कर रहे थे।

11. जब यह अध्याय पढ़ाया जा रहा था तो रमेश कक्षा में नहीं आ पाया था। अगले दिन कक्षा में आने के बाद उसने अपने पिताजी से सुनी बातों को दोहराया। क्या आप रमेश को बता सकते हैं कि उसके इन बयानों में क्या गड़बड़ी है?

क. औरतें उसी तरह वोट देती हैं जैसा पुरुष उनसे कहते हैं इसलिए उनको मताधिकार देने का कोई मतलब नहीं है।

ख. पार्टी-पॉलिटिक्स से समाज में तनाव पैदा होता है। चुनाव में सबकी सहमति वाला फ़ैसला होना चाहिए, प्रतिद्वंद्विता नहीं होनी चाहिए।

ग. सिर्फ स्नातकों को ही चुनाव लड़ने की इजाज़त होनी चाहिए।

राज्य विधानसभाओं के चुनाव अब किसी-न-किसी राज्य में हर वर्ष होते ही रहते हैं। तुम्हारी पढ़ाई के इस वर्ष में जिस राज्य में चुनाव हो रहे हैं उससे संबंधित सूचनाएँ इकट्ठा करो। सूचनाएँ जमा करते हुए उन्हें तीन हिस्सों में बाँटते चलो।

- चुनाव के पहले क्या-क्या मुख्य घटनाएँ हुईं–राजनैतिक दलों का मुख्य एजेंडा, लोगों की मांगों के बारे में सूचनाएँ, चुनाव आयोग की भूमिका।
- मतदान और मतगणना के दिन क्या मुख्य घटनाएँ थीं–चुनाव में भाग लेने वालों का प्रतिशत क्या था, क्या चुनावी गड़बड़ी भी हुई, क्या पुनर्मतदान हुए, किस तरह की भविष्यवाणियाँ की गई थीं।
- चुनाव के बाद क्या हुआ–चुनाव जीतने या हारने वाली पार्टियों ने क्या दावे किए, कौन पार्टी सफ़ल हुई, मुख्यमंत्री का चुनाव किस प्रकार हुआ।

राष्ट्रीय मतदाता दिवस प्रतिज्ञा

हम, भारत के नागरिक, लोकतंत्र में अपनी पूर्ण आस्था रखते हुए यह शपथ लेते हैं कि हम अपने देश की लोकतांत्रिक परम्पराओं की मर्यादा को बनाए रखेंगे तथा स्वतंत्र, निष्पक्ष एवं शांतिपूर्ण निर्वाचन की गरिमा को अक्षुण्ण रखते हुए, निर्भीक होकर धर्म, वर्ग, जाति, समुदाय, भाषा अथवा अन्य किसी भी प्रलोभन से प्रभावित हुए बिना सभी निर्वाचनों में अपने मताधिकार का प्रयोग करेंगे।

आपके विद्यालय ने 25 जनवरी को **राष्ट्रीय मतदाता दिवस** (National Voters' Day-NVD) कैसे मनाया? क्या आपने एनवीडी (NVD) प्रतिज्ञा ली?

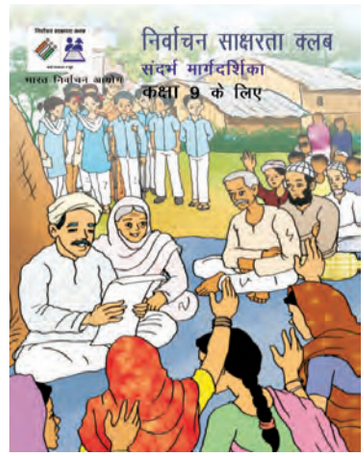

क्या आपके विद्यालय में निर्वाचन साक्षरता क्लब (Electoral Literacy Club—ELC) काम कर रहा है? भारत निर्वाचन आयोग के सुव्यवस्थित मतदाता शिक्षा एवं निर्वाचक सहभागिता (Systematic Voters' Education and Electoral Participation—SVEEP) कार्यक्रम के बारे में जानकारी के लिए, देखें http://ecisveep.nic.in

2016 में 67वें गणतंत्र दिवस के अवसर पर नई दिल्ली में राजपथ से गुजरती हुई भारत निर्वाचन आयोग की झाँकी।

0973CH04

अध्याय 4

संस्थाओं का कामकाज

परिचय

लोकतंत्र का मतलब लोगों द्वारा अपने शासकों का चुनाव करना भर नहीं है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में शासकों को भी कुछ कायदे-कानूनों को मानना होता है। उन्हें भी संस्थाओं के साथ और संस्थाओं के भीतर ही रहकर काम करना होता है। यह अध्याय लोकतंत्र में संस्थाओं के कामकाज से संबंधित है। हम इसमें समझने का प्रयास करेंगे कि हमारे देश में किस तरह महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करके उन्हें लागू किया जाता है। हम यह भी देखेंगे कि इन फ़ैसलों से संबंधित विवादों को किस तरह सुलझाया जाता है। इस अध्याय में हम इन फ़ैसलों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली तीन संस्थाओं–विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका–पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

आप पहले की कक्षाओं में इन संस्थाओं के बारे में कुछ जानकारी हासिल कर चुके होंगे। हम यहाँ उनका संक्षेप में वर्णन करके कुछ और महत्त्वपूर्ण सवालों पर ध्यान देंगे। हर संस्था के संबंध में हम यह प्रश्न करेंगे कि वह किस तरह के काम करती है? एक संस्था दूसरी संस्था से कैसे जुड़ी है? इनके कामों को क्या चीज़ कम या ज़्यादा लोकतांत्रिक बनाती है? इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि किस तरह ये संस्थाएँ मिलकर सरकार का काम करती हैं। कई बार हम इनकी तुलना दूसरी लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं की इसी तरह की संस्थाओं से करते हैं। इस अध्याय में हम राष्ट्रीय स्तर की सरकार के कामकाज से उदाहरण देंगे, राष्ट्रीय स्तर पर भारत की सरकार को केंद्र या संघ की सरकार भी कहा जाता है। इस अध्याय को पढ़ते हुए आप अपने प्रदेश की सरकार के कामकाज के उदाहरणों पर भी नज़र रख सकते हैं।

4.1 प्रमुख नीतिगत फ़ैसले कैसे किए जाते हैं?

एक सरकारी आदेश

13 अगस्त 1990 के दिन भारत सरकार ने एक आदेश जारी किया। इसे कार्यालय ज्ञापन कहा गया। सभी सरकारी आदेशों की तरह, इस ज्ञापन पर भी एक संख्या थी। यह आदेश उसी संख्या से जाना जाता है: ओ.एम.नं. 36012/31/90। कार्मिक, जनशिकायत और पेंशन मंत्रालय के कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग के एक संयुक्त सचिव, ने इस आदेश पर दस्तखत किए थे। यह छोटा-सा आदेश, मुश्किल से एक पन्ने का था। अगर आप इसे देखेंगे तो यह एक वैसा ही आम सर्कुलर या नोटिस लगेगा जैसे आपने स्कूल में देखे होंगे। सरकार हर रोज विभिन्न मसलों पर सैकड़ों आदेश जारी करती है। लेकिन यह आदेश बहुत महत्त्वपूर्ण था और कई सालों तक विवाद का कारण बना रहा। आइए देखें कि यह निर्णय किस तरह लिया गया और इसके बाद क्या हुआ।

इस सरकारी आदेश में एक प्रमुख नीतिगत फ़ैसले की घोषणा की गई थी। इसमें कहा गया

G.I., Dept. of Per. & Trg., O.M. No.36012/31/90-Est. (SCT), dated 13.8.1990

SUBJECT: 27% Reservation for Socially and Educationally Backward Classes in Civil Posts/ Services.

In a multiple undulating society like ours, early achievement of the objective of social justice as enshrined in the Constitution is a must. The Second Backward Classes Commission, called the MANDAL COMMISSION, was established by the then Government with this purpose in view, which submitted its report to the Government of India on 31st December, 1980.

2. Government have carefully considered the report and the recommendations of the Commission in the present context regarding the benefits to be extended to the socially and educationally backward classes as opined by the Commission and are of the clear view that at the outset certain weightage has to be provided to such classes in the services of the Union and their Public Undertakings. Accordingly orders are issued as follows :-

(i) 27% of the vacancies in civil posts and services under the Government of India shall be reserved for SEBC;

(ii) The aforesaid reservation shall apply to vacancies to be filled by direct

G.I., Dept. of Per. & Trg., O.M. No.36012/22/93-Est. (SCT) dated 8.9.1993

SUBJECT: ***Reservation for Other Backward Classes in Civil Posts and Services under the Government of India - Regarding.***

The undersigned is directed to refer to this Department's O.M. No.36012/31/90-Estt. (SCT), dated the 13th August, 1990[1] and 25th September, 1991[2], regarding reservation for Socially and Educationally Backward Classes in Civil Posts and Services under the Government of India and to say that following the Supreme Court judgement in the Indira Sawhney and other v. Union of India and others case [Writ Petition (Civil) No.930 of 1990], the Government of India appointed an Expert Committee to recommend the criteria for exclusion of the socially advanced persons/sections from the benefits of reservations for Other Backward Classes in civil posts and services under the Government of India.

था कि भारत सरकार के सरकारी पदों और सेवाओं में 27 फीसदी रिक्तियाँ सामाजिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों (एसईबीसी) के लिए आरक्षित होंगी। अब तक जिन जाति समूहों को सरकार पिछड़ा मानती है उन्हीं का एक और नाम एसईबीसी (सोशली एंड एजुकेशनली बैकवर्ड क्लासेज) हैं। अब तक नौकरी में आरक्षण का लाभ केवल अनुसूचित जाति और जनजातियों को ही मिल रहा था। अब एसईबीसी या 'सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों' के लिए, तीसरी श्रेणी तैयार की जा रही थी और इनके लिए 27 फीसदी का अलग कोटा तैयार किया जा रहा था। अन्य लोग इन 27 फीसदी नौकरियों के लिए प्रतियोगिता नहीं कर सकते थे।

निर्णय करने वाले

इस ज्ञापन को जारी करने का फ़ैसला किसने किया? ज़ाहिर है, अकेले उस व्यक्ति ने इतना बड़ा फ़ैसला नहीं किया होगा जिसके हस्ताक्षर उस दस्तावेज पर थे। वह अपने मंत्री द्वारा दिए गए निर्देशों को लागू करने वाला अधिकारी था। कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग के मंत्री ने भी खुद यह निर्णय नहीं किया होगा। आप अनुमान लगा सकते हैं कि इतने बड़े निर्णय में देश के सभी प्रमुख अधिकारी शामिल रहे होंगे। आपने पिछली कक्षा में इनमें से कुछ के बारे में पहले पढ़ लिया होगा। अब एक बार फिर इन प्रमुख बिंदुओं पर सरसरी नज़र डालते हैं:

- राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष होता है और औपचारिक रूप से देश का सबसे बड़ा अधिकारी होता है।
- प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है और दरअसल सरकार की ओर से अधिकांश अधिकारों का इस्तेमाल वही करता है।
- प्रधानमंत्री की सिफ़ारिश पर राष्ट्रपति मंत्रियों को नियुक्त करता है। इनसे बनने वाले मंत्रिमंडल की बैठकों में ही राजकाज से जुड़े अधिकतर निर्णय लिए जाते हैं।
- संसद में राष्ट्रपति और दो सदन होते हैं– लोकसभा और राज्यसभा। प्रधानमंत्री को लोकसभा के सदस्यों के बहुमत का समर्थन हासिल होना ज़रूरी है।

तो, क्या कार्यालय ज्ञापन के फ़ैसले के मामले में ये सब शामिल थे? इसके बारे में पता करते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

- ऊपर बतायी गयी बातों के अलावा इन संस्थाओं के बारे में पिछली कक्षाओं की और कौन-सी बातें आपको याद हैं? कक्षा में उस पर चर्चा करें।
- क्या आप अपनी राज्य सरकार द्वारा लिए गए किसी बड़े फ़ैसले को याद कर सकते हैं? राज्यपाल, मंत्रिमंडल, राज्य विधानसभा और न्यायालय किस तरह इस निर्णय में शामिल थे?

यह सरकारी आदेश एक लंबे घटनाचक्र का परिणाम था। भारत सरकार ने 1979 में दूसरा पिछड़ी जाति आयोग गठित किया था। इसकी अध्यक्षता बी.पी. मंडल ने की थी और इसी के कारण इसे आम तौर पर मंडल आयोग कहते हैं। इसे भारत में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की पहचान के लिए मापदंड तय करने और उनका पिछड़ापन दूर करने के उपाय बताने का जिम्मा सौंपा गया। इस आयोग ने 1980 में अपनी सिफ़ारिशें दी। आयोग द्वारा सुझाए गए उपायों में एक सिफ़ारिश थी–सरकारी नौकरियों में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए 27 फीसदी आरक्षण देना। इस रिपोर्ट और उसकी सिफ़ारिशों पर संसद में चर्चा हुई।

वर्षों तक कई पार्टियाँ और सांसद इसे लागू करने की माँग करते रहे। फिर 1989 का

क्या हर सरकारी आदेश एक बड़ा राजनैतिक फ़ैसला होता है? इस सरकारी आदेश में खास बात है।

अब आई बात समझ में इसीलिए वे राजनीति के मंडलीकरण की बात करते हैं। ठीक कहा न मैंने?

कार्टून बूझें

सन् 1990-91 में आरक्षण पर बहस का मुद्दा इतना महत्वपूर्ण था कि विज्ञापनकर्ताओं ने अपने उत्पाद को बेचने के लिए इस विषय का उपयोग किया। क्या आप अमूल के इन होर्डिंग में राजनैतिक घटनाओं और बहसों की ओर कोई इशारा ढूँढ़ सकते हैं?

लोकसभा चुनाव हुआ। जनता दल ने अपने चुनाव घोषणापत्र में वादा किया कि सत्ता में आने पर वह मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करेगा। चुनाव के बाद जनता दल की ही सरकार बनी और इसके नेता वी.पी. ङ्क्षसह प्रधानमंत्री बने। इसके बाद कई घटनाएँ हुईं:

- नयी सरकार ने संसद में राष्ट्रपति के भाषण के जरिए मंडल रिपोर्ट लागू करने की अपनी मंशा की घोषणा की।
- 6 अगस्त 1990 को केंद्रीय कैबिनेट की बैठक में इसके बारे में एक औपचारिक निर्णय किया गया।
- अगले दिन प्रधानमंत्री वी.पी. ङ्क्षसह ने एक बयान के ज़रिए इस निर्णय के बारे में संसद के दोनों सदनों को सूचित किया।

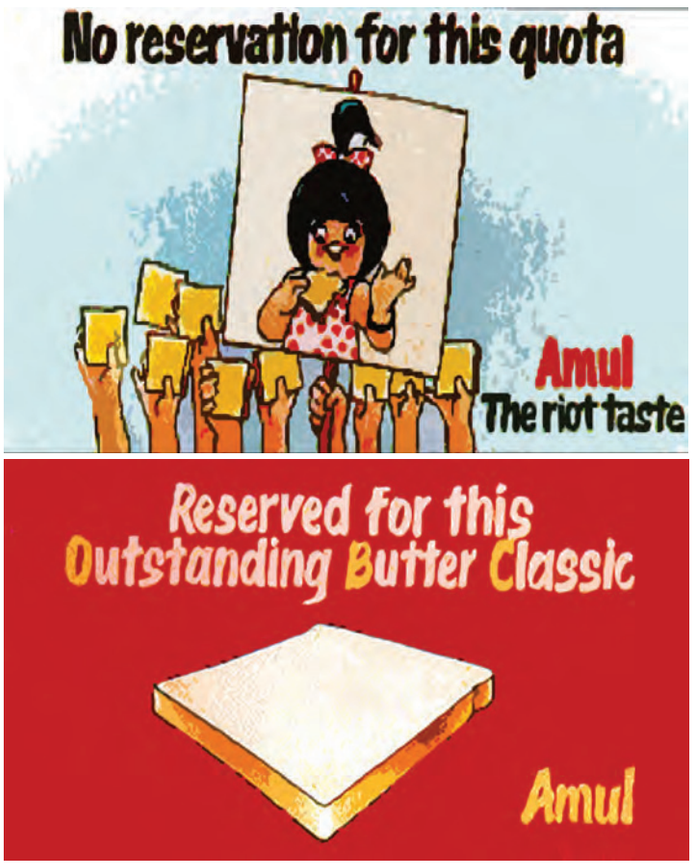

© गुजरात सहकारी दुग्ध संघ, भारत

- कैबिनेट के फ़ैसले को कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग को भेज दिया गया। विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों ने कैबिनेट के निर्णय के मुताबिक एक आदेश तैयार किया और मंत्री की स्वीकृति केंद्रीय सरकार की तरफ़ से ली। एक अधिकारी ने उस आदेश पर हस्ताक्षर किए और इस तरह 13 अगस्त 1990 को ओ.एम. नं. 36012/31/90 तैयार हो गया।

अगले कुछ महीनों तक यह देश का सबसे ज्यादा चर्चित मुद्दा बना रहा। सभी अखबार और पत्रिकाओं में इस मुद्दे पर तरह-तरह के विचार आये, बहस चली। इसके चलते कई प्रदर्शन और जवाबी प्रदर्शन हुए। इनमें से कुछ हिंसक भी थे। इससे नौकरियों के हज़ारों अवसर प्रभावित होने वाले थे इसलिए लोगों की प्रतिक्रिया बहुत तीखी थी। कुछ लोगों का मानना था कि भारत में विभिन्न जातियों के बीच असमानता के कारण ही नौकरियों में आरक्षण ज़रूरी है। उनका मानना था कि इससे उन लोगों को बराबरी पर आने का मौका मिलेगा जिनको सरकारी नौकरियों में अभी तक उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिला है।

दूसरे पक्ष के लोगों का मानना था कि इस निर्णय से जो पिछड़े वर्ग के नहीं हैं उनके अवसर छिनेंगे। अधिक योग्यता होने पर भी उनको नौकरियाँ नहीं मिलेंगी। कुछ लोगों का मानना था कि इससे जातिवाद बढ़ेगा जिससे देश की प्रगति और एकता पर असर होगा। यह निर्णय अच्छा था या नहीं–इस अध्याय में हम इस बारे में बात नहीं करेंगे। हम इस उदाहरण को यहाँ सिर्फ़ यह समझाने के लिए बता रहे हैं कि देश में प्रमुख निर्णय कैसे लिए जाते हैं और उन्हें कैसे लागू किया जाता है।

फिर इस विवाद का निपटारा किसने किया? आप जानते हैं कि सरकारी निर्णय से उठने वाले

विवादों का निपटारा सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय करते हैं। इस आदेश के विरोधी कुछ लोगों और संस्थाओं ने अदालतों में कई मुकदमे दायर कर दिए। उन्होंने अदालत से इस आदेश को अवैध घोषित करके लागू होने से रोकने की अपील की। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने इन सभी मुकदमों को एक साथ जोड़ दिया। इस मुकदमे को 'इंदिरा साहनी एवं अन्य बनाम भारत सरकार मामला' कहा जाता है। सर्वोच्च न्यायालय के 11 सबसे वरिष्ठ न्यायाधीशों ने दोनों पक्षों की दलीलें सुनीं। उन्होंने 1992 में बहुमत से फ़ैसला किया कि भारत सरकार का यह आदेश अवैध नहीं है। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार से उसके मूल आदेश में कुछ संशोधन करने को कहा। उसने कहा कि पिछड़े वर्ग के अच्छी स्थिति वाले लोगों को आरक्षण का लाभ नहीं मिलना चाहिए। उसी के मुताबिक, 8 सितंबर 1993 को कार्मिक एवं प्रशिक्षण मंत्रालय ने एक और आदेश ज़ारी किया। यह विवाद सुलझ गया और तभी से इस नीति पर अमल किया जा रहा है।

आरक्षण के मामले में किसने क्या किया?

सर्वोच्च न्यायालय	मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करने की औपचारिक घोषणा की।
कैबिनेट	आदेश जारी करके घोषणा को लागू किया।
राष्ट्रपति	27 फीसदी आरक्षण देने का फ़ैसला किया।
सरकारी अधिकारी	आरक्षण को वैध करार दिया।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

राजनैतिक संस्थाओं की आवश्यकता

हमने एक उदाहरण देखा कि सरकार कैसे काम करती है। किसी देश को चलाने में इस तरह की कई गतिविधियाँ शामिल होती हैं। मिसाल के तौर पर, सरकार पर नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने और सबको शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी होती है। वह कर इकट्ठा करती है और इसे सेना, पुलिस तथा विकास कार्यक्रमों पर खर्च करती है। वह विभिन्न कल्याणकारी योजनाएँ बनाकर उन्हें लागू करती है। कुछ व्यक्तियों को इन गतिविधियों को चलाने के लिए फ़ैसला करना होता है। कुछ लोगों को इन्हें लागू कराना होता है। अगर इन फ़ैसलों या फिर लागू करने में कोई विवाद उठता है तो यह तय करने वाला भी कोई होना चाहिए कि क्या सही है और क्या गलत है। सबके लिए यह जानना भी ज़रूरी है कि कौन किस काम को करने के लिए ज़िम्मेदार है। यह भी ज़रूरी है कि भले ही प्रमुख पदों पर बैठे लोग बदल जाएँ लेकिन ये गतिविधियाँ जारी रहें।

लिहाज़ा, सभी आधुनिक लोकतांत्रिक देशों में इन कामों को देखने के लिए विभिन्न व्यवस्थाएँ की गई हैं। इस तरह की व्यवस्थाओं को संस्थाएँ कहते हैं। कोई भी लोकतंत्र तभी ठीक से काम करता है जब ये संस्थाएँ अपने काम को अच्छी

आपके स्कूल को चलाने के लिए कौन-सी संस्थाएँ काम करती हैं? क्या यह अच्छा होता कि ज़्यादा स्कूल के कामकाज के बारे में सिर्फ एक व्यक्ति सभी फ़ैसले लेता?

तरह करती हैं। किसी भी देश के संविधान में प्रत्येक संस्था के अधिकारों और कार्यों के बारे में बुनियादी नियमों का वर्णन होता है। दिए गए उदाहरण में हमने इस तरह की विभिन्न संस्थाओं को काम करते देखा।

- प्रधानमंत्री और कैबिनेट ऐसी संस्थाएँ हैं जो सभी महत्त्वपूर्ण नीतिगत फ़ैसले करती हैं।
- मंत्रियों द्वारा किए गए फ़ैसले को लागू करने के उपायों के लिए एक निकाय के रूप में नौकरशाह ज़िम्मेदार होते हैं।
- सर्वोच्च न्यायालय वह संस्था है, जहाँ नागरिक और सरकार के बीच विवाद अंततः सुलझाए जाते हैं।

क्या आप इस उदाहरण में दूसरी संस्थाओं के बारे में सोच सकते हैं? उनकी भूमिका क्या है?

संस्थाओं के साथ काम करना आसान नहीं है। संस्थाओं के साथ कायदे-कानून जुड़े होते हैं। इनसे नेताओं के हाथ बंध सकते हैं। संस्थाओं के कामकाम में कुछ बैठकें, कुछ समितियाँ और कुछ रूटीन काम होता है। कुछ सामान्य रूटीन होता है। इनके कारण अक्सर काम में देरी और परेशानियाँ होती हैं। इसलिए संस्थाओं के साथ कामकाज में परेशानी महसूस की जा सकती है। ऐसे में कोई सोच सकता है कि एक ही व्यक्ति सारे फ़ैसले ले तो ज़्यादा बेहतर होगा। कायदे-कानून और बैठकों की क्या ज़रूरत है? पर यह सोच लोकतंत्र की बुनियादी भावना के अनुकूल नहीं है। संस्थाओं के कामकाज के तरीकों से जो कुछ परेशानियाँ होती हैं या थोड़ा वक्त लगता है, वह भी कई मायने में उपयोगी होता है। किसी भी फ़ैसले के पहले अनेक लोगों से राय-विचार करने का अवसर मिल जाता है। संस्थाओं के कारण एक अच्छा फ़ैसला झटपट करना आसान नहीं होता लेकिन संस्थाएँ बुरा फ़ैसला भी जल्दी ले पाना मुश्किल बना देती हैं। इसी कारण लोकतांत्रिक सरकारें संस्थाओं पर ज़ोर देती है।

4.2 संसद

कार्यालय ज्ञापन के उदाहरण में क्या आपको संसद की भूमिका याद है? शायद नहीं। चूंकि यह फ़ैसला संसद ने नहीं किया था, लिहाजा आपको लग सकता है कि इस फ़ैसले में संसद की कोई भूमिका नहीं थी। लेकिन पहले हम कुछ घटनाओं पर नज़र डालकर देखते हैं कि क्या उनमें संसद का कहीं कोई ज़िक्र था। हम उन्हें निम्नलिखित वाक्यों को पूरा करके याद करने की कोशिश करते हैं:

- मंडल आयोग की रिपोर्ट पर ... चर्चा हुई थी।
- भारत के राष्ट्रपति ने इसका ... ज़िक्र किया था।
- प्रधानमंत्री ने ...

यह फ़ैसला सीधे संसद में नहीं किया गया था। लेकिन इस रिपोर्ट पर संसद में हुई चर्चा से सरकार की राय प्रभावित हुई थी। इसकी वजह से सरकार पर मंडल आयोग की सिफ़ारिश पर कार्रवाई करने के लिए दबाव पड़ा था। अगर संसद इस फ़ैसले के पक्ष में नहीं होती तो सरकार यह कदम नहीं उठा सकती थी। क्या आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि क्यों सरकार यह कदम नहीं उठा सकती थी? आपने पहले की कक्षा में संसद के बारे में जो पढ़ा है उसे याद करके यह कल्पना करने की कोशिश कीजिए कि अगर संसद ने कैबिनेट के फ़ैसले को मंजूरी न दी होती तो क्या होता?

हमें संसद की आवश्यकता क्यों है ?

हर लोकतंत्र में निर्वाचित जन प्रतिनिधियों की सभा, जनता की ओर से सर्वोच्च राजनैतिक अधिकार का प्रयोग करती है। भारत में निर्वाचित प्रतिनिधियों की राष्ट्रीय सभा को संसद कहा जाता है। राज्य स्तर पर इसे विधानसभा कहते हैं। अलग-अलग देशों में इनके नाम अलग-अलग हो सकते हैं पर हर लोकतंत्र में निर्वाचित प्रतिनिधियों की सभा होती है। यह जनता की ओर से कई तरह से राजनैतिक अधिकार का प्रयोग करती है:

1. किसी भी देश में कानून बनाने का सबसे बड़ा अधिकार संसद को होता है। कानून बनाने या विधि निर्माण का यह काम इतना महत्त्वपूर्ण होता है कि इन सभाओं को विधायिका कहते हैं। दुनिया भर की संसदें नए कानून बना सकती हैं, मौजूदा कानूनों में संशोधन कर सकती हैं या मौजूदा कानून को खत्म कर उसकी जगह नये कानून बना सकती हैं।
2. दुनिया भर में संसद सरकार चलाने वालों को नियंत्रित करने के लिए कुछ अधिकारों का प्रयोग करती हैं। भारत जैसे देश में उसे सीधा और पूर्ण नियंत्रण हासिल है। संसद के पूर्ण समर्थन की स्थिति में ही सरकार चलाने वाले फ़ैसले कर सकते हैं।
3. सरकार के हर पैसे पर संसद का नियंत्रण होता है। अधिकांश देशों में संसद की मंजूरी के बाद ही सार्वजनिक पैसे को खर्च किया जा सकता है।
4. सार्वजनिक मसलों और किसी देश की राष्ट्रीय नीति पर चर्चा और बहस के लिए संसद ही सर्वोच्च संघ है। संसद किसी भी मामले में सूचना माँग सकती है।

जब हमें मालूम है कि जिस पार्टी की सरकार है उसके विचार ही प्रभावी होंगे तो संसद में इतनी बहस और चर्चा करने का क्या मतलब है?

संसद के दो सदन

चूँकि आधुनिक लोकतंत्रों में संसद बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, लिहाजा अधिकांश बड़े देशों ने संसद की भूमिका और अधिकारों को दो हिस्सों में बाँट दिया है। इन्हें चेंबर या सदन कहते हैं। पहले सदन के सदस्य आम तौर से सीधे जनता द्वारा चुने जाते हैं और जनता की ओर से असली अधिकारों का प्रयोग करते हैं। दूसरे सदन के सदस्य अमूमन परोक्ष रूप से चुने जाते हैं और कुछ विशेष काम करते हैं। दूसरे सदन का सामान्य काम विभिन्न राज्य, क्षेत्र और संघीय इकाइयों के हितों की निगरानी करना होता है।

हमारे देश में संसद के दो सदन हैं। दोनों सदनों में एक को राज्यसभा (काउंसिल ऑफ स्टेट्स) और दूसरे को लोकसभा (हाउस ऑफ पी'पल) के नाम से जाना जाता है। भारत का राष्ट्रपति संसद का हिस्सा होता है हालांकि वह दोनों में से किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता। इसीलिए संसद के फ़ैसले राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद ही लागू होते हैं।

आपने पिछली कक्षाओं में भारतीय संसद के बारे में पढ़ा है। अध्याय 4 से आपको पता चल गया है कि लोकसभा का चुनाव कैसे होता है। अब संसद के दोनों सदनों के गठन में प्रमुख अंतर को याद करते हैं। इन मामलों में लोकसभा और राज्यसभा के बारे में अलग-अलग जवाब दीजिए:

- कुल सदस्यों की संख्या कितनी होती है?...
- सदस्यों को कौन चुनता है?...
- उनका कार्यकाल कितना होता है?...
- क्या सदन को हमेशा के लिए भंग किया जा सकता है या वह स्थायी है?...

लोकसभा बनाम राज्य सभा

दोनों सदनों में से अधिक प्रभावशाली कौन है? राज्यसभा को कभी-कभी 'अपर हाउस' और लोकसभा को 'लोअर हाउस' कहा जाता है। इसका यह मतलब नहीं है कि राज्यसभा लोकसभा से ज़्यादा प्रभावशाली होती है। यह महज बोलचाल की पुरानी शैली है और हमारे संविधान में यह भाषा इस्तेमाल नहीं की गई है।

हमारे संविधान में राज्यों के संबंध में राज्यसभा को कुछ विशेष अधिकार दिए गए हैं। लेकिन अधिकतर मसलों पर सर्वोच्च अधिकार लोकसभा के पास ही है। आइए देखें, कैसे:

1. किसी भी सामान्य कानून को पारित करने के लिए दोनों सदनों की ज़रूरत होती है। लेकिन अगर दोनों सदनों के बीच कोई मतभेद हो तो अंतिम फ़ैसला दोनों के संयुक्त अधिवेशन में किया जाता है। इसमें दोनों सदनों के सदस्य एक साथ बैठते हैं। सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण इस तरह की बैठक में लोकसभा के विचार को प्राथमिकता मिलने की संभावना रहती है।
2. लोकसभा पैसे के मामलों में अधिक अधिकारों का प्रयोग करती है। लोकसभा में सरकार का बजट या पैसे से संबंधित कोई कानून पारित हो जाए तो राज्यसभा उसे खारिज नहीं कर सकती। राज्यसभा उसे पारित करने में केवल 14 दिनों की देरी कर सकती है या उसमें संशोधन के सुझाव दे सकती है। यह लोकसभा का अधिकार है कि वह उन सुझावों को माने या न माने।
3. सबसे बड़ी बात तो यह है कि लोकसभा मंत्रिपरिषद् को नियंत्रित करती है। सिर्फ़ वही व्यक्ति प्रधानमंत्री बन सकता है जिसे लोकसभा में बहुमत हासिल हो। अगर आधे से अधिक लोकसभा सदस्य यह कह दें कि उन्हें मंत्रिपरिषद् पर 'विश्वास नहीं' है तो प्रधानमंत्री समेत सभी मंत्रियों को पद छोड़ना होगा। राज्यसभा को यह अधिकार हासिल नहीं है।

खुद करें, खुद सीखें

संसद सत्र के दौरान दूरदर्शन पर लोकसभा और राज्यसभा की कार्यवाहियों पर रोज़ाना एक विशेष कार्यक्रम आता है। कार्यवाहियों को देखकर या अखबारों में उसके बारे में पढ़कर निम्नलिखित चीज़ों की सूची बनाएँ।

- संसद के दोनों सदनों के अधिकार
- अध्यक्ष की भूमिका
- विपक्ष की भूमिका

लोकसभा में एक दिन ...

चौदहवीं लोकसभा के कार्यकाल में 7 दिसंबर 2004 एक सामान्य दिन था। आइए इस बात पर गौर करें कि सदन में इस दिन क्या हुआ। इस दिन की कार्रवाई के आधार पर संसद की भूमिका और अधिकारों की पहचान करें। आप अपनी कक्षा में इस दिन की कार्रवाई का अभिनय कर सकते हैं।

11.00 विभिन्न मंत्रियों ने सदस्यों द्वारा पूछे गए करीब 250 प्रश्नों के लिखित जवाब दिए। इन प्रश्नों में शामिल थेः

- कश्मीर के आतंकवादी समूहों से बातचीत के बारे में सरकार की नीति क्या है?
- पुलिस और आम लोगों द्वारा अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ़ किए गए अत्याचारों का आँकड़ा बताएँ।
- बड़ी कंपनियों द्वारा दवाएँ अत्यधिक महँगी किए जाने के बारे में सरकार क्या कर रही है?

12.00 ढेर सारे सरकारी दस्तावेज़ चर्चा के लिए पेश किए गए। इन दस्तावेज़ों में शामिल थेः

- भारत-तिब्बत सीमा पुलिस बल में नियुक्ति के नियम
- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, खड़गपुर की वार्षिक रिपोर्ट
- राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड, विशाखापत्तनम की रिपोर्ट और लेखा-जोखा

12.02 पूर्वोत्तर क्षेत्र के विकास मंत्री ने पूर्वोत्तर परिषद् को पुनर्जीवित करने के बारे में बयान दिया।

- रेल राज्य मंत्री ने एक वक्तव्य देकर बताया कि स्वीकृत रेल बजट के अतिरिक्त रेलवे को और अनुदान की ज़रूरत है।
- मानव संसाधन विकास मंत्री ने अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्थान विधेयक, 2004 के लिए राष्ट्रीय आयोग की घोषणा की। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि इसके लिए सरकार को अध्यादेश क्यों लाना पड़ा।

12.14 कई सदस्यों ने कुछ मुद्दों को उठाया, जिनमें शामिल थेः

- तहलका मामले में कुछ नेताओं के खिलाफ़ मामले दर्ज करने में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) का प्रतिशोधात्मक रवैया।
- संविधान में एक आधिकारिक भाषा के रूप में राजस्थानी को शामिल करने की ज़रूरत।
- आंध्र प्रदेश के किसानों और कृषि मज़दूरों की बीमा नीतियों के नवीनीकरण की आवश्यकता।

2.26 सरकार द्वारा प्रस्तावित दो विधेयकों पर विचार करके उन्हें पारित किया गया। ये विधेयक थेः

- प्रतिभूति कानून (संशोधन) विधेयक
- प्रतिभूति ब्याज और ऋण वसूली कानून का प्रत्यावर्तन (संशोधन) विधेयक

4.00 आखिर में सरकार की विदेश नीति और इराक की स्थिति के संदर्भ में स्वतंत्र विदेश नीति ज़ारी रखने की ज़रूरत पर लंबी चर्चा हुई।

7.17 चर्चा समाप्त हुई। सदन अगले दिन तक के लिए स्थगित हुआ।

4.3 राजनैतिक कार्यपालिका

क्या आपको उस सरकारी आदेश की कहानी याद है जिससे हमने इस अध्याय की शुरुआत की थी? हमने पाया कि जिस व्यक्ति ने इस दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर किए थे उसने यह फ़ैसला नहीं किया था। वह केवल एक नीतिगत फ़ैसले को लागू कर रहा था जिसे किसी और ने किया था। हमने यह फ़ैसला करने में प्रधानमंत्री की भूमिका देखी थी। लेकिन, हम यह भी जानते हैं कि अगर उन्हें लोकसभा का समर्थन नहीं होता तो वे यह फ़ैसला नहीं कर सकते थे। इस अर्थ में वे सिर्फ़ संसद की मर्ज़ी को लागू कर रहे थे।

इसी तरह किसी भी सरकार के विभिन्न स्तरों पर हमें ऐसे अधिकारी मिलते हैं जो रोज़मर्रा के फ़ैसले करते हैं लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि वे जनता के द्वारा दिए गए सबसे बड़े अधिकारों का इस रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं। इन सभी अधिकारियों को सामूहिक रूप से कार्यपालिका के रूप में जाना जाता है। सरकार की नीतियों को 'कार्यरूप' देने के कारण इन्हें कार्यपालिका कहा जाता है। इस तरह जब हम 'सरकार' के बारे में बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य आम तौर पर कार्यपालिका से ही होता है।

राजनैतिक और स्थायी कार्यपालिका

किसी लोकतांत्रिक देश में कार्यपालिका के दो हिस्से होते हैं। जनता द्वारा खास अवधि तक के लिए निर्वाचित लोगों को राजनैतिक कार्यपालिका कहते हैं। ये राजनैतिक व्यक्ति होते हैं जो बड़े फ़ैसले करते हैं। दूसरी ओर जिन्हें लंबे समय के लिए नियुक्त किया जाता है उन्हें स्थायी कार्यपालिका या प्रशासनिक सेवक कहते हैं। लोक सेवाओं में काम करने वाले लोगों को सिविल सर्वेंट या नौकरशाह कहते हैं। वे सत्ताधारी पार्टी के बदलने के बावजूद अपने पदों पर बने रहते हैं। ये अधिकारी राजनैतिक कार्यपालिका के तहत काम करते हैं और रोज़मर्रा के प्रशासन में उनकी सहायता करते हैं। क्या आप कार्यालय ज्ञापन के मामले में राजनैतिक और गैर-राजनैतिक कार्यपालिका की भूमिका बता सकते हैं?

आप पूछ सकते हैं कि राजनैतिक कार्यपालक को गैर-राजनैतिक कार्यपालक से ज़्यादा अधिकार क्यों होते हैं? मंत्री किसी नौकरशाह से ज़्यादा प्रभावशाली क्यों होता है? नौकरशाह अमूमन अधिक शिक्षित होता है और उसे विषय की अधिक महारथ और जानकारी होती है। वित्त मंत्रालय में काम करने वाले सलाहकारों को अर्थशास्त्र की जानकारी वित्त मंत्री से ज़्यादा हो सकती है। कभी-कभी मंत्रियों को अपने मंत्रालय के अधीनस्थ मामलों की तकनीकी जानकारी बहुत कम हो सकती है। रक्षा, उद्योग, स्वास्थ्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, खान आदि मंत्रालयों में ऐसा होना आम बात है। फिर इन मामलों में अंतिम निर्णय करने का अधिकार मंत्रियों को क्यों हो?

इसकी वजह बहुत सीधी है। किसी भी लोकतंत्र में लोगों की इच्छा सर्वोपरि होती है। मंत्री लोगों द्वारा चुना गया होता है और इस तरह उसे जनता की ओर से उनकी इच्छाओं को लागू करने का अधिकार होता है। वह अपने फ़ैसले के नतीजे के लिए लोगों के प्रति ज़िम्मेदार होता है। इसी वजह से मंत्री ही सारे फ़ैसले करता है। मंत्री ही उस ढाँचे और उद्देश्यों को तय करता है जिसमें नीतिगत फ़ैसले किए जाते हैं। किसी मंत्री से अपने मंत्रालय के मामलों का विशेषज्ञ होने की कतई उम्मीद नहीं की जाती। सभी तकनीकी मामलों पर मंत्री विशेषज्ञों की सलाह लेता है लेकिन विशेषज्ञ अकसर अलग राय रखते हैं या फिर वे एक से अधिक विकल्प मंत्री के सामने पेश करते हैं। मंत्री अपने उद्देश्यों के मुताबिक ही निर्णय लेता है।

दरअसल, ऐसा हर बड़े संगठन में होता है। जो पूरे मामले को भली-भाँति समझते हैं, वे ही सबसे महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करते हैं, विशेषज्ञ नहीं करते। विशेषज्ञ रास्ता बता सकते हैं लेकिन व्यापक नज़रिया रखने वाला व्यक्ति ही मंज़िल के बारे में फ़ैसला करता है। लोकतंत्र में निर्वाचित मंत्री इसी व्यापक नज़रिए वाले व्यक्ति की भूमिका निभाते हैं।

प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद्

इस देश में प्रधानमंत्री सबसे महत्त्वपूर्ण राजनैतिक संस्था है। फिर भी प्रधानमंत्री के लिए कोई प्रत्यक्ष चुनाव नहीं होता। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को नियुक्त करते हैं। लेकिन राष्ट्रपति अपनी मर्जी से किसी को प्रधानमंत्री नियुक्त नहीं कर सकते। राष्ट्रपति लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी या पार्टियों के गठबंधन के नेता को ही प्रधानमंत्री नियुक्त करता है। अगर किसी एक पार्टी या गठबंधन को बहुमत हासिल नहीं होता तो राष्ट्रपति उसी व्यक्ति को प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त करता है जिसे सदन में बहुमत हासिल होने की संभावना होती है। प्रधानमंत्री का कार्यकाल तय नहीं होता। वह तब तक अपने पद पर रह सकता है जब तक वह पार्टी या गठबंधन का नेता है।

प्रधानमंत्री को नियुक्त करने के बाद राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर दूसरे मंत्रियों को नियुक्त करते है। मंत्री अमूमन उसी पार्टी या गठबंधन के होते हैं जिसे लोकसभा में बहुमत हासिल हो। प्रधानमंत्री मंत्रियों के चयन के लिए स्वतंत्र होता है, बशर्ते वे संसद के सदस्य हों। कभी-कभी ऐसे व्यक्ति को भी मंत्री बनाया जा सकता है जो संसद का सदस्य नहीं हो। लेकिन उस व्यक्ति का, मंत्री बनने के छह महीने के भीतर संसद के दोनों सदनों में से किसी एक का सदस्य चुना जाना ज़रूरी है।

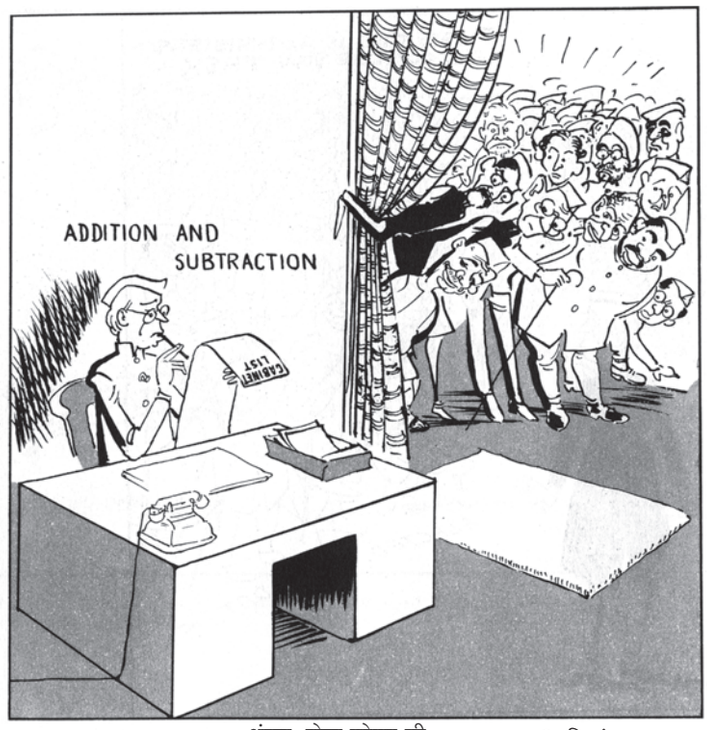

शंकर, डोन्ट स्पेयर मी

© चिल्ड्रंस बुक ट्रस्ट

मंत्रिपरिषद् उस निकाय का सरकारी नाम है जिसमें सारे मंत्री होते हैं। इसमें अमूमन विभिन्न स्तरों के 60 से 80 मंत्री होते हैं।

- **कैबिनेट मंत्री** अमूमन सत्ताधारी पार्टी या गठबंधन की पार्टियों के वरिष्ठ नेता होते हैं ये प्रमुख मंत्रालयों के प्रभारी होते हैं। कैबिनेट मंत्री मंत्रिपरिषद् के नाम पर फ़ैसले करने के लिए बैठक करते हैं। इस तरह कैबिनेट मंत्रिपरिषद् का शीर्ष समूह होता है। इसमें करीब 25 मंत्री होते हैं।
- **स्वतंत्र प्रभार वाले राज्य मंत्री** अमूमन छोटे मंत्रालयों के प्रभारी होते हैं। वे विशेष रूप से आमंत्रित किए जाने पर ही कैबिनेट की बैठकों में भाग लेते हैं।
- **राज्य मंत्री** अपने विभाग के कैबिनेट मंत्रियों से जुड़े होते हैं और उनकी सहायता करते हैं।

चूँकि सारे मंत्रियों के लिए नियमित रूप से मिलकर हर बात पर चर्चा करना व्यावहारिक

कार्टून बूझें

मंत्री बनने की होड़ नयी नहीं है। यह कार्टून 1962 के बाद नेहरू मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए उम्मीदवारों की बेचैनी दर्शाता है। राजनेता मंत्री बनने के लिए इतने बेचैन क्यों रहते हैं? आप क्या सोचते हैं?

नहीं है लिहाजा फ़ैसले कैबिनेट बैठकों में ही किए जाते हैं। इसी वजह से अधिकांश देशों में संसदीय लोकतंत्र को सरकार का कैबिनेट रूप कहा जाता है। कैबिनेट टीम के रूप में काम करती है। मंत्रियों की राय और विचार अलग हो सकते हैं लेकिन सबको कैबिनेट के फ़ैसले की जिम्मेदारी लेनी होती है। भले ही कोई फ़ैसला किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग का हो लेकिन कोई भी मंत्री सरकार के फ़ैसले की खुलेआम आलोचना नहीं कर सकता। हर मंत्रालय में सचिव होते हैं, जो नौकरशाह होते हैं। ये सचिव फ़ैसला करने के लिए मंत्री को ज़रूरी सूचना मुहैया कराते हैं। टीम के रूप में कैबिनेट की मदद कैबिनेट सचिवालय करता है। उसमें कई वरिष्ठ नौकरशाह शामिल होते हैं जो विभिन्न मंत्रालयों के बीच समन्वय स्थापित करने की कोशिश करते हैं।

कार्टून बूझें

इस कार्टून में अपनी लोकप्रियता के उफान वाले 1970 के दशक के शुरुआती दिनों में इंदिरा गांधी को कैबिनेट की बैठक करते दिखाया गया है। क्या आपको लगता है कि उनके बाद बने किसी प्रधानमंत्री को इसी आकार या रूप में दिखाते हुए कार्टून बनाया जा सकता है?

खुद करें, खुद सीखें

- केंद्र और अपनी राज्य सरकार के पाँच कैबिनेट मंत्रियों और उनके मंत्रालयों के नाम लिखें।
- अपने शहर के नगर निगम/पालिका प्रमुख या अपने जिले के जिला परिषद् के अध्यक्ष से मिलें और उनसे पूछें कि वे अपने शहर या जिले का प्रशासन किस तरह चलाते हैं।

प्रधानमंत्री के अधिकार

संविधान में प्रधानमंत्री या मंत्रियों के अधिकारों या एक-दूसरे से उनके संबंध के बारे में बहुत कुछ नहीं कहा गया है। लेकिन सरकार के प्रमुख के नाते प्रधानमंत्री के व्यापक अधिकार होते हैं। वह कैबिनेट की बैठकों की अध्यक्षता करता है। वह विभिन्न विभागों के कार्य का समन्वय

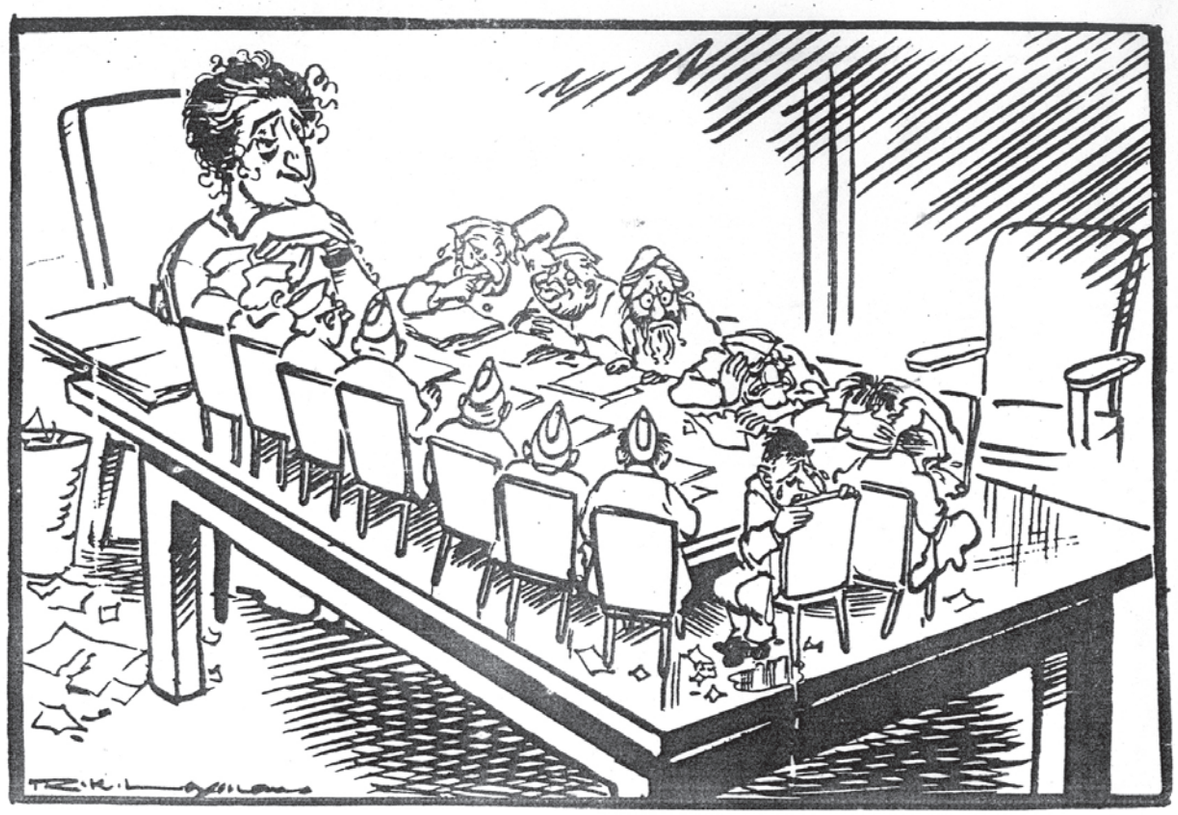

© आर.के. लक्ष्मण, द टाइम्स ऑफ इंडिया

करता है। विभागों के विवाद के मामले में उसका निर्णय अंतिम माना जाता है। वह विभिन्न विभागों की सामान्य निगरानी करता है। सारे मंत्री उसी के नेतृत्व में काम करते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रियों को काम का वितरण और पुनर्वितरण करता है। उसे किसी मंत्री को बर्खास्त करने का भी अधिकार होता है। जब प्रधानमंत्री अपना पद छोड़ता है तो पूरा मंत्रिमंडल इस्तीफ़ा दे देता है।

इस तरह अगर भारत में कैबिनेट सबसे अधिक प्रभावशाली संस्था है तो कैबिनेट के भीतर सबसे प्रभावशाली व्यक्ति प्रधानमंत्री होता है। दुनिया के सभी संसदीय लोकतंत्रों में प्रधानमंत्री के अधिकार हाल के दशकों में इतने बढ़ गए हैं कि संसदीय लोकतंत्र को कभी-कभी सरकार का प्रधानमंत्रीय रूप कहा जाने लगा है। राजनीति में राजनैतिक दलों/पार्टियों की भूमिका बढ़ने के साथ ही प्रधानमंत्री पार्टी के जरिए कैबिनेट और संसद को नियंत्रित करने लगा है। मीडिया राजनीति और चुनाव को पार्टियों के वरिष्ठ नेताओं के बीच प्रतिस्पर्धा के रूप में पेश करके इस रुझान में अपना योगदान करती है। भारत में भी हमने प्रधानमंत्री के पास ही सारे अधिकार सीमित करने की प्रवृत्ति देखी है। भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने ढेर सारे अधिकारों का इस्तेमाल किया क्योंकि उनका जनता पर बहुत अधिक प्रभाव था। इंदिरा गांधी भी कैबिनेट के अपने सहयोगियों की तुलना में बहुत ज़्यादा प्रभावशाली थीं। ज़ाहिर है कि किसी प्रधानमंत्री का अधिकार उस पद पर बैठे व्यक्ति के व्यक्तित्व पर भी निर्भर करता है।

लेकिन हाल के वर्षों में भारत में गठबंधन की राजनीति के उभार से प्रधानमंत्री के अधिकार कुछ हद तक सीमित हुए हैं। गठबंधन सरकार का प्रधानमंत्री अपनी मर्ज़ी से फ़ैसले नहीं कर सकता। उसे अपनी पार्टी के भीतर विभिन्न समूहों और गुटों के साथ गठबंधन के साझीदारों की राय भी माननी होती है। इसके अलावा उसे गठबंधन के साझीदारों और दूसरी पार्टियों के विचारों और स्थितियों को भी देखना होता है, आखिर उन्हीं के समर्थन के आधार पर सरकार टिकी होती है।

राष्ट्रपति

एक ओर जहाँ प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है, वहीं राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष होता है। हमारी राजनैतिक व्यवस्था में राष्ट्राध्यक्ष केवल नाम के अधिकारों का प्रयोग करता है। भारत का राष्ट्रपति ब्रिटेन की महारानी की तरह होता हैं, जिसका काम आलंकारिक अधिक होता है। राष्ट्रपति देश की सभी राजनैतिक संस्थाओं के काम की निगरानी करता है ताकि वे राज्य के उद्देश्यों को हासिल करने के लिए मिल-जुलकर काम करें।

राष्ट्रपति का चयन जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जाता। संसद सदस्य और राज्य की विधानसभाओं के सदस्य उसे चुनते हैं। राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी को चुनाव जीतने के लिए बहुमत हासिल करना होता है। इससे यह तय हो जाता है कि राष्ट्रपति पूरे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। लेकिन राष्ट्रपति उस तरह से प्रत्यक्ष जनादेश का दावा नहीं कर सकता जिस तरह से प्रधानमंत्री। इससे यह तय हो जाता है कि राष्ट्रपति कहने मात्र के लिए कार्यपालक की भूमिका निभाता है।

राष्ट्रपति के अधिकारों के मामले में भी यही बात लागू होती है। अगर आप संविधान को सरसरी तौर पर पढ़ें तो आप सोचेंगे कि ऐसा कुछ नहीं है जो राष्ट्रपति न कर सके। सारी सरकारी गतिविधियाँ राष्ट्रपति के नाम पर ही होती हैं। सारे कानून और सरकार के प्रमुख नीतिगत फ़ैसले उसी के नाम से जारी होते हैं। सभी प्रमुख नियुक्तियाँ राष्ट्रपति के नाम पर ही होती हैं। वह भारत के मुख्य न्यायाधीश, सर्वोच्च

प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति के लिए हमेशा पुल्लिंग का इस्तेमाल क्यों होता है?

इस सवाल से तो मेरा दिमाग ही चकरा गया। जब कोई महिला राष्ट्रपति बनेगी तो क्या उसे राष्ट्रपति कहना ठीक होगा? क्या हमारी भाषा मर्दों ने बनाई है?

लोकतंत्र के लिए कैसा प्रधानमंत्री होता है? ऐसा जो केवल अपनी मर्ज़ी से काम करता है या ऐसा जो दूसरी पार्टियों और व्यक्तियों से भी सलाह लेता है?

पत्र सूचना कार्यालय

राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी 26 मई 2014 को राष्ट्रपति भवन में श्री नरेन्द्र मोदी को प्रधान मंत्री पद की शपथ दिलाते हुए।

न्यायालय और राज्य के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, राज्यपालों, चुनाव आयुक्तों और दूसरे देशों में राजदूतों आदि को नियुक्त करता है। सभी अंतर्राष्ट्रीय संधियाँ और समझौते उसी के नाम से होते हैं। भारत के रक्षा बलों का सुप्रीम कमांडर राष्ट्रपति ही होता है।

लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि राष्ट्रपति इन अधिकारों का इस्तेमाल मंत्रिपरिषद् की सलाह पर ही करता है। राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् को अपनी सलाह पर पुनूर्वचार करने के लिए कह सकता है। लेकिन अगर वही सलाह दोबारा मिलती है तो वह उसे मानने के लिए बाध्य होता हैं। इसी प्रकार संसद द्वारा पारित कोई विधेयक राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद ही कानून बनता है। अगर राष्ट्रपति चाहे तो उसे कुछ समय के लिए रोक सकता है। वह विधेयक पर पुनूर्वचार के लिए उसे संसद में वापस भेज सकता है। लेकिन अगर संसद दोबारा विधेयक पारित करती है तो उसे उस पर हस्ताक्षर करने ही पड़ेंगे।

तो आप सोच रहे होंगे कि राष्ट्रपति करता क्या है? क्या वह अपने विवेक से भी कुछ कर सकता है? एक महत्त्वपूर्ण चीज़ है जो उसे स्वविवेक से करनी चाहिए: प्रधानमंत्री की नियुक्ति। जब कोई पार्टी या गठबंधन चुनाव में बहुमत हासिल कर लेता है तो राष्ट्रपति के पास कोई विकल्प नहीं होता। उसे लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी या गठबंधन के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त करना होता है। जब किसी पार्टी या गठबंधन को लोकसभा में बहुमत हासिल नहीं होता तो राष्ट्रपति अपने विवेक से काम लेता है। वह ऐसे नेता को नियुक्त करता है जो उसकी राय में लोकसभा में बहुमत जुटा सकता है। ऐसे मामले में राष्ट्रपति नवनियुक्त प्रधानमंत्री से एक तय समय के भीतर लोकसभा में बहुमत साबित करने के लिए कहता है।

राष्ट्रपति प्रणाली

दुनिया में हर जगह राष्ट्रपति भारत की तरह औपचारिक शासनाध्यक्ष नहीं होता। दुनिया के अनेक देशों में राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष भी होता है और सरकार का मुखिया भी। अमेरिकी राष्ट्रपति इस तरह के राष्ट्रपति का जाना-माना उदाहरण है । उसका चुनाव लोग प्रत्यक्ष वोट से करते हैं। वही अपने मंत्रियों का चुनाव और नियुक्ति करता है। कानून बनाने का काम अभी भी विधायिका (अमेरिका में उसे कांग्रेस कहा जाता है) करती है पर राष्ट्रपति किसी भी कानून को वीटो के अधिकार से रोक सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि राष्ट्रपति बनने के लिए उसे कांग्रेस के बहुमत के समर्थन की ज़रूरत नहीं होती और न ही वह उसके प्रति उत्तरदायी है। उसका चार साल का तय कार्यकाल है और अपनी पार्टी का कांग्रेस में बहुमत न होने पर भी वह आराम से अपना कार्यकाल पूरा करता है। अमेरिकी मॉडल को लातिनी अमेरिका के अनेक देशों और सोवियत संघ का हिस्सा रहे कई देशों में अपनाया गया है। चूँकि सरकार के इस स्वरूप में राष्ट्रपति की भूमिका केंद्रीय होती है इसलिए इसे राष्ट्रपति प्रणाली कहा जाता है। ब्रिटेन के मॉडल को मानने वाले भारत जैसे देशों में संसद ही सर्वोच्च होती है। इसलिए, हमारी प्रणाली को शासन की संसदीय प्रणाली कहा जाता है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इलियम्मा, अन्नाकुट्टी और मेरीमॉल राष्ट्रपति के विषय वाले हिस्से को पढ़ती हैं। वे तीनों एक-एक सवाल का जवाब जानना चाहती हैं। क्या आप उन्हें उनके सवालों के जवाब दे सकते हैं?

इलियम्माः अगर राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री किसी नीति पर असहमत हों तो क्या होगा? क्या प्रधानमंत्री का विचार हमेशा प्रभावी होगा?

अन्नाकुट्टीः मुझे यह बेतुका लगता है कि सशस्त्र बलों का सुप्रीम कमांडर राष्ट्रपति हो। वह तो एक भारी बंदूक भी नहीं उठा सकता। उसे कमांडर बनाने में क्या तुक है?

मेरीमॉलः मेरा सवाल यह है कि अगर असली अधिकार प्रधानमंत्री के पास ही हैं तो राष्ट्रपति की ज़रूरत ही क्या है?

4.4 न्यायपालिका

इस बार भी हम सरकारी आदेश की उसी कहानी पर लौटते हैं, जिससे हमने शुरुआत की थी। इस बार हम कहानी को याद नहीं करेंगे, बस यह कल्पना करेंगे कि यह कहानी कितनी अलग हो सकती थी। याद कीजिए कि इस कहानी का उस समय संतोषजनक अंत हो गया जब सर्वोच्च न्यायालय ने फ़ैसला सुनाया। इसे हर किसी ने स्वीकार कर लिया। कल्पना कीजिए कि निम्नलिखित परिस्थितियों में क्या होता:

- देश में सर्वोच्च न्यायालय जैसा कुछ नहीं होता।
- सर्वोच्च न्यायालय तो होता पर उसके पास सरकार की कार्रवाइयों को आँकने का अधिकार नहीं होता।
- उसे अधिकार होता मगर सर्वोच्च न्यायालय से कोई निष्पक्ष न्याय की उम्मीद नहीं रखता।
- भले ही वह निष्पक्ष फ़ैसला सुना देता लेकिन सरकार के आदेश के खिलाफ़ अपील करने वाले उसके फ़ैसले को नहीं मानते।

खुद करें, खुद सीखें

उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के किसी बड़े फ़ैसले से जुड़ी खबरों पर गौर करें। मूल फ़ैसला क्या था? क्या अदालत ने उसमें बदलाव कर दिया? इसका कारण क्या दिया गया?

इसी वजह से लोकतंत्रों के लिए स्वतंत्र और प्रभावशाली न्यायपालिका को ज़रूरी माना जाता है। देश के विभिन्न स्तरों पर मौजूद अदालतों को सामूहिक रूप से न्यायपालिका कहा जाता

संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायाधीशों को उनके राजनैतिक विचार और दलीय जुड़ाव के आधार पर नियुक्त करना एक आम बात है। यह काल्पनिक विज्ञापन वहाँ सन् 2005 में एक कार्टून के रूप में छपा। उस समय राष्ट्रपति बुश अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय में मनोनयन के लिए विभिन्न उम्मीदवारों के नाम पर विचार कर रहे थे। यह कार्टून न्यायालय की स्वतंत्रता के बारे में क्या कहता है? हमारे देश में इस तरह के कार्टून क्यों नहीं छपते? क्या यह हमारी न्यायपालिका की स्वतंत्रता को दर्शाता है?

कार्टून बूझें

© सी.एम.ई. कोहेन, नेशनल, केगल कार्टून्स इंक

इस काल्पनिक विज्ञापन में लिखा है : आवश्यकता है सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश की। कोई पूर्व अनुभव ज़रूरी नहीं। कुछ टाइपिंग आना आवश्यक है। वह बिना हिचकिचाए ऐसी बातें कह सकेः ''मैं अभी तक जितने लोगों से मिला हूँ उनमें राष्ट्रपति (जार्ज बुश) सबसे अधिक प्रतिभाशाली हैं।'' कोई भी बाहरी व्यक्ति आवेदन न करे।

है। भारतीय न्यायपालिका में पूरे देश के लिए सर्वोच्च न्यायालय, राज्यों में उच्च न्यायालय, ज़िला न्यायालय और स्थानीय स्तर के न्यायालय होते हैं। भारत में न्यायपालिका एकीकृत है। इसका मतलब यह कि सर्वोच्च न्यायालय देश में न्यायिक प्रशासन को नियंत्रित करता है। देश की सभी अदालतों को उसका फ़ैसला मानना होता है। वह इनमें से किसी भी विवाद की सुनवाई कर सकता है:

- देश के नागरिकों के बीच;
- नागरिकों और सरकार के बीच;
- दो या उससे अधिक राज्य सरकारों के बीच; और
- केंद्र और राज्य सरकार के बीच।

यह फ़ौजदारी और दीवानी मामले में अपील के लिए सर्वोच्च संस्था है। यह उच्च न्यायालयों के फ़ैसलों के खिलाफ़ सुनवाई कर सकता है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता का मतलब है कि वह विधायिका या कार्यपालिका के नियंत्रण में नहीं है। न्यायाधीश सरकार के निर्देश या सत्ताधारी पार्टी की मर्ज़ी के मुताबिक काम नहीं करते। इसी वजह से सभी आधुनिक लोकतंत्रों में अदालतें, विधायिका और कार्यपालिका के अधीन नहीं होतीं। भारत ने इस लक्ष्य को हासिल कर लिया है। राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को प्रधानमंत्री की सलाह पर और सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के मशविरे से नियुक्त करता है। व्यावहारिक तौर पर अब इस व्यवस्था में सर्वोच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीश, सर्वोच्च

न्यायालय और उच्च न्यायालयों के नए न्यायाधीशों को चुनते हैं। इसमें राजनैतिक कार्यपालिका की दखल की गुंजाइश बेहद कम है। सर्वोच्च न्यायालय के सबसे वरिष्ठ न्यायाधीश को ही अमूमन मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया जाता है। एक बार किसी व्यक्ति को सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त करने के बाद उसे उसके पद से हटाना लगभग असंभव हो जाता है। उसे हटाना भारत के राष्ट्रपति को हटाने जितना ही मुश्किल है। किसी भी न्यायाधीश को संसद के दोनों सदनों में अलग-अलग दो-तिहाई बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पारित करके ही हटाया जा सकता है। भारतीय लोकतंत्र में ऐसा कभी नहीं हुआ।

भारत की न्यायपालिका दुनिया की सबसे अधिक प्रभावशाली न्यायपालिकाओं में से एक है। सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को देश के संविधान की व्याख्या का अधिकार है। अगर उन्हें लगता है कि विधायिका का कोई कानून या कार्यपालिका की कोई कार्रवाई संविधान के खिलाफ़ है तो वे केंद्र और राज्य स्तर पर ऐसे कानून या कार्रवाई को अमान्य घोषित कर सकते हैं। इस तरह जब उनके सामने किसी कानून या कार्यपालिका की कार्रवाई को चुनौती मिलती है तो वे उसकी संवैधानिक वैधता तय करते हैं। इसे न्यायिक समीक्षा के रूप में जाना जाता है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी फ़ैसला दिया है कि संसद, संविधान के मूलभूत सिद्धांतों को बदल नहीं सकती।

भारतीय न्यायपालिका के अधिकार और स्वतंत्रता उसे मौलिक अधिकारों के रक्षक के रूप में काम करने की क्षमता प्रदान करते हैं। हम नागरिकों के अधिकार वाले अध्याय में देखेंगे कि नागरिकों को संविधान से मिले अपने अधिकारों के उल्लंघन के मामले में इंसाफ़ पाने के लिए अदालतों में जाने का अधिकार है। हाल के वर्षों में अदालतों ने सार्वजनिक हित और मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए विभिन्न फ़ैसले और निर्देश दिए हैं। सरकार की कार्रवाइयों से जनहित को ठेस पहुँचने की स्थिति में कोई भी अदालत जा सकता है। इसे जनहित याचिका कहते हैं। अदालतें सरकार को निर्णय करने की शक्ति के दुरुपयोग से रोकने के लिए हस्तक्षेप करती हैं। वे सरकारी अधिकारियों को भ्रष्ट आचरण से रोकती हैं। इसी वजह से लोगों के बीच न्यायपालिका को काफ़ी विश्वास हासिल है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

निम्नलिखित संदर्भों में एक कारण देकर समझाएँ कि भारतीय न्यायपालिका किस तरह स्वतंत्र है:

न्यायाधीशों की नियुक्तिः

न्यायाधीशों को पद से हटानाः

न्यायपालिका के अधिकारः

भारत के मुख्य न्यायमूर्ति श्री जस्टिस जे.एस. खेहर 25 जुलाई 2017 को नई दिल्ली में संसद के केंद्रीय सभागार में श्री राम नाथ कोविन्द को भारत के राष्ट्रपति पद की शपथ दिलाते हुए।

गठबंधन सरकार: विधायिका में किसी एक पार्टी को बहुमत हासिल न होने की सूरत में दो या उससे अधिक राजनैतिक पार्टियों के गठबंधन से बनी सरकार।

कार्यपालिका: व्यक्तियों का ऐसा निकाय जिसके पास देश के संविधान और कानून के आधार पर प्रमुख नीति बनाने, फ़ैसले करने और उन्हें लागू करने का अधिकार होता है।

सरकार: संस्थाओं का ऐसा समूह जिसके पास देश में व्यवस्थित जन-जीवन सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाने, लागू करने और उसकी व्याख्या करने का अधिकार होता है। व्यापक अर्थ में सरकार किसी देश के लोगों और संसाधनों को नियंत्रित और उनकी निगरानी करती है।

न्यायपालिका: एक राजनैतिक संस्था जिसके पास न्याय करने और कानूनी विवादों के निबटारे का अधिकार होता है। देश की सभी अदालतों को एक साथ न्यायपालिका के नाम से पुकारा जाता है।

विधायिका: जनप्रतिनिधियों की सभा जिसके पास देश का कानून बनाने का अधिकार होता है। कानून बनाने के अलावा विधायिका को कर बढ़ाने, बजट बनाने और दूसरे वित्त विधेयकों को बनाने का विशेष अधिकार होता है।

कार्यालय ज्ञापन: सक्षम अधिकारी द्वारा जारी पत्र जिसमें सरकार के फ़ैसले या नीति के बारे में बताया जाता है।

राजनैतिक संस्था: देश की सरकार और राजनैतिक जीवन के आचार को नियमित करने वाली प्रक्रियाओं का समूह।

आरक्षण: भेदभाव के शिकार, वंचित और पिछड़े लोगों और समुदायों के लिए सरकारी नौकरियों तथा शैक्षिक संस्थाओं में पद एवं सीटें 'आरक्षित' करने की नीति।

राज्य: निश्चित क्षेत्र में फैली राजनैतिक इकाई, जिसके पास संगठित सरकार हो और घरेलू तथा विदेश नीतियों को बनाने का अधिकार हो। सरकारें बदल सकती हैं पर राज्य बना रहता है। बोलचाल की भाषा में देश, राष्ट्र और राज्य को समानार्थी के रूप में प्रयोग किया जाता है। 'राज्य' शब्द का एक अन्य प्रयोग किसी देश के अंदर की प्रशासनिक इकाईयों या प्रांतों के लिए भी होता है। इस अर्थ में राजस्थान, झारखंड, त्रिपुरा आदि भी राज्य कहे जाते हैं।

प्रश्नावली

1. अगर आपको भारत का राष्ट्रपति चुना जाए तो आप निम्नलिखित में से कौन-सा फ़ैसला खुद कर सकते हैं?

   क. अपनी पसंद के व्यक्ति को प्रधानमंत्री चुन सकते हैं।
   ख. लोकसभा में बहुमत वाले प्रधानमंत्री को उसके पद से हटा सकते हैं।
   ग. दोनों सदनों द्वारा पारित विधेयक पर पुनर्विचार के लिए कह सकते हैं।
   घ. मंत्रिपरिषद् में अपनी पसंद के नेताओं का चयन कर सकते हैं।

2. निम्नलिखित में कौन राजनैतिक कार्यपालिका का हिस्सा होता है?

   क. जिलाधीश
   ख. गृह मंत्रालय का सचिव
   ग. गृह मंत्री
   घ. पुलिस महानिदेशक

3. न्यायपालिका के बारे में निम्नलिखित में से कौन-सा बयान गलत है?

क. संसद द्वारा पारित प्रत्येक कानून को सर्वोच्च न्यायालय की मंजूरी की ज़रूरत होती है।
ख. अगर कोई कानून संविधान की भावना के खिलाफ़ है तो न्यायापालिका उसे अमान्य घोषित कर सकती है।
ग. न्यायपालिका कार्यपालिका से स्वतंत्र होती है।
घ. अगर किसी नागरिक के अधिकारों का हनन होता है तो वह अदालत में जा सकता है।

4. निम्नलिखित राजनैतिक संस्थाओं में से कौन-सी संस्था देश के मौजूदा कानून में संशोधन कर सकती है?

क. सर्वोच्च न्यायालय
ख. राष्ट्रपति
ग. प्रधानमंत्री
घ. संसद

5. उस मंत्रालय की पहचान करें जिसने निम्नलिखित समाचार ज़ारी किया होगा:

क. देश से जूट का निर्यात बढ़ाने के लिए एक नई नीति बनाई जा रही है।	1. रक्षा मंत्रालय
ख. ग्रामीण इलाकों में टेलीफोन सेवाएँ सुलभ करायी जाएँगी।	2. कृषि, खाद्यान्न और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
ग. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत बिकने वाले चावल और गेहूँ की कीमतें कम की जाएँगी।	3. स्वास्थ्य मंत्रालय
घ. पल्स पोलियो अभियान शुरू किया जाएगा।	4. वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय
ङ ऊँची पहाड़ियों पर तैनात सैनिकों के भत्ते बढ़ाए जाएँगे।	5. संचार और सूचना-प्रौद्योगिकी मंत्रालय

6. देश की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका में से उस राजनैतिक संस्था का नाम बताइए जो निम्नलिखित मामलों में अधिकारों का इस्तेमाल करती है।

क. सड़क, ङ्गसचाई जैसे बुनियादी ढाँचों के विकास और नागरिकों की विभिन्न कल्याणकारी गतिविधियों पर कितना पैसा खर्च किया जाएगा।
ख. स्टॉक एक्सचेंज को नियमित करने संबंधी कानून बनाने की कमेटी के सुझाव पर विचार-विमर्श करती है।
ग. दो राज्य सरकारों के बीच कानूनी विवाद पर निर्णय लेती है।
घ. भूकंप पीड़ितों की राहत के प्रयासों के बारे में सूचना माँगती है।

प्रश्नावली

प्रश्नावली

7. भारत का प्रधानमंत्री सीधे जनता द्वारा क्यों नहीं चुना जाता? निम्नलिखित चार जवाबों में सबसे सही को चुनकर अपनी पसंद के पक्ष में कारण दीजिए:

   क. संसदीय लोकतंत्र में लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी का नेता ही प्रधानमंत्री बन सकता है।
   ख. लोकसभा, प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद का कार्यकाल पूरा होने से पहले ही उन्हें हटा सकती है।
   ग. चूँकि प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति नियुक्त करता है लिहाजा उसे जनता द्वारा चुने जाने की ज़रूरत ही नहीं है।
   घ. प्रधानमंत्री के सीधे चुनाव में बहुत ज़्यादा खर्च आएगा।

8. तीन दोस्त एक ऐसी फिल्म देखने गए जिसमें हीरो एक दिन के लिए मुख्यमंत्री बनता है और राज्य में बहुत से बदलाव लाता है। इमरान ने कहा कि देश को इसी चीज़ की ज़रूरत है। रिज़वान ने कहा कि इस तरह का, बिना संस्थाओं वाला एक व्यक्ति का राज खतरनाक है। शंकर ने कहा कि यह तो एक कल्पना है। कोई भी मंत्री एक दिन में कुछ भी नहीं कर सकता। ऐसी फिल्मों के बारे में आपकी क्या राय है?

9. एक शिक्षिका छात्रों की संसद के आयोजन की तैयारी कर रही थी। उसने दो छात्राओं से अलग-अलग पार्टियों के नेताओं की भूमिका करने को कहा। उसने उन्हें विकल्प भी दिया। यदि वे चाहें तो राज्य सभा में बहुमत प्राप्त दल की नेता हो सकतीं थी और अगर चाहें तो लोकसभा के बहुमत प्राप्त दल की। अगर आपको यह विकल्प दिया गया तो आप क्या चुनेंगे और क्यों?

10. आरक्षण पर आदेश का उदाहरण पढ़कर तीन विद्यार्थियों की न्यायपालिका की भूमिका पर अलग-अलग प्रतिक्रिया थी। इनमें से कौन-सी प्रतिक्रिया, न्यायपालिका की भूमिका को सही तरह से समझती है?

    क. श्रीनिवास का तर्क है कि चूँकि सर्वोच्च न्यायालय सरकार के साथ सहमत हो गई है लिहाजा वह स्वतंत्र नही है।
    ख. अंजैया का कहना है कि न्यायपालिका स्वतंत्र है क्योंकि वह सरकार के आदेश के खिलाफ़ फ़ैसला सुना सकती थी। सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को उसमें संशोधन का निर्देश दिया।
    ग. विजया का मानना है कि न्यायपालिका न तो स्वतंत्र है न ही किसी के अनुसार चलने वाली है बल्कि वह विरोधी समूहों के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाती है। न्यायालय ने इस आदेश के समर्थकों और विरोधियों के बीच बढ़िया संतुलन बनाया।
    आपकी राय में कौन-सा विचार सबसे सही है?

इस अध्याय में हमने देश की चार विभिन्न संस्थाओं के बारे में चर्चा की। आप कम-से-कम एक हफ्ते के समाचारों को इकट्ठा करके उन्हें चार समूहों में वर्गीकृत कीजिए:

- विधायिका की कार्यशैली
- राजनैतिक कार्यपालिका की कार्यशैली
- नौकरशाही की कार्यशैली
- न्यायपालिका की कार्यशैली

0973CH05

अध्याय 5

लोकतांत्रिक अधिकार

भूमिका

पिछले दो अध्यायों में हमने लोकतांत्रिक सरकार के दो बुनियादी तत्वों की चर्चा की है। अध्याय 3 में हमने देखा कि किस तरह लोकतांत्रिक सरकार का निर्धारित अवधि में लोगों द्वारा स्वतंत्र और निष्पक्ष ढंग से चुना जाना ज़रूरी है। अध्याय 4 में हमने जाना कि लोकतंत्र को कुछ ऐसी संस्थाओं के ऊपर निर्भर होना चाहिए जो निर्धारित कायदे-कानून के मुताबिक काम करती हों। ये तत्व ज़रूरी हैं पर लोकतंत्र के लिए इन्हीं दो का होना पर्याप्त नहीं है। चुनाव और संस्थाओं के साथ-साथ तीसरा तत्व है–अधिकारों का उपयोग। इसकी मौजूदगी भी सरकार के लोकतांत्रिक चरित्र के लिए ज़रूरी है। बहुत सही ढंग से चुने हुए और स्थापित संस्थाओं के माध्यम से काम करने वाले शासकों को भी यह ज़रूर जानना चाहिए कि उन्हें कुछ लक्ष्मण रेखाओं का उल्लंघन नहीं करना है। नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकार ही इन लक्ष्मण रेखाओं का निर्माण करते हैं।

इस पुस्तक के आखिरी अध्याय में हम इसी पर चर्चा करेंगे। अधिकारों के बिना जीवन कैसा होगा इसकी कल्पना करने के लिए हम वास्तविक जीवन की कुछ घटनाओं से बात शुरू करते हैं। इससे हम इस चर्चा पर पहुँचेंगे कि अधिकारों का क्या मतलब है और हमें इनकी ज़रूरत क्यों है। पिछले अध्यायों की तरह पहले सामान्य बातों और फ़िर भारत पर केंद्रित चर्चा होगी। हम एक-एक करके भारतीय संविधान में दर्ज़ मौलिक अधिकारों पर चर्चा करेंगे। फ़िर हम इस बात पर गौर करेंगे कि सामान्य आदमी इन अधिकारों का प्रयोग कैसे कर सकता है, इनकी रक्षा कौन करेगा और इनको लागू कौन करेगा? आखिर में हम देखेंगे कि लोकतंत्र का विस्तार करने में इन अधिकारों की कैसी भूमिका हो सकती है और हाल के वर्षों में हमारे मुल्क में इन्होंने क्या भूमिका निभाई है।

5.1 अधिकारों के बिना जीवन

इस किताब में हमने अधिकारों की चर्चा बार-बार की है। अगर आप याद करने की कोशिश करें तो हमने इससे पहले के सभी चार अध्यायों में अधिकारों की बात की है। क्या आप नीचे दिए गए खाली स्थानों को पुराने अध्यायों के अधिकारों वाली चर्चा के आधार पर भर सकते हैं?

अध्याय 1: लोकतंत्र की परिभाषा में...

अध्याय 2: हमारे संविधान निर्माताओं का मानना था कि मौलिक अधिकार हमारे संविधान की आत्मा जैसे हैं क्योंकि...

अध्याय 3: भारत के प्रत्येक वयस्क व्यक्ति को...और...का अधिकार प्राप्त है।

अध्याय 4: अगर कोई कानून संविधान के खिलाफ़ है तो हर नागरिक को उसके खिलाफ़... जाने का अधिकार है।

आइए तीन उदाहरणों से बात शुरू करें कि अधिकारों के बिना जीवन कैसा होता है।

प्रिय श्री टोनी ब्लेयर,

सबसे पहले तो यही कि आप कैसे हैं? मैंने दो साल पहले आपको पत्र लिखा था, आपने उसका जवाब क्यों नहीं दिया? मैं बहुत दिनों तक आपके जवाब का इंतजार करता रहा पर आपका जवाब आया ही नहीं। क्या आप मेहरबानी करके मेरे सवाल का जवाब देंगे? मेरे पिता जेल में क्यों बंद हैं? वे डूरहराज के गुआंतानामो बे में क्यों रखे गए हैं? मुझे अपने पिता की कमी बहुत खलती है। मैंने अपने पिता को तीन वर्षों से नहीं देखा है। मैं जानता हूँ कि मेरे पिताजी ने कुछ भी गलत नहीं किया है क्योंकि वे बहुत अच्छे आदमी हैं। लोग भी मेरे पिताजी के बारे में बहुत आदर के साथ बातें करते हैं। आपके बच्चे आपके साथ क्रिसमस मनाते हैं पर मैंने, मेरे भाई और बहनों ने पिछले तीन वर्षों से पिताजी के बिना ही ईद मनायी है। इसके बारे में आप क्या सोचते हैं? मुझे उम्मीद है कि इस बार आप मेरे पत्र का जवाब देंगे। धन्यवाद।

अनस जमिल अल-बन्ना, उम्र नौ साल.

7/12/2005

गुआंतानामो बे का जेल

अमेरिकी फ़ौज ने दुनिया भर के विभिन्न स्थानों से 600 लोगों को चुपचाप पकड़ लिया। इन लोगों को गुआंतानामो बे स्थित एक जेल में डाल दिया। क्यूबा के निकट स्थित इस टापू पर अमेरिकी नौसेना का कब्ज़ा है। अमेरिकी सरकार कहती है कि ये लोग अमेरिका के दुश्मन हैं और न्यूयॉर्क में हुए 11 सितंबर 2001 के हमलों से इनका संबंध है। अनस के पिता जमिल अल-बन्ना उन 600 लोगों में एक हैं जिन्हें केवल संदेह के आधार पर पकड़ कर जेल में डाल दिया गया। अधिकांश मामलों में, गिरफ़्तार लोगों के देश की सरकार को उनकी गिरफ़्तारी और जेल में डालने की सूचना भी नहीं दी गयी। अन्य कैदियों की तरह जमिल के परिवार वालों को भी अखबारों के माध्यम से ही खबर मिली कि उसे भी जेल में रखा गया है। इन कैदियों के परिवारवालों, मीडिया के लोगों और यहाँ तक कि संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधियों को भी उनसे मिलने की इजाज़त नहीं दी जाती। अमेरिकी सेना ने उन्हें गिरफ़्तार किया, उनसे पूछताछ की और उसी ने फ़ैसला किया कि किसे जेल में डालना है किसे नहीं। न तो किसी भी जज के

सामने मुकदमा चला और ना ही ये कैदी अपने देश की अदालतों का दरवाजा खटखटा सके।

एक अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन एमनेस्टी इंटरनेशनल ने गुआंतानामो बे के कैदियों की स्थिति के बारे में सूचनाएँ इकट्ठी कीं और बताया कि उनके साथ ज़्यादती की जा रही हैं। उनके साथ अमेरिकी कानूनों के अनुसार भी व्यवहार नहीं किया जा रहा है। अनेक कैदियों ने भूख हड़ताल करके इन स्थितियों के खिलाफ़ विरोध करना चाहा पर उनको ज़बर्दस्ती खिलाया गया या नाक के रास्ते उनके पेट में भोजन पहुँचाया गया। जिन कैदियों को आधिकारिक रूप से निर्दोष करार दिया गया था उनको भी नहीं छोड़ा गया। संयुक्त राष्ट्र द्वारा करायी गयी एक स्वतंत्र जाँच से भी इन बातों की पुष्टि हुई। संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव ने कहा कि गुआंतानामो बे जेल को बंद कर देना चाहिए। अमेरिकी सरकार ने इन अपीलों को मानने से इंकार कर दिया।

सऊदी अरब में नागरिक अधिकार

गुआंतानामो बे का उदाहरण एक अपवाद जैसा है क्योंकि इसमें एक देश की सरकार दूसरे देशों के नागरिकों के अधिकारों का उल्लंघन कर रही है। आइए, अब सऊदी अरब का उदाहरण देखें और वहाँ की सरकार अपने नागरिकों को कितनी आज़ादी देती है, इस पर गौर करें। जरा इन तथ्यों पर विचार करें:

- देश में एक वंश का शासन चलता है और राजा या शाह को चुनने या बदलने में लोगों की कोई भूमिका नहीं होती।
- शाह ही विधायिका और कार्यपालिका के लोगों का चुनाव करते हैं। जजों की नियुक्ति भी शाह करते हैं और वे उनके फ़ैसलों को पलट भी सकते हैं।
- लोग कोई राजनैतिक दल या संगठन नहीं बना सकते। मीडिया शाह की मर्जी के खिलाफ़ कोई भी खबर नहीं दे सकती।
- कोई धार्मिक आज़ादी नहीं है। सिर्फ़ मुसलमान ही यहाँ के नागरिक हो सकते हैं। यहाँ रहने वाले दूसरे धर्मों के लोग घर के अंदर ही अपने धर्म के अनुसार पूजा-पाठ कर सकते हैं। उनके सार्वजनिक/धार्मिक अनुष्ठानों पर रोक है।
- औरतों को वैधानिक रूप से मर्दों से कमतर का दर्ज़ा मिला हुआ है और उन पर कई तरह की सार्वजनिक पाबंदियाँ लगी हैं। मर्दों को जल्दी ही स्थानीय निकाय के चुनावों के लिए मताधिकार मिलने वाला है जबकि औरतों को यह अधिकार नहीं मिलेगा।

ये बातें सिर्फ़ सऊदी अरब पर ही लागू नहीं होतीं। दुनिया में ऐसे अनेक देश हैं जहाँ ऐसी स्थितियाँ मौजूद हैं।

कोसोवो में जातीय नरसंहार

आप यह सोच सकते हैं कि ये चीज़ें सिर्फ़ राजशाही में ही चल सकती हैं और चुनी हुई सरकार वाली शासन व्यवस्था में ऐसा नहीं होगा। पर कोसोवो की इस कथा पर गौर कीजिए। कोसोवो पुराने यूगोस्लाविया का एक प्रांत था जो अब टूट कर अलग हो गया है। इस प्रदेश में अल्बानियाई लोगों की संख्या बहुत ज्यादा थी पर पूरे देश के लिहाज से सर्ब लोग बहुसंख्यक थे। उग्र सर्ब राष्ट्रवाद के भक्त मिलोशेविक ने यहाँ के चुनावों में जीत हासिल की। उनकी सरकार ने कोसोवो के अल्बानियाई लोगों के प्रति बहुत ही कठोर व्यवहार किया। उनकी इच्छा थी कि देश पर सर्ब लोगों का ही पूरा नियंत्रण हो। अनेक सर्ब नेताओं का मानना था कि अल्बानियाई लोगों जैसे अल्पसंख्यक या तो देश छोड़कर चले जाएँ या सर्बों का प्रभुत्व स्वीकार कर लें।

अगर आप सर्ब होते तो कोसोवो में मिलोशेविक ने जो कुछ किया, क्या उसका समर्थन करते? सर्ब लोगों का प्रभुत्व कायम करने की उनकी योजना क्या सर्ब लोगों के वास्तविक हित में थी?

कोसोवो के एक शहर में अप्रैल 1999 में एक अल्बानियाई परिवार के साथ कुछ ऐसी घटना हुई:

74 वर्षीया बतीशा होक्सा अपनी रसोई में अपने 77 वर्षीय पति इजेत के साथ बैठी आग ताप रही थी। उन्होंने विस्फ़ोटों की आवाज़ सुनी पर उनको यह एहसास नहीं हुआ कि सर्बिया की फ़ौज शहर में घुस आई है। तभी उनका दरवाजा खोलकर पांच-छह सैनिक दनदनाते हुए अंदर आए और पूछा, ''बच्चे कहाँ हैं?''

बतीशा याद करती है, ''उन्होंने इजेत की छाती में तीन गोलियाँ दाग दीं।'' उसके सामने ही उसके पति की मौत हो गयी और सैनिकों ने उसकी अंगुली से शादी की अंगूठी उतार ली और उसे भाग जाने को कहा, ''मैं अभी दरवाज़े से बाहर भी नहीं निकली थी कि उन्होंने घर में आग लगा दी।'' वह बरसात में बेघर होकर सड़क पर खड़ी थी–उसके पास न मकान था, न पति और न शरीर पर पहने कपड़ों के अलावा कोई और चीज़।

समाचारों में आई यह कथा उन हज़ारों अल्बानियाई लोगों के साथ हुए बर्ताव में से एक की सच्चाई बताती है। और याद रखिए कि यह नरसंहार उस देश की अपनी ही सेना, एक ऐसे नेता के निर्देश पर कर रही थी जो लोकतांत्रिक चुनाव में जीतकर सत्ता में आया था। जातीय पूर्वाग्रहों के चलते हाल के वर्षों में जो सबसे बड़े नरसंहार हुए हैं उनमें यह संभवत: सबसे भयंकर था। आखिरकार कई और देशों ने जब दखल दिया तब जाकर यह क्रम थमा। मिलोशेविक की सत्ता गयी और बाद में अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में उन पर मानवता के खिलाफ़ अपराध का मुकदमा चला।

खुद करें, खुद सीखें

- **कोसोवो की बतीसा की तरफ़ से 1984 के सिख विरोधी दंगों या 2002 के गुजरात दंगों में वैसी ही स्थिति झेलने वाली किसी महिला के नाम एक पत्र लिखिए।**
- **सऊदी अरब की महिलाओं की तरफ से संयुक्त राष्ट्र महासचिव के नाम एक ज्ञापन लिखिए।**

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

अधिकारविहीन जीवन के इन तीनों मामलों से मिलते-जुलते उदाहरण भारत से भी दें। ये उदाहरण निम्नलिखित में से हो सकते हैं:

- पुलिस हिरासत में हिंसा की अखबारी खबरें
- भूख हड़ताल पर जाने वाले कैदियों को ज़बरदस्ती खाना खिलाने की अखबारी रपट
- हमारे देश के किसी हिस्से में जातीय हिंसा
- महिलाओं के साथ गैर-बराबरी वाले व्यवहार की खबरें

फ़िर इन मामलों और भारतीय मामलों के बीच **समानता** और **अंतरों** की सूची बनाएँ। यह ज़रूरी नहीं है कि प्रत्येक मामले के लिए आप ठीक उसी तरह का भारतीय उदाहरण दें।

5.2 लोकतंत्र में अधिकार

हमने पहले जिन उदाहरणों का जिक्र किया है उन सब पर विचार कीजिए। हर उदाहरण में जिसे कष्ट हुआ उसके बारे में सोचिए। गुआंतानामो बे के कैदियों, सऊदी अरब की औरतों और कोसोवो के अल्बानियाई लोगों और भारत में 1984 तथा 2002 के दंगों का शिकार हुए लोगों के बारे में सोचिए। अगर आप इनकी जगह होते तो आपके मन में क्या विचार आते? अगर आपके हाथ में महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करने का अधिकार हो तो आप उपर्युक्त घटनाओं को न होने देने के लिए क्या करेंगे?

शायद आप एक ऐसी व्यवस्था बनाना चाहेंगे जिसमें लोगों की सुरक्षा, उनके सम्मान का ख्याल और समान अवसर ज़रूर हों। जैसे, आप यह चाह सकते हैं कि बिना उचित कारण और सूचना के किसी को गिरफ़्तार न किया जाए और अगर किसी को गिरफ़्तार किया जाता है तो उसे अपना पक्ष रखने और अपने आपको निर्दोष साबित करने का पर्याप्त अवसर मिले। आप इस बात पर सहमत हो सकते हैं कि ऐसा भरोसा सभी चीज़ों पर लागू नहीं हो सकता। हम हर किसी से जिन चीज़ों की माँग करते हैं या जिन बातों की उम्मीद करते हैं उसमें हमें तार्किक नज़रिया अपनाना चाहिए, क्योंकि उसे ये चीज़ें सबको उपलब्ध करानी हैं। पर आप इस बात पर ज़ोर दे सकते हैं कि आश्वासन सिर्फ़ कागज़ों में ही न रहे, उन पर अमल भी हो और जो लोग ऐसा न करें उनको सज़ा भी मिले। दूसरे शब्दों में कहें तो आप एक ऐसी व्यवस्था बनाना चाहेंगे जहाँ हर किसी को कुछ न्यूनतम बातों की गारंटी होगी–अमीर या गरीब, ताकतवर या कमज़ोर, बहुसंख्यक या अल्पसंख्यक, हर किसी को इन न्यूनतम चीज़ों की गारंटी होगी। अधिकारों की सोच के पीछे यही भावना होती है।

अधिकार क्या है ?

अधिकार किसी व्यक्ति का अपने लोगों, अपने समाज और अपनी सरकार से दावा है। हम सभी खुशी से, बिना डर-भय के और अपमानजनक व्यवहार से बचकर जीना चाहते हैं। इसके लिए हम दूसरों से ऐसे व्यवहार की अपेक्षा करते हैं जिससे हमें कोई नुकसान न हो, कोई कष्ट न हो। इसी प्रकार हमारे व्यवहार से भी किसी को नुकसान नहीं होना चाहिए, कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। इसलिए, अधिकार तभी संभव है जब आपका अपने बारे में किया हुआ दावा दूसरे पर भी समान रूप से लागू हो। आप ऐसे अधिकार नहीं रख सकते जो दूसरों को कष्ट दें या नुकसान पहुँचाएँ। आप इस तरह क्रिकेट खेलने के अधिकार का दावा नहीं कर सकते कि पड़ोसी की खिड़की के शीशे टूट जाएँ और आपके अधिकार को कुछ न हो। यूगोस्लाविया के सर्ब लोग पूरे देश पर सिर्फ़ अपना दावा नहीं कर सकते थे। सो, हम जो दावे करते हैं वे तार्किक भी होने चाहिए। वे ऐसे होने चाहिए कि हर किसी को समान मात्रा में उन्हें दे पाना संभव हो। इस प्रकार हमें कोई भी अधिकार इस बाध्यता के साथ मिलता है कि हम दूसरों के अधिकारों का आदर करें।

हम कुछ दावे कर दें सिर्फ़ इतने भर से वह हमारा अधिकार नहीं हो जाता। इसे उस पूरे समाज से भी स्वीकृति मिलनी चाहिए जिसमें हम रहते हैं। हर समाज अपने आचरण को व्यवस्थित करने के लिए कुछ कायदे-कानून बनाता है। ये कायदे-कानून हमें बताते हैं कि क्या सही है, क्या गलत है। समाज जिस चीज़ को सही मानता है, सबके अधिकार लायक मानता है वही हमारे भी अधिकार होते हैं। इसीलिए समय और स्थान के हिसाब से अधिकारों की अवधारणा भी बदलती रहती है। दो सौ साल पहले अगर कोई कहता कि औरतों को भी वोट देने का अधिकार होना चाहिए तो उसे अजीब माना जाता। आज सऊदी अरब में उनको वोट का अधिकार न होना ही अजीब लगता है।

जब समाज में मान्य कायदों को लिखत-पढ़त में ला दिया जाता है तो उनको असली ताकत मिल जाती है। इसके बिना वे प्राकृतिक या नैतिक अधिकार ही रह जाते हैं। गुआंतानामो बे के कैदियों को अपने दमन का विरोध करने का, उसे गलत बताने का सिर्फ़ नैतिक अधिकार है। पर वे इसके भरोसे किसी ऐसे व्यक्ति या संस्था के पास नहीं जा सकते जो इन्हें लागू करा दे। जब कानून कुछ दावों को मान्यता देता है तो

चुनी हुई सरकारों द्वारा अपने नागरिक के अधिकार की रक्षा न करने या इन अधिकारों पर हमला करने के उदाहरण कौन से हैं? सरकार ऐसा क्यों करती है?

उनको लागू किया जा सकता है। फ़िर हम उन्हें लागू करने की माँग कर सकते हैं।

अगर अन्य नागरिक या सरकार इन अधिकारों का आदर नहीं करते, इनका उल्लंघन करते हैं तो हम इसे अपने अधिकारों का हनन कहते हैं। ऐसी स्थिति में कोई भी नागरिक अदालत का दरवाजा खटखटा सकता है, अपने अधिकारों की रक्षा की माँग कर सकता है। इसलिए हम अगर किसी दावे को अधिकार कहते हैं तो उसमें ये तीन बुनियादी चीज़ें होनी चाहिए। **अधिकार लोगों के तार्किक दावे हैं, इन्हें समाज से स्वीकृति और अदालतों द्वारा मान्यता मिली होती है।**

लोकतंत्र में अधिकारों की क्या ज़रूरत है ?

लोकतंत्र की स्थापना के लिए अधिकारों का होना ज़रूरी है। लोकतंत्र में हर नागरिक को वोट देने और चुनाव लड़कर प्रतिनिधि चुने जाने का अधिकार है। लोकतांत्रिक चुनाव हों इसके लिए लोगों को अपने विचारों को व्यक्त करने की, राजनैतिक पार्टी बनाने और राजनैतिक गतिविधियों की आज़ादी का होना ज़रूरी है।

लोकतंत्र में अधिकारों की एक खास भूमिका भी है। अधिकार बहुसंख्यकों के दमन से अल्पसंख्यकों की रक्षा करते हैं। ये इस बात की व्यवस्था करते हैं कि बहुसंख्यक किसी लोकतांत्रिक व्यवस्था में मनमानी न करें। अधिकार स्थितियों के बिगड़ने पर एक तरह की गारंटी जैसे हैं। अगर कुछ नागरिक दूसरों के अधिकारों को हड़पना चाहें तो स्थिति बिगड़ सकती है। यह स्थिति आम तौर पर तब आती है जब बहुमत के लोग अल्पमत में आ गए लोगों पर प्रभुत्व कायम करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में सरकार को नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए। लेकिन कई बार चुनी हुई सरकार भी अपने ही नागरिकों के अधिकारों पर हमला करती है या संभव है, वह नागरिक के अधिकारों की रक्षा न करे। इसीलिए कुछ अधिकारों को सरकार से भी ऊँचा दर्ज़ा दिए जाने की ज़रूरत है ताकि सरकार भी उनका उल्लंघन न कर सके। अधिकांश लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में नागरिकों के अधिकार संविधान में लिखित रूप में दर्ज़ होते हैं।

6.3 भारतीय संविधान में अधिकार

विश्व के अधिकांश दूसरे लोकतंत्रों की तरह भारत में भी ये अधिकार संविधान में दर्ज़ हैं। हमारे जीवन के लिए बुनियादी रूप से ज़रूरी अधिकारों को विशेष दर्ज़ा दिया गया है। इन्हें मौलिक अधिकार कहा जाता है। अध्याय 3 में हमने अपने संविधान की प्रस्तावना पढ़ी है। यह सभी नागरिकों को समानता, स्वतंत्रता और न्याय दिलाने की बात कहता है। मौलिक अधिकार इन वायदों को व्यावहारिक रूप देते हैं। ये अधिकार भारत के संविधान की एक महत्त्वपूर्ण बुनियादी विशेषता है।

आप जानते हैं कि हमारा संविधान छः मौलिक अधिकार प्रदान करता है। क्या आप इन्हें बता सकते हैं? एक आम नागरिक के लिए इन अधिकारों का ठीक-ठीक क्या मतलब होता है? आइए एक-एक करके इन पर नज़र डालें।

समानता का अधिकार

हमारा संविधान कहता है कि सरकार भारत में किसी व्यक्ति को कानून के सामने समानता या कानून से संरक्षण के मामले में समानता के अधिकार से वंचित नहीं कर सकती। इसका

मतलब यह हुआ कि किसी व्यक्ति का दर्ज़ा या पद, चाहे जो हो सब पर कानून समान रूप से लागू होता है। इसे कानून का राज भी कहते हैं। कानून का राज किसी भी लोकतंत्र की बुनियाद है। इसका अर्थ हुआ कि कोई भी व्यक्ति कानून के ऊपर नहीं है। किसी राजनेता, सरकारी अधिकारी या सामान्य नागरिक में कोई अंतर नहीं किया जा सकता।

प्रधानमंत्री हों या दूरदराज के गाँव का कोई खेतिहर मज़दूर, सब पर एक ही कानून लागू होता है। कोई भी व्यक्ति वैधानिक रूप से अपने पद या जन्म के आधार पर विशेषाधिकार या खास व्यवहार का दावा नहीं कर सकता। जैसे, कुछ साल पहले देश के एक पूर्व प्रधानमंत्री पर भी धोखाधड़ी का मुकदमा चला था। सारे मामले पर गौर करने के बाद अदालत ने उनको निर्दोष घोषित किया था। लेकिन जब तक मामला चला उन्हें किसी अन्य आम नागरिक की तरह ही अदालत में जाना पड़ा, अपने पक्ष में सबूत देने पड़े, कागज़ात दाखिल करने पड़े।

इस बुनियादी स्थिति को संविधान ने समानता के अधिकार के कुछ निहितार्थों को स्पष्ट करके और साफ़ किया है। सरकार किसी से भी उसके धर्म, जाति, समुदाय लिंग और जन्म स्थल के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकती। दुकान, होटल और सिनेमाघरों जैसे सार्वजनिक स्थल में किसी के प्रवेश को रोका नहीं जा सकता। इसी प्रकार सार्वजनिक कुएँ, तालाब, स्नान-घाट, सड़क, खेल के मैदान और सार्वजनिक भवनों के इस्तेमाल से किसी को वंचित नहीं किया जा सकता। ये चीज़ें ऊपर से बहुत सरल लगती हैं पर जाति व्यवस्था वाले हमारे समाज में कुछ समुदायों के लोगों को सार्वजनिक सुविधाओं का इस्तेमाल करने से रोका जाता है।

सरकारी नौकरियों पर भी यही सिद्धांत लागू होता है। सरकार में किसी पद पर नियुक्ति या रोज़गार के मामले में सभी नागरिकों के लिए

अवसर की समानता है। उपरोक्त आधारों पर किसी भी नागरिक को रोजगार के अयोग्य नहीं करार दिया जा सकता या उसके साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। पिछले अध्याय में आपने पढ़ा कि भारत सरकार ने नौकरियों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की है। अनेक सरकारें विभिन्न योजनाओं के तहत कुछ नौकरियों में स्त्री, गरीब या शारीरिक रूप से विकलांग लोगों को प्राथमिकता देती हैं। आप सोच सकते हैं कि आरक्षण की इस तरह की व्यवस्था समानता के अधिकार के खिलाफ़ है। पर असल में ऐसा नहीं है। समानता का मतलब है हर किसी से उसकी ज़रूरत का खयाल रखते हुए समान व्यवहार करना। समानता का मतलब है हर आदमी को उसकी क्षमता के अनुसार काम करने का समान अवसर उपलब्ध कराना है। कई बार अवसर की समानता सुनिश्चित करने भर के लिए ही कुछ लोगों को विशेष अवसर देना ज़रूरी होता है। आरक्षण यही करता है। इसी बात को साफ़ करने के लिए संविधान स्पष्ट

हर आदमी जानता है कि अमीर आदमी मुकदमे के समय अच्छे वकीलों की मदद ले सकता है। फ़िर कानून के समक्ष समानता की बात का क्या महत्त्व रह जाता है?

छुआछूत के अनेक रूप

1999 में प्रसिद्ध पत्रकार पी. साईंनाथ ने दलितों या अनुसूचित जाति के लोगों के ख़िलाफ़ अभी तक बरकरार छुआछूत के व्यवहार पर अंग्रेजी अखबार 'हिंदू' में एक लेखमाला लिखी। वे देश के अनेक स्थानों पर गए और पाया कि अनेक स्थानों पर:

- चाय की दुकानों पर दो तरह के कप रखे जाते हैं—एक दलितों के लिए, दूसरा बाकी लोगों के लिए।
- हजाम दलितों के बाल नहीं काटते, दाढ़ी नहीं बनाते।
- दलित छात्रों को कक्षा में अलग बैठना होता है और अलग रखे घड़े से पानी पीना होता है।
- दलित दूल्हों को बारात में घोड़ी पर नहीं चढ़ने दिया जाता।
- दलितों को सार्वजनिक हैंड पंप से पानी नहीं लेने दिया जाता या उनके पानी भर लेने के बाद हैंड पंप को धो दिया जाता है।

ये सभी काम छुआछूत की परिभाषा के दायरे में आते हैं। क्या आप अपने इलाके से कुछ ऐसे ही उदाहरण सोच सकते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

- **किसी भी स्कूल के खेल के मैदान या किसी स्टेडियम में जाकर 400 मीटर दौड़ वाली पट्टी को गौर से देखिए। वहाँ बाहरी लेन में दौड़ने वाले खिलाड़ी को अंदर वाली लेन के खिलाड़ी से आगे के स्थान से दौड़ शुरू करने क्यों दिया जाता है? अगर सभी दौड़ने वाले एक ही लाइन पर से दौड़ प्रारंभ करें तो क्या होगा? इन दोनों स्थितियों में से कौन-कौन सी स्थिति दौड़ के मुकाबले को समान बनाती है? नौकरियों में प्रतिद्वंद्विता के मामले में भी इसी चीज़ को लागू कीजिए।**
- **किसी भी बड़ी सार्वजनिक इमारत को गौर से देखिए। क्या वहाँ विकलांगों के आने-जाने के लिए अलग से विशेष व्यवस्था है? विकलांग लोग उस जगह का उपयोग किसी भी अन्य व्यक्ति की तरह ही कर सकें क्या इसका कोई और विशेष इंतजाम वहाँ है? ज़्यादा खर्च होने पर भी क्या ये विशेष इंतजाम किए जाने चाहिए? क्या ये विशेष इंतज़ाम समानता के सिद्धांत का उल्लंघन करते हैं?**

रूप से कहता है कि इस तरह का आरक्षण समानता के अधिकार का उल्लंघन नहीं है।

किसी तरह का भेदभाव न होने का सिद्धांत सामाजिक जीवन पर भी इसी तरह लागू होता है। संविधान सामाजिक भेदभाव के एक बहुत

ही प्रबल रूप–छुआछूत का ज़िक्र करता है और सरकार को निर्देश देता है कि वह इसे समाप्त करे। किसी भी तरह के छुआछूत को कानूनी रूप से गलत करार दिया गया है। यहाँ छुआछूत का मतलब कुछ खास जातियों के लोगों के शरीर को छूने से बचना भर नहीं है। यह उन सारी सामाजिक मान्यताओं और आचरणों को भी गलत करार देता है जिसमें किसी खास जाति में जन्म लेने भर से लोगों को नीची नज़र से देखा जाता है या उनके साथ अलग तरह का व्यवहार किया जाता है। इसीलिए संविधान ने छुआछूत को दंडनीय अपराध घोषित किया है।

स्वतंत्रता का अधिकार

स्वतंत्रता का मतलब बाधाओं का न होना है। व्यावहारिक जीवन में इसका मतलब होता है हमारे मामलों में किसी किस्म का दखल न होना–न सरकार का, न व्यक्तियों का। हम समाज में रहना चाहते हैं लेकिन हम स्वतंत्रता भी चाहते हैं। हम मनचाहे ढंग से काम करना चाहते हैं। कोई हमें यह आदेश न दे कि इसे ऐसे करो, वैसे करो। इसीलिए भारतीय संविधान ने प्रत्येक नागरिक को कई तरह की स्वतंत्रताएँ दी हैं?

- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
- शांतिपूर्ण ढंग से जमा होने की स्वतंत्रता
- संगठन और संघ बनाने की स्वतंत्रता
- देश में कहीं भी आने-जाने की स्वतंत्रता
- देश के किसी भी भाग में रहने-बसने की स्वतंत्रता है, और
- कोई भी काम करने, धंधा चुनने या पेशा करने की स्वतंत्रता

याद रखिए कि हर नागरिक को ये स्वतंत्रताएँ प्राप्त हैं। इसका मतलब यह हुआ कि आप अपनी स्वतंत्रता का ऐसा उपयोग नहीं कर सकते जिससे दूसरे की स्वतंत्रता का हनन होता हो। आपकी स्वतंत्रता सार्वजनिक पेशानी या अव्यवस्था पैदा नहीं कर सकती। आप वह सब करने के लिए आज़ाद हैं जिससे दूसरों को परेशानी न हो। स्वतंत्रता का मतलब असीमित मनमानी करने का लाइसेंस पा लेना नहीं है। इसी कारण समाज के व्यापक हितों को देखते हुए सरकार हमारी स्वतंत्रताओं पर कुछ किस्म की पाबंदियाँ लगा सकती है।

अभिव्यक्ति की आज़ादी हमारे लोकतंत्र की एक बुनियादी विशेषता है। अभिव्यक्ति की आज़ादी में बोलने, लिखने और कला के विभिन्न रूपों में स्वयं को व्यक्त करना शामिल है। दूसरों से स्वतंत्र ढंग से विचार-विमर्श और संवाद करके ही हमारे विचारों और व्यक्तित्व का विकास होता है। आपकी राय दूसरों से अलग हो सकती है। संभव है कि कई सौ लोग एक ही तरह से सोचते हों, तब भी आपको अलग राय रखने और व्यक्त करने की आज़ादी है। आप सरकार की किसी नीति से या किसी संगठन की गतिविधियों से असहमति रख सकते हैं। अपने मां-बाप, दोस्तों या रिश्तेदार से बातचीत करते हुए आप सरकार की किसी नीति या किसी संगठन की गतिविधियों की आलोचना

इरफ़ान खान

क्या गलत और संकीर्ण विचारों का प्रचार करने वालों को भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए? क्या उन्हें लोगों को भ्रमित करने की अनुमति दी जानी चाहिए?

करने को स्वतंत्र हैं। आप अपने विचारों को परचा छापकर या अखबारों-पत्रिकाओं में लेख लिखकर भी व्यक्त कर सकते हैं। आप यह काम चित्र बनाकर, कविता या गीत लिखकर भी कर सकते हैं। पर आप इस स्वतंत्रता का उपयोग करके किसी व्यक्ति या समुदाय के खिलाफ़ हिंसा को नहीं भड़का सकते। आप इस स्वतंत्रता का उपयोग करके लोगों को सरकार के खिलाफ़ बगावत के लिए नहीं उकसा सकते। आप किसी के खिलाफ़ झूठी बातें कहने या उसकी प्रतिष्ठा गिराने वाली बातें प्रचारित करने में इस स्वतंत्रता का इस्तेमाल नहीं कर सकते।

नागरिकों को किसी मुद्दे पर जमा होने, बैठक करने, प्रदर्शन करने, जुलूस निकालने का अधिकार है। वे यह सब किसी समस्या पर चर्चा करने, विचारों का आदान-प्रदान करने, किसी उद्देश्य के लिए जनमत तैयार करने या किसी चुनाव में किसी उम्मीदवार या पार्टी के लिए वोट मांगने के लिए कर सकते हैं। पर ऐसी बैठकें शांतिपूर्ण होनी चाहिए। इससे सार्वजनिक अव्यवस्था या समाज में अशांति नहीं फ़ैलनी चाहिए। इन बैठकों और गतिविधियों में भाग लेने वालों को अपने पास हथियार नहीं रखने चाहिए। नागरिकों को संगठन बनाने की भी स्वतंत्रता है। जैसे किसी कारखाने के मज़दूर अपने हितों की रक्षा के लिए मज़दूर संघ बना सकते हैं। किसी शहर के कुछ लोग भ्रष्टाचार या प्रदूषण के खिलाफ़ अभियान चलाने के लिए संगठन बना सकते हैं।

किसी भी नागरिक को **देश के किसी भी हिस्से में जाने की स्वतंत्रता है।** हम भारत के किसी भी हिस्से में रह और बस सकते हैं। जैसे असम का कोई व्यक्ति हैदराबाद में व्यवसाय करना चाहता है। संभव है कि उसने इस शहर को देखा भी न हो या यहाँ उसका कोई संपर्क न हो। फिर भी भारत का नागरिक होने के कारण उसे ऐसा करने का अधिकार है। इसी अधिकार के चलते लाखों लोग गाँवों से निकल कर शहरों में और देश के गरीब इलाकों से निकल कर समृद्ध इलाकों में आकर काम करते हैं, बस जाते हैं। पेशा चुनने के मामले में भी ऐसी ही स्वतंत्रता प्राप्त है। आपको कोई भी यह आदेश नहीं दे सकता कि आप सिर्फ़ यह काम करें या वह। महिलाओं से यह नहीं कहा जा सकता कि फलां काम उनके लिए नहीं है। पिछड़ी और कमज़ोर जातियों के लोगों से नहीं कहा जा सकता कि वे अपने परंपरागत पेशे में ही रहें।

इरफ़ान खान

संविधान कहता है कि किसी भी व्यक्ति को उसके **जीने के अधिकार और निजी स्वतंत्रता** से वंचित नहीं किया जा सकता- कानून द्वारा स्थापित व्यवस्थाओं को छोड़कर। इसका मतलब यह है कि जब तक अदालत किसी व्यक्ति को मौत की सज़ा नहीं सुनाती, उसे मारा नहीं जा सकता। इसका यह भी मतलब है कि कानूनी आधार होने पर ही सरकार या पुलिस अधिकारी किसी नागरिक को गिरफ़्तार कर सकता है। अगर वे ऐसा करते हैं तब भी उन्हें कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है।

- गिरफ़्तार या हिरासत में लिए गए व्यक्ति को उसकी गिरफ़्तारी और हिरासत में लेने के कारणों की जानकारी देनी होती है।

- गिरफ़्तार या हिरासत में लिए गए व्यक्ति को सबसे निकट के मजिस्ट्रेट के सामने गिरफ़्तारी के 24 घंटों के अंदर प्रस्तुत करना होता है।
- ऐसे व्यक्ति को वकील से विचार-विमर्श करने और अपने बचाव के लिए वकील रखने का अधिकार होता है।

आइए एक बार फिर से गुआंतानामो बे और कोसोवो को याद करें। इन दोनों ही मामलों में शिकार लोगों को सभी स्वतंत्रताओं में सबसे बुनियादी दो चीज़ों–जीवन रक्षा और निजी स्वतंत्रता–से वंचित रखा गया है।

इरफ़ान खान

क्या ये उदाहरण स्वतंत्रता के अधिकार के उल्लंघन के हैं? अगर हाँ, तो प्रत्येक में संविधान के कौन-से प्रावधान का उल्लंघन हुआ है?

- भारत सरकार ने सलमान रुश्दी की किताब 'सैटेनिक वर्सेज' को इस आधार पर प्रतिबंधित कर दिया कि इसमें पैगंबर मोहम्मद के प्रति अनादर का भाव दिखाया गया और इससे मुसलमानों की भावनाओं को ठेस पहुँच सकती है।
- हर फ़िल्म को सार्वजनिक प्रदर्शन से पूर्व भारत सरकार के सेंसर बोर्ड से प्रमाण पत्र लेना होता है। पर वही कहानी अगर किताब या पत्रिका में छपे तो उस पर ऐसी पाबंदी नहीं है।
- सरकार इस बात पर विचार कर रही है कि कुछ खास औद्योगिक क्षेत्रों या अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों में काम करने वालों को यूनियन बनाने और हड़ताल पर जाने का अधिकार नहीं होगा।
- नगर प्रशासन ने माध्यमिक परीक्षाओं के मद्देनजर शहर में रात 10 बजे के बाद सार्वजनिक लाउडस्पीकर के प्रयोग पर पाबंदी लगा दी है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

शोषण के खिलाफ़ अधिकार

स्वतंत्रता और बराबरी का अधिकार मिल जाने के बाद स्वाभाविक है कि नागरिक को यह अधिकार भी हो कि कोई उसका शोषण न कर सके। हमारे संविधान निर्माताओं ने इसे भी संविधान में लिखित रूप से दर्ज़ करने का फ़ैसला किया ताकि कमज़ोर वर्गों का शोषण न हो सके।

संविधान ने खास तौर से तीन बुराइयों का जिक्र किया है और इन्हें गैर-कानूनी घोषित किया है।

पहला, संविधान मनुष्य जाति के अवैध व्यापार का निषेध करता है। आम तौर पर ऐसे धंधे का शिकार महिलाएँ होती हैं जिनका अनैतिक कामों के लिए शोषण होता है। दूसरा, हमारा संविधान किसी किस्म के 'बेगार' या जबरन काम लेने का निषेध करता है। बेगार प्रथा में मज़दूरों को अपने मालिक के लिए मुफ़्त या बहुत थोड़े से अनाज वगैरह के लिए जबरन काम करना पड़ता है। जब यही काम मज़दूर को जीवन भर करना पड़ जाता है तो उसे बंधुआ मज़दूरी कहते हैं। तीसरा, संविधान बाल मज़दूरी का भी निषेध

करता है। किसी कारखाने-खदान या रेलवे और बंदरगाह जैसे खतरनाक काम में कोई भी 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चे से काम नहीं करा सकता। इसी को आधार बनाकर बाल मज़दूरी रोकने के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं। इसमें बीड़ी बनाने, पटाखे बनाने, दियासलाई बनाने, प्रिंटिंग और रंगरोगन जैसे कामों में बाल मज़दूरी रोकने के कानून शामिल हैं।

खुद करें, खुद सीखें

क्या आपको अपने प्रदेश में लागू न्यूनतम मज़दूरी का पता है? अगर नहीं तो क्या आप यह पता कर सकते हैं? अपने मुहल्ले में अलग-अलग काम करने वालों से बात करके यह जानने की कोशिश कीजिए कि क्या उनको न्यूनतम मज़दूरी मिल रही है। उनसे पूछिए कि क्या उनको न्यूनतम मज़दूरी का पता है? उनसे यह भी पूछिए कि उसी काम के लिए क्या मर्द और औरत को समान मज़दूरी मिलती है?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इन खबरों के आधार पर संपादक के नाम एक लंबा पत्र या शोषण के खिलाफ़ अधिकार के उल्लंघन की बात उजागर करते हुए अदालत के लिए अर्ज़ी लिखिए:

मद्रास हाईकोर्ट में एक अर्ज़ी दायर की गई। अर्ज़ी दायर करने वाले ने कहा कि सालेम जिले के गाँवों के 7 से 12 वर्ष उम्र के अनेक बच्चों को ले जाकर केरल के त्रिचूर जिले के ओलुर में बेचा गया है। आवेदनकर्ता ने अदालत से माँग की कि वह सरकार को इस मामले से जुड़े तथ्यों की जांच कराने का आदेश दे।
(मार्च 25)

कर्नाटक के होमपेट, मांडुर और इकाल इलाके में लौह अयस्क खदानों में पाँच वर्ष और उससे अधिक उम्र के बच्चों से काम कराया जा रहा है। बच्चों से खुदाई, अयस्क तोड़ने, लादने, गिराने, ढुलाई और कटाई का काम लिया जा रहा है। उनको न तो सुरक्षा के उपकरण दिए जाते हैं न तय मजदूरी और ना ही उनके काम का समय तय है। वे बहुत ही ज़हरीले कचरे को ढोते हैं और खदान की धूल, जो मानक स्तर से काफ़ी अधिक है, भी उनके आँख, नाक, कान में जाती रहती है। इस इलाके में स्कूल की पढ़ाई बीच में छोड़ने की दर काफ़ी ऊँची है।
(मई 25)

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के नवीनतम वार्षिक सर्वेक्षण में पाया गया कि ग्रामीण और शहरी, दोनों क्षेत्रों में लड़कियों से काम कराने का क्रम बढ़ता जा रहा है और अब, ज़्यादा बच्चियों से काम कराया जा रहा है। सर्वेक्षण में यह बात सामने आई कि पहले जहाँ प्रति हजार कामगारों में बच्चियों की संख्या 34 थी वहीं अब 41 हो गयी है। लड़कों की संख्या का अनुपात 31 बना हुआ है।
(अप्रैल 25)

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

स्वतंत्रता के अधिकार में धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार भी शामिल है और इस मामले में भी हमारे संविधान निर्माता खास तौर से चौकस थे। उन्होंने इस स्वतंत्रता को स्पष्ट रूप से अलग दर्ज़ किया। आप अध्याय 2 में पढ़ चुके हैं कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। विश्व के अन्य देशों के समान भारत के अधिकांश लोग अलग-अलग धर्म को मानते हैं। कुछ लोग किसी भी धर्म को नहीं मानते। धर्मनिरपेक्षता इस सोच पर आधारित है कि शासन का काम व्यक्तियों के बीच के मामलों को ही देखना है, व्यक्ति और ईश्वर के बीच के मामलों को नहीं। धर्मनिरपेक्ष शासन वह है जहाँ किसी भी धर्म को आधिकारिक धर्म की मान्यता नहीं होती। भारतीय धर्मनिरपेक्षता में सभी धर्मों के प्रति शासन का समभाव रखना शामिल है। धर्म के मामले में शासन को सभी धर्मों से उदासीन और निरपेक्ष होना चाहिए।

हर किसी को **अपना धर्म मानने, उस पर आचरण करने और उसका प्रचार करने का अधिकार है।** हर धार्मिक समूह या पंथ को अपने धार्मिक कामकाज का प्रबंधन करने की आज़ादी है। पर अपने धर्म का प्रचार करने के

अधिकार का मतलब किसी को झाँसा देकर, फ़रेब करके, लालच देकर उससे धर्म परिवर्तन कराना नहीं है। निस्संदेह व्यक्ति को अपनी इच्छा से धर्म परिवर्तन करने की आज़ादी है। अपना धर्म मानने और उसके अनुसार आचरण का यह अर्थ भी नहीं है कि व्यक्ति अपने मन के अनुसार जो चाहे सो करे। जैसे, कोई आदमी देवता या कथित अदृश्य शक्तियों को संतुष्ट करने के लिए नर बलि या पशु बलि नहीं दे सकता। औरतों को कमतर मानने या औरतों की आज़ादी का हनन करने वाले धार्मिक रीति-रिवाजों पर आचरण करने की अनुमति नहीं है। जैसे, कोई ज़बर्दस्ती किसी विधवा का मुंडन नहीं करा सकता या उसे सिर्फ़ सफ़ेद कपड़े पहनने के लिए मज़बूर नहीं कर सकता।

धर्मनिरपेक्ष शासन का मतलब किसी एक धर्म का पक्ष लेना या उसे विशेषाधिकार देना भी नहीं है। ना ही ऐसा शासन किसी व्यक्ति को उसकी धार्मिक मान्यताओं के कारण सजा दे सकता है या उसके साथ भेदभाव कर सकता है। इसी प्रकार सरकार किसी धर्म या धार्मिक संस्था को बढ़ावा देने या उसके रख-रखाव के लिए कर देने के लिए किसी व्यक्ति को मज़बूर नहीं कर सकती। सरकारी शैक्षिक संस्थानों में किसी किस्म का धार्मिक निर्देश नहीं होना चाहिए। अगर किसी शैक्षिक संस्थान का संचालन कोई निजी संस्था करती है तो वहाँ के किसी भी व्यक्ति को प्रार्थना में हिस्सा लेने या किसी धार्मिक निर्देश का पालन करने के लिए मज़बूर नहीं किया जा सकता।

सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार

आप हैरान हो सकते हैं कि हमारे संविधान निर्माता अल्पसंख्यकों के अधिकारों की लिखित गारंटी को लेकर इतने सचेत क्यों थे। बहुसंख्यकों के लिए ऐसी कोई गारंटी क्यों नहीं है? इसका सीधा सा कारण यह है कि लोकतंत्र की कार्यपद्धति अपने आप बहुसंख्यकों को ज़्यादा ताकत दे देती है। अल्पसंख्यकों को ही भाषा, संस्कृति और धर्म के विशेष संरक्षण की ज़रूरत होती है। अन्यथा वे बहुसंख्यकों की भाषा, धर्म और संस्कृति के प्रभाव में पिछड़ते चले जाएँगे। इसी के चलते संविधान अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकारों को स्पष्ट करता है:

- नागरिकों में विशिष्ट भाषा या संस्कृति वाले किसी भी समूह को अपनी भाषा और संस्कृति को बचाने का अधिकार है।
- किसी भी सरकारी या सरकारी अनुदान पाने वाले शैक्षिक संस्थान में किसी नागरिक को धर्म या भाषा के आधार पर दाखिला लेने से नहीं रोका जा सकता।
- सभी अल्पसंख्यकों को अपनी पसंद का शैक्षिक संस्थान स्थापित करने और चलाने का अधिकार है।

यहाँ अल्पसंख्यक का अर्थ राष्ट्रीय स्तर पर धार्मिक अल्पसंख्यक भर नहीं है। किसी स्थान पर एक खास भाषा को बोलने वालों का बहुमत होगा। वहाँ अलग भाषा बोलने वाले अल्पसंख्यक होंगे। जैसे आंध्र प्रदेश में तेलुगु बोलने वालों का बहुमत है, पर कर्नाटक में वे अल्पसंख्यक हैं। पंजाब में सिख बहुसंख्यक हैं, पर राजस्थान, हरियाणा और दिल्ली में वे अल्पसंख्यक हैं।

हमें ये अधिकार कैसे मिल सकते हैं ?

यद्यपि अधिकार गारंटी की तरह हैं तब भी ये हमारे किसी काम के नहीं हैं, अगर इन गारंटियों

संविधान लोगों का धर्म नहीं तय करता। पर लोगों को अपने धार्मिक कामकाज करने का अधिकार इसे क्यों देना पड़ा?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इन ख़बरों को पढ़िए और प्रत्येक में जिस अधिकार की चर्चा है, उसकी पहचान कीजिए।

- शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की आपात् बैठक में हरियाणा के सिख धार्मिक स्थलों के प्रबंधन के लिए अलग संगठन बनाने के प्रस्ताव को ठुकरा दिया गया। सरकार को यह चेतावनी दी गई कि सिख समुदाय अपने धार्मिक मामलों में किसी भी किस्म की दख़लंदाजी बरदाश्त नहीं करेगा। (जून 2005)
- इलाहाबाद हाईकोर्ट ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को अल्पसंख्यक दर्जा देने वाले केंद्रीय कानून को रद्द कर दिया और मेडिकल स्नातकोत्तर डिग्री कोर्स में सीटों के आरक्षण को गैर-कानूनी करार दिया। (जनवरी 2005)
- राजस्थान सरकार ने धर्म परिवर्तन विरोधी कानून बनाने का फ़ैसला किया है। ईसाई नेताओं का कहना है कि इस विधेयक से अल्पसंख्यकों में डर और असुरक्षा की भावना बढ़ेगी। (मार्च 2005)

को मानने और लागू करने वाला न हो। संविधान में दिए गए मौलिक अधिकार महत्त्वपूर्ण हैं। इसीलिए इन्हें लागू किया जा सकता है। हमें उपर्युक्त अधिकारों को लागू कराने की माँग करने का अधिकार है, हमारे पास उन्हें लागू कराने के उपाय हैं। इसे **संवैधानिक उपचार का अधिकार** कहा जाता है। यह भी एक मौलिक अधिकार है। यह अधिकार अन्य अधिकारों को प्रभावी बनाता है। संभव है कि कई बार हमारे अधिकारों का उल्लंघन कोई और नागरिक या कोई संस्था या फिर स्वयं सरकार ही कर रही हो। पर जब इनमें से हमारे किसी भी अधिकार का उल्लंघन हो रहा हो तो हम अदालत के ज़रिए उसे रोक सकते हैं, इस समस्या का निदान पा सकते हैं। अगर मौलिक अधिकारों का मामला हो तो हम सीधे सर्वोच्च न्यायालय या किसी राज्य के उच्च न्यायालय में जा सकते हैं। इसी कारण डॉ. अंबेडकर ने संवैधानिक उपचार के अधिकार को हमारे संविधान की 'आत्मा और हृदय' कहा था।

क्या आपको अपने मौलिक अधिकारों के लिए सर्वोच्च न्यायालय जाने से राष्ट्रपति भी रोक सकते हैं?

मौलिक अधिकार विधायिका, कार्यपालिका और सरकार द्वारा गठित किसी भी अन्य प्राधिकारी की गतिविधियों तथा फ़ैसलों से ऊपर हैं। मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने वाला कोई कानून नहीं बन सकता, कोई फ़ैसला नहीं लिया जा सकता। विधायिका या कार्यपालिका के किसी भी फ़ैसले या काम से मौलिक अधिकारों का हनन हो या उनमें कमी हो तो वह फ़ैसला या काम ही अवैध हो जाएगा। हम केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा बनाए गए ऐसे कानूनों को, उनकी नीतियों और फ़ैसलों को या राष्ट्रीयकृत बैंक या बिजली बोर्ड जैसी उनके द्वारा गठित संस्थाओं की नीतियों और फ़ैसलों को चुनौती दे सकते हैं। वे भी व्यक्तियों या निजी संस्थाओं के खिलाफ़ मौलिक अधिकार के मामले में दखल दे सकती हैं। सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालयों को मौलिक अधिकार लागू कराने के मामले में निर्देश देने, आदेश या रिट जारी करने का अधिकार है। अदालतें गड़बड़ी का शिकार होने वालों को हर्जाना दिलवा सकती हैं और गड़बड़ी करने वालों को दंडित कर सकती हैं। अध्याय 4 में हमने देखा है कि हमारे देश की न्यायपालिका सरकार और संसद से स्वतंत्र है। हमने यह भी देखा है कि न्यायपालिका बहुत शक्तिशाली है और नागरिकों के अधिकारों के लिए जो कुछ ज़रूरी हो, वह करने में सक्षम है।

मौलिक अधिकारों के हनन के मामले में कोई भी पीड़ित व्यक्ति न्याय पाने के लिए तुरंत अदालत में जा सकता है। पर अब, अगर मामला सामाजिक या सार्वजनिक हित का हो तो ऐसे मामलों में मौलिक अधिकारों के उल्लंघन को

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

क्या आपने ऊपर बने 'न्यूज़ कोलाज' पर ध्यान दिया। इसमें राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का जिक्र आया है। यह संदर्भ मानवाधिकार के प्रति बढ़ती जागरूकता और मानव गरिमा के संघर्षों के बारे में है। विभिन्न क्षेत्रों में मानवाधिकार उल्लंघनों के गुजरात दंगे जैसे कई मामले हैं। इनके बारे में देश भर से लोगों का ध्यान आकृष्ट किया जा रहा है। इन मामलों को गम्भीरता से नहीं लेने और उनके दोषियों को नहीं पकड़ पाने के लिए मानवाधिकार संगठन तथा संचार माध्यम अक्सर सरकारी ऐजेन्सियों की आलोचना करते हैं।

ऐसे में पीड़ितों की तरफ़ से किसी को दख़ल देने की आवश्यकता थी और राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने इस मामले में पहल की। यह 1993 में कानून के द्वारा बनाया गया एक स्वतंत्र आयोग है। न्यायपालिका की तरह आयोग भी सरकार से स्वतंत्र होते हैं। आयोग की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं और इसमें आमतौर पर सेवानिवृत्त जज, अधिकारी या प्रमुख नागरिकों को ही नियुक्त किया जाता है। किंतु इस पर अदालती मामलों में फ़ैसले देने का दायित्व या बोझ नहीं होता। सो यह पीड़ितों को उनके मानवाधिकार दिलाने में मदद करने पर ही सारा ध्यान दे सकता है। इनमें संविधान प्रदत्त अधिकार भी शामिल हैं। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के लिए अधिकारों की परिभाषा में संयुक्त राष्ट्र द्वारा कराई गई वे संधियाँ और अंतर्राष्ट्रीय घोषणाएँ भी शामिल हैं जिन पर भारत ने दस्तख़त किए हैं।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ख़ुद किसी को सज़ा नहीं दे सकता। यह ज़िम्मेवारी अदालतों की है। आयोग का काम मानवाधिकार के उल्लंघन के किसी मामले में स्वतंत्र और विश्वसनीय जाँच करना है। यह उन मामलों की भी जाँच करता है जहाँ ऐसे उल्लंघन में या इन्हें रोकने में सरकारी अधिकारियों पर उपेक्षा बरतने का आरोप हो। यह देश में मानवाधिकारों को बढ़ाने और उनके प्रति चेतना जगाने का काम भी करता है। आयोग अपनी जाँच की रिपोर्ट और अपने सुझाव सरकार को देता है या पीड़ितों की ओर से अदालत में दख़ल देता है। अपनी जाँच करने के सिलसिले में इसके पास व्यापक अधिकार हैं। किसी भी अदालत की तरह यह चश्मदीद गवाहों को सम्मन भेजकर बुला सकता है, किसी सरकारी अधिकारी से पूछताछ कर सकता है, किसी सरकारी दस्तावेज़ की माँग कर सकता है, किसी जेल में जाकर जाँच कर सकता है या घटनास्थल पर अपनी जाँच टीम भेज सकता है।

भारत का कोई भी नागरिक मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले में इसके पास निम्नलिखित पते पर शिकायत भेज सकता है: **राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग,** जी.पी.ओ. कम्प्लेक्स, आई.एन.ए., नई दिल्ली-110023 आयोग के पास अर्जी भेजने की न तो कोई फ़ीस है, न फ़ार्म और न ही कोई तय तरीका। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की तरह ही 26 राज्यों (10 दिसंबर 2018 की स्थिति) में **राज्य मानव अधिकार आयोग** हैं। अधिक जानकारी के लिए, देखें www.nhrc.nic.in

लेकर कोई भी व्यक्ति अदालत में जा सकता है। ऐसे मामलों को 'जनहित याचिका' के माध्यम से उठाया जाता है।

इसमें कोई भी व्यक्ति या समूह सरकार के किसी कानून या काम के खिलाफ़ सार्वजनिक हितों की रक्षा के लिए सर्वोच्च न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय में जा सकता है। ऐसे मामले जज के नाम पोस्टकार्ड पर लिखी अर्जी के माध्यम से भी उठाए जा सकते हैं। अगर न्यायाधीशों को लगे कि सचमुच इस मामले में सार्वजनिक हितों पर चोट पहुँच रही है तो वे मामले को विचार के लिए स्वीकार कर सकते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

क्या आपके राज्य में मानवाधिकार आयोग है? इसकी गतिविधियों के बारे में जानकारियाँ इकट्ठी कीजिए।

इस अध्याय में आए मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों या आपको ज्ञात किसी भी ऐसे मामले को लेकर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को एक आवेदन लिखें।

5.4 अधिकारों का बढ़ता दायरा

हमने इस अध्याय की शुरुआत अधिकारों के महत्त्व पर चर्चा से की थी। पर अध्याय के ज्यादातर हिस्से में हमारा ध्यान संविधान द्वारा दिए गये मौलिक अधिकारों पर ही रहा। आप सोच सकते हैं कि संविधान द्वारा दिए गए मौलिक अधिकार ही नागरिकों को मिलने वाले अधिकार हैं। यह सही नहीं है। मौलिक अधिकार बाकी सारे अधिकारों के स्रोत हैं। हमारा संविधान और हमारे कानून हमें और बहुत सारे अधिकार देते हैं और साल दर साल अधिकारों का दायरा बढ़ता गया है।

समय-समय पर अदालतों ने ऐसे फ़ैसले दिए हैं जिनसे अधिकारों का दायरा बढ़ा है। प्रेस की स्वतंत्रता का अधिकार, सूचना का अधिकार और शिक्षा का अधिकार जैसी चीजें मौलिक अधिकारों का ही विस्तार हैं, उन्हीं से निकली हैं। अब स्कूली शिक्षा हर भारतीय का अधिकार बन चुकी है। 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा दिलाना सरकार की ज़िम्मेदारी है। संसद ने नागरिकों को सूचना का अधिकार देने वाला कानून भी पास कर दिया है। यह अधिकार विचारों और अभिव्यक्ति की आज़ादी के मौलिक अधिकार के तहत ही है। हमें सरकारी दफ़्तरों से सूचना माँगने और पाने का अधिकार है। हाल में ही सर्वोच्च न्यायालय ने जीवन के अधिकार को नया विस्तार देते हुए उसमें भोजन के अधिकार को भी शामिल कर दिया है। साथ ही, अधिकारों का दायरा संविधान द्वारा दिए गए मौलिक अधिकारों तक ही सीमित नहीं है। संविधान अनेक दूसरे अधिकार भी देता है जो मौलिक अधिकार नहीं हैं। जैसे संपत्ति रखने का अधिकार मौलिक अधिकार नहीं है पर संवैधानिक अधिकार है। चुनाव में वोट देने का अधिकार एक महत्वपूर्ण संवैधानिक अधिकार है।

कई बार मानवाधिकारों का भी विस्तार होता है। ये असल में सर्वमान्य नैतिक दावे हैं जो कानून द्वारा मान्य हो भी सकते हैं और नहीं भी और इन्हें उस अर्थ में अधिकार नहीं कहा जा सकता जैसा कि हमने पहले परिभाषा के माध्यम से बताया था। दुनिया में लोकतंत्र के फ़ैलाव के साथ सरकारों पर दबाव बढ़ता जा रहा है कि वे इन सर्वमान्य नैतिक दावों को मानें, उन्हें कानूनी रूप दें। कई अंतर्राष्ट्रीय संधियों और प्रतिज्ञा पत्रों ने भी अधिकारों का दायरा बढ़ाने में मदद की है।

जरा सोचिएः क्या ये अधिकार सिर्फ़ वयस्क लोगों के हैं? बच्चों के लिए कौन-कौन से अधिकार हैं?

इस प्रकार हम देखते हैं कि अधिकारों का दायरा बढ़ता जा रहा है और हर समय नए अधिकार सामने आ रहे हैं। ये लोगों के संघर्षों से हासिल हुए हैं। समाज के विकास या नए संविधानों के निर्माण के साथ नए अधिकार सामने आते हैं। संविधान बनाने संबंधी अध्याय में हमने देखा है कि दक्षिण अफ्रीका के संविधान में नागरिकों को कई तरह के नए अधिकार मिले हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

- निजता का अधिकार: इसके कारण नागरिकों और उनके घरों की तलाशी नहीं ली जा सकती, उनके फ़ोन टैप नहीं किए जा सकते, उनकी चिट्ठी-पत्री को खोलकर पढ़ा नहीं जा सकता।
- पर्यावरण का अधिकार: ऐसा पर्यावरण पाने का अधिकार जो नागरिकों के स्वास्थ्य या कुशलक्षेम के प्रतिकूल न हो।
- पर्याप्त आवास पाने का अधिकार।
- स्वास्थ्य सेवाओं, पर्याप्त भोजन और पानी तक पहुँच का अधिकार; किसी को भी आपात् चिकित्सा देने से इंकार नहीं किया जा सकता।

अनेक लोगों का मानना है कि काम का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, जीने के लिए ज़रूरी न्यूनतम आवश्यकताओं का अधिकार और निजता के अधिकार को भारत में भी मौलिक अधिकार बना देना चाहिए? आप इसके बारे में क्या सोचते हैं?

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय प्रतिज्ञा पत्र

इस अंतर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञापत्र में अनेक ऐसे अधिकारों को मान्यता दी गई है जो भारतीय संविधान के मौलिक अधिकारों से सीधे नहीं जुड़े हैं। इसने अभी अंतर्राष्ट्रीय संधि का रूप नहीं लिया है। लेकिन दुनिया भर के मानवाधिकार कार्यकर्त्ता इसे एक मानक मानवाधिकार के रूप में देखते हैं। इनमें शामिल हैं:

- काम करने का अधिकार: हर किसी को काम करने, अपनी जीविका का उपार्जन करने का अवसर।
- काम करने के सुरक्षित और स्वास्थ्यप्रद माहौल का अधिकार तथा मज़दूरों और उनके परिवारों के लिए सम्मानजनक जीवनस्तर लायक उचित मज़दूरी का अधिकार।
- समुचित जीवन स्तर जीने के अधिकार में पर्याप्त भोजन, कपड़ा और मकान का अधिकार शामिल है।
- सामाजिक सुरक्षा और बीमा का अधिकार।
- स्वास्थ्य का अधिकार: बीमारी के समय इलाज, प्रजनन काल में महिलाओं का खास ख्याल और महामारियों से रोकथाम।
- शिक्षा का अधिकार: मुफ्त एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, उच्चतर शिक्षा तक समान पहुँच।

प्रतिज्ञा पत्र: नियमों और सिद्धांतों को कायम रखने का व्यक्ति, समूह या देशों का वायदा। ऐसे बयान या संधि पर दस्तखत करने वाले पर इसके पालन की कानूनी बाध्यता होती है।
दावा: सभी नागरिकों, समाज या सरकार से किसी नागरिक द्वारा कानूनी या नैतिक अधिकारों की माँग।
दलित: ऐसी जाति में जन्मा व्यक्ति जिसे दूसरी जातियों के व्यक्ति छूने लायक नहीं मानते। दलितों के लिए अनुसूचित जाति, कमज़ोर वर्ग जैसे शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है।
जातीय समूह: मानव जाति का ऐसा समूह जिसमें लोग आपस में एक मूल या सम्यक वंश के हों। एक जातीय समूह के लोग सांस्कृतिक आचरणों, धार्मिक विश्वासों और ऐतिहासिक स्मृतियों के ज़रिए जुड़े होते हैं।
सम्मन: अदालत द्वारा ज़ारी एक आदेश जिसमें किसी व्यक्ति को अदालत के सामने पेश होने के लिए कहा गया हो।
अवैध व्यापार: अनैतिक कामों के लिए स्त्री, पुरुष या बच्चों की खरीद-बिक्री।

रिट : उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सरकार को जारी किया गया एक औपचारिक लिखित आदेश।

एमनेस्टी इंटरनेशनल: मानवाधिकारों के लिए काम करने वाले कार्यकर्ताओं का एक अंतरराष्ट्रीय संगठन। यह संगठन दुनिया भर में मानवाधिकारों के उल्लंघन पर स्वतंत्र रिपोर्ट जारी करता है।

प्रश्नावली

1. इनमें से कौन-सा मौलिक अधिकारों के उपयोग का उदाहरण नहीं है?
   - क. बिहार के मजदूरों का पंजाब के खेतों में काम करने जाना।
   - ख. ईसाई मिशनों द्वारा मिशनरी स्कूलों की शृंखला चलाना।
   - ग. सरकारी नौकरी में औरत और मर्द को समान वेतन मिलना।
   - घ. बच्चों द्वारा मां-बाप की संपत्ति विरासत में पाना।

2. इनमें से कौन-सी स्वतंत्रता भारतीय नागरिकों को नहीं है?
   - क. सरकार की आलोचना की स्वतंत्रता
   - ख. सशस्त्र विद्रोह में भाग लेने की स्वतंत्रता
   - ग. सरकार बदलने के लिए आंदोलन शुरू करने की स्वतंत्रता
   - घ. संविधान के केंद्रीय मूल्यों का विरोध करने की स्वतंत्रता

3. भारतीय संविधान इनमें से कौन-सा अधिकार देता है?
   - क. काम का अधिकार
   - ख. पर्याप्त जीविका का अधिकार
   - ग. अपनी संस्कृति की रक्षा का अधिकार
   - घ. निजता का अधिकार

4. उस मौलिक अधिकार का नाम बताएँ जिसके तहत निम्नलिखित स्वतंत्रताएँ आती हैं?
   - क. अपने धर्म का प्रचार करने की स्वतंत्रता
   - ख. जीवन का अधिकार
   - ग. छुआछूत की समाप्ति
   - घ. बेगार पर प्रतिबंध

5. लोकतंत्र और अधिकारों के बीच संबंधों के बारे में इनमें से कौन-सा बयान ज़्यादा उचित है? अपनी पसंद के पक्ष में कारण बताएँ?
   - क. हर लोकतांत्रिक देश अपने नागरिकों को अधिकार देता है।
   - ख. अपने नागरिकों को अधिकार देने वाला हर देश लोकतांत्रिक है।
   - ग. अधिकार देना अच्छा है, पर यह लोकतंत्र के लिए ज़रूरी नहीं है।

6. स्वतंत्रता के अधिकार पर ये पाबंदियाँ क्या उचित हैं? अपने जवाब के पक्ष में कारण बताएँ।
   - क. भारतीय नागरिकों को सुरक्षा कारणों से कुछ सीमावर्ती इलाकों में जाने के लिए अनुमति लेनी पड़ती है।
   - ख. स्थानीय लोगों के हितों की रक्षा के लिए कुछ इलाकों में बाहरी लोगों को संपत्ति खरीदने की अनुमति नहीं है।
   - ग. शासक दल को अगले चुनाव में नुकसान पहुँचा सकने वाली किताब पर सरकार प्रतिबंध लगाती है।

7. मनोज एक सरकारी दफ़्तर में मैनेजर के पद के लिए आवेदन देने गया। वहाँ के किरानी ने उसका आवेदन लेने से मना कर दिया और कहा, 'झाड़ू लगाने वाले का बेटा होकर तुम मैनेजर बनना चाहते हो। तुम्हारी जाति का कोई कभी इस पद पर आया है? नगरपालिका के दफ़्तर जाओ और सफ़ाई कर्मचारी के लिए अर्जी दो।' इस मामले में मनोज के किस मौलिक अधिकार का उल्लंघन हो रहा है? मनोज की तरफ़ से जिला अधिकारी के नाम लिखे एक पत्र में इसका उल्लेख करो।

8. जब मधुरिमा संपत्ति के पंजीकरण वाले दफ़्तर में गई तो रजिस्ट्रार ने कहा, ''आप अपना नाम मधुरिमा बनर्जी, बेटी ए.के. बनर्जी नहीं लिख सकतीं। आप शादीशुदा हैं और आपको अपने पति का ही नाम देना होगा। फ़िर आपके पति का उपनाम तो राव है। इसलिए आपका नाम भी बदलकर मधुरिमा राव हो जाना चाहिए।'' मधुरिमा इस बात से सहमत नहीं हुई। उसने कहा, ''अगर शादी के बाद मेरे पति का नाम नहीं बदला तो मेरा नाम क्यों बदलना चाहिए? अगर वह अपने नाम के साथ पिता का नाम लिखते रह सकते हैं तो मैं क्यों नहीं लिख सकती?'' आपकी राय में इस विवाद में किसका पक्ष सही है? और क्यों?

9. मध्य प्रदेश के होशंगाबाद ज़िले के पिपरिया में हज़ारों आदिवासी और जंगल में रहने वाले लोग सतपुड़ा राष्ट्रीय पार्क, बोरी वन्यजीव अभ्यारण्य और पंचमढ़ी वन्यजीव अभ्यारण्य से अपने प्रस्तावित विस्थापन का विरोध करने के लिए जमा हुए। उनका कहना था कि यह विस्थापन उनकी जीविका और उनके विश्वासों पर हमला है। सरकार का दावा है कि इलाके के विकास और वन्य जीवों के संरक्षण के लिए उनका विस्थापन ज़रूरी है। जंगल पर आधारित जीवन जीने वाले की तरफ़ से राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को एक पत्र, इस मसले पर सरकार द्वारा दिया जा सकने वाला संभावित जवाब और इस मामले पर मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट तैयार करो।

1`. इस अध्याय में पढ़े विभिन्न अधिकारों को आपस में जोड़ने वाला एक मकड़जाल बनाएँ। जैसे आने-जाने की स्वतंत्रता का अधिकार तथा पेशा चुनने की स्वतंत्रता का अधिकार आपस में एक-दूसरे से जुड़े हैं। इसका एक कारण है कि आने-जाने की स्वतंत्रता के चलते व्यक्ति अपने गाँव या शहर के अंदर ही नहीं, दूसरे गाँव, दूसरे शहर और दूसरे राज्य तक जाकर काम कर सकता है। इसी प्रकार इस अधिकार को तीर्थाटन से जोड़ा जा सकता है जो किसी व्यक्ति द्वारा अपने धर्म का अनुसरण करने की आज़ादी से जुड़ा है। आप इस मकड़जाल को बनाएँ और तीर के निशानों से बताएँ कि कौन-से अधिकार आपस में जुड़े हैं। हर तीर के साथ संबंध बताने वाला एक उदाहरण भी दें।

प्रश्नावली

अभी तक के सभी अध्यायों में हमने अखबार पढ़ने वाला अभ्यास रखा है। आइए, अब अखबारों के लिए लिखने का प्रयास करें। इस अध्याय में आई रिपोर्टों या अपने आसपास के उदाहरणों के आधार पर इन कुछ चीजों को लिखने का प्रयास करें:

- मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले पर संपादक के नाम पत्र।
- मानवाधिकार संगठन की तरफ़ से एक प्रेस विज्ञप्ति।
- मौलिक अधिकार संबंधी सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले से जुड़े समाचार और उनका शीर्षक।
- पुलिस हिरासत में मौत की बढ़ती घटनाओं पर संपादकीय टिप्पणी।

इन सबको मिलाकर अपने स्कूल के नोटिस बोर्ड के लिए एक अखबार तैयार करें।